पाप

के० कुमारेन्द्र

यंग पब्लिशिंग हाउस दिल्ली—६

प्रकाशक

यंग पब्लिशिंग हाऊस,

६१७, छत्ता मदनगोपाल दिल्ली—६

मूल्य—तीन रुपये पचहत्तर नए पैसे

मुद्रक

शक्ला प्रिंटिंग एजन्सी द्वारा

हीरा प्रेस दिल्ली

कण्डक्टर ने एक बार होर्न बजाया और बस स्टार्ट करने की सीटी देदी। कुमार दुकान पर बैठा था। 'भर्र-भर्र' की ध्वनि सुनी तो बस की ओर भागा। पांव बस पर रखा-ही था कि एक यात्री ने केले का छिलका फेंक दिया। कुमार के मुँह को चूमता छिलका तो जमीन पर जा गिरा किन्तु यात्री की सकुच अभ्यर्थना क्षमा मांग बैठी· "सो सोरी" उन्होंने कहा · "बैठिये बैठिये।" और अपनी सीट पर स्थान का अभाव होने पर भी एक ओर को खिसक गए।

कोई बात नहीं, "कुमार ने मुस्करान भरा प्रत्युत्तर दिया," मेरी सीट पहले से घिरी है।"

यात्री चुप हो गया और कुमार अपनी सीट पर बैठ गया मोटर की गति तीव्र होने लगी थी। कुमार ने देखा इस समय वह कस्बे से बाहर चुंगी के सामने जा रही थी।

"कहां जाएंगे आप ?" यात्री ने कुछ संशक स्वर में अपनी बात दोहराई।

'जी। मैं मैं रामगढ़ जाऊँगा," कुमार ने उनकी ओर देखते हुए कहा · 'मैं बाहर देख रहा था।"

"रामगढ़ !" वे महाशय प्रसन्नता से बड़बड़ा उठे · "किसके यहां ?"

"रामेश्वर जी के···"

"अच्छा !" क्या नाम है आपका ? सस्मय प्रसन्ता उनके मुख पर छलक पड़ी

"रामकुमार ! और आपका ?"

"मेरा नाम सुरेशचन्द्र है भय्या, तुम मुझे नही जानते, किन्तु मैं जानता हूं ।"

"जी हां, मैं तो आपको नहीं जानता, किन्तु "

"सोम मेरी भानजी है, अभी हमारे गांव आई थी, बड़ा जिक्र करती थी आपका ।" कुमार के 'किन्तु' का समाधान सुरेश जी ने किया ।

"ओह । क्या कहती है वह ?"

"कहती थी मेरे भाई साहब बहुत अच्छे आदमी हैं । हमारे गांव में—"

"बस कीजिए," कुमार मुस्करा उठा · बावली है, वह और कोई बात ही नहीं जानती ।

'ऐसी बात तो नहीं, सिखा तो आपने उसे बहुत रखा है । लेकिन हाँ, एक वर्ष से आपसे न मिलने के कारण दुखी बहुत है ।'

"क्यों ?"

"कहती थी भाई साहब जब से गाँव से गए हैं मैं अपनी कक्षा में कमजोर हो गई हूं ।" उनके बिना और किसी से तो मुझसे पढ़ा ही नहीं जाता ।

"ऐसा ? कुमार खिलखिला कर हंस पड़ा इतना चढ़ा रखा है उसने मुझे ।"

"वह ही नहीं कहती थी—अन्य लड़कियों की भी यही धारणा है···मैं तो बहुत उत्सुक था तुमसे मिलने को ।"

"तब तो बड़ी अच्छी घड़ी है"

"इसमें क्या शक है ।"

इसके बाद दोनों चुप हो गये । कुमार फिर बाहर की ओर देखने लगा ।

शीशम और आम के पेडों के साथ भागती सी बस चली जा रही थी। हरे-भरे खेत, चहचहाते पक्षी और बेजार भूमि कुछ देर उसके साथ भागते और फिर पीछे रह जाते। कुमार दृष्टि घुमा कर पीछे की ओर देखता तो लगता जैसे लज्जा से अपना मुंह छिपा पीछे की ओर अब वे भाग रहे हों। हंसी ओठों पर आती और वह फिर आगे की ओर देखने लगता।

बस की गति धीमी हो गई। स्कूल के बच्चे पढ कर लौट रहे थे। दो-तीन साथ-साथ भाग लिये। निकट ही 'स्टोपेज' था। बस वहा पहुंच कर रुकी तो सुरेश जी उतर पड़े। कुमार ने नमस्ते की तो हंसते हुए बोले हमारे यहां आकर भी कभी कृतार्थ कीजियेगा।

"अवश्य ! प्रयास करूंगा ?" कुमार ने दोनो हाथ जोड दिए।

"पिता जी नमस्ते।" बस के साथ भागने वाले एक लड़के ने वहा पहुंच कर कहा—

सुरेश जी उसका प्रत्युत्तर देते हुए बोले—"ये सोम के भाई साहब, अशोक !"

अशोक ने हाथ जोड़ कर कुमार को नमस्ते की—"आज यही ठहरो न भाई साहब" उसने कहा

"नहीं भाई, सोम नाराज हो जाएगी" कुमार हस पडा।

बस चल पड़ी। कुमार ने हाथ हिलाते हुए पिता पुत्र से विदा ली और पीछे को देखने लगा। सुरेश जी और अशोक बिस्तर उठाये जा रहे थे। आनन्द और उल्लास की लहर उसके हृदय में दौड़ गई। अगला स्टोपेज उसी के गाँव का था। भाव-विभोर हो वह कल्प लोक में खो गया। कल्पना कह रही थी—"मुझे लेने भी बच्चे स्टैंड पर आए होंगे। इसी प्रकार उत्सुक प्रतीक्षा मेरी भी हो रही होगी।" सोचते-सोचते उसे लगा जैसे वह रामगढ़ पहुंच गया और सोम तथा अन्य बालक 'भाई साहब'–'भाई साहब' करते उसे चारों ओर से घेरे खड़े हैं। हर्ष-विह्वल वह बड़बड़ा उठा—"छोड़ो-छोड़ो मुझे।"

निकट के यात्री ने उसके कंधे पर हाथ रख लिया था। "गलती हो गई भई !" उसने झेंपते हुए अपना हाथ हटा लिया।

कुमार की विचार धारा टूट गई। मुंह भीतर कर उसने यात्री की ओर देखा। वृद्ध ग्रामीण सज्जन थे।

"मैंने आपसे नहीं कहा था," कुमार उनकी ओर देखता हँस पड़ा, "मैं तो आप ही आप—"

मैंने समझा भइया, बाबू की कमीज हमारे हाथ से मैली हो गई दीखती है। इस लिये नाराज हो गए। वृद्ध ने अपने मन की बात कह दी।

"नहीं बाबा, ऐसी तो कोई बात नहीं" कुमार ने मुस्कराते हुये फिर बाहर की ओर देखना प्रारम्भ कर दिया।

मैं गाँव पूरे एक वर्ष बाद जा रहा हूं। इससे पूर्व पूर्व की बात नहीं सोचता वह स्वयं ही कहने लगा। पहला वाक्य हर्ष और दूसरा वेदना मिश्रित था।

कैसा हो गया होगा गाँव इस बीच में, कैसी होंगी माँ। मां का विचार आते ही वह विचलित हो गया। उनकी बीमारी का पत्र अभी अभी कुमार को मिला था।

'मुझे देखते ही वे ठीक हो जाएंगी। उनकी अन्तरात्मा खिल उठेगी।" कुमार ने स्वयं का परितोष किया।

गांव अब तक निकट आ गया था। बस इस समय बागों के बीच में थी। कुमार को हंसी सूझी। तुरन्त चश्मा निकाल उसने लगा लिया। सीट पर हैट रखा था। उसे सिर पर लगाते हुये वह कह उठा—"खद्दर धारी को इस भूषा में शायद ही कोई पहचाने।"

बस धीमी हो गई थी। कुमार ने मुंह निकाल कर बाहर की ओर देखा। सूट केस अपने हाथ में ले वह स्टोपेज पर खड़ी सोम और विनय को देखता रहा। मटरू भी एक ओर को खड़ा था। स्कूल के दो-तीन [illegible] भी भागे आ रहे थे।

ज्यों ही मोटर रुकी सब तेजी से द्वार की ओर लपके। कुमार ने 'एड़ी' पटक मार्ग छोड़ने का संकेत किया। बालक एक ओर को सहमें से हट गए। कुमार मन्द, नीरव मुस्काता उतर कर एक ओर को खड़ा हो गया।

बच्चों ने घुस कर सारी बस में देखा। जब कुमार दृष्टि गत न हुआ तो वे नीचे उतरे। सबके मुंह लटके थे। मटरू ने विनय की ओर प्रश्न सूचक दृष्टि से देखा तो वह चिल्ला उठा—'नहीं आए, नहीं आए, नहीं आए। क्या जरूरत पड़ी है उन्हें आने की ?" उसकी वाणी से साफ प्रकट था कि जोश से रोष अधिक है।

कुमार अभी तक अपनी टाई हाथ में लिए एक ओर खड़ा मुस्करा रहा था। आगे बढ़ कर वह विनय के ठीक सामने जा पहुंचा। हाथ जोड़ कर बोला--नमस्ते विनय बाबू।

आवाज सुनते ही सबकी दृष्टि कुमार की ओर घूम गई। 'भय्या !' विनय फुसफुसाया और कुमार के अंक से जा लगा। शेष बच्चे खड़े हंस रहे थे। सबके सिर पर हाथ फेरता कुमार पूछने लगा—"अच्छे तो हो सब ?" सब चुप थे।

सोम अब तक एक ओर चुपचाप खड़ी थी। धीरे से उसके पास जाकर कुमार ने कहा—"मुझसे नाराज है क्या सोम बोल नहीं रही !"

"हाँ नाराज हूं, क्यों आये हो इतने दिन में ?" सोम बोली,

"अब जल्दी-जल्दी आया करूंगा।" कुमार ने कहा। उसके हृदय में कुछ अभाव खटक रहा था। वह सोच रहा था—"वह भी यदि आज होती तो ?"

मां को प्रणाम कर कुमार ने उनके पांव की ओर हाथ बढ़ाया तो दूर खड़ी ताई बोल उठी—जुग-जुग जियो मेरे बच्चे दो धोतियों की आस मुझे भी है।

"आस कैसी ताई, धोती तो जब कहो, लादूं"

ऐसे नहीं रे ! ब्याह तो कर पहले" दूर से ही आती हुई चाची कह उठी।

"नमस्ते करानी हो तो करा लो तुम लोग, इन तुम्हारे आशीषों की जरूरत तो मुझे है नहीं। रही बात धोतियों की सो मेरे ऊपर रह कर तुम ऐसी ही रहोगी—न ब्याही भैंस न मिला खोस"

ठीक तो है जी," रिस्ते की एक भाभी ने व्यंग्य किया, 'भूख भी हो ब्याह की तो लाला अपने आप थोड़े ही कहेंगे, वह तो हमें सोचना है।"

"फिर वही बात" कुमार मुस्कराया और बाहर की ओर चल दिया। किन्तु उसकी मुस्कराहट में पीड़ा छिपी थी।

"ठहर तो रे !" ताई बोली, "तू तो ऐसे भागता है जैसे कोई ब्याहली बहू हो, कुछ हाल तो सुना दिल्ली के।"

अच्छा खासा हूं, देख तो कितना फूल गया हूं।

"कहां रे ! पेट तो कमर में लग गया है। कहता है फूल रहा हूं। कैसे गये पर्चे।"

"वह मुझसे पूछो।" पीछे से विनय बोल उठा, "फेल तो भय्या हो ही नहीं सकते।"

"क्यों भाई !" कुमार ने पूछा।

"आज तक जो नहीं हुये।" विनय का तर्क था।

"तेरी 'मुंह भाका' सही निकले।" माँ ने प्यार से विनय के सर पर हाथ फेरते हुये कहा, "इस साल अच्छे नम्बरों से पास हो गया तो अगले साल इलाहबाद भेज दूंगी इसे।"

कुमार ने दृष्टि उठा कर माँ के मुंह की ओर देखा—एक अलौकिक प्रसन्नता वहाँ थी। मुग्ध आभास था, सन्तोष का, विश्वास का।

"विनय कभी झूठ नहीं बोलता मां। मैं अवश्य पास हो जाऊंगा।"

"ले दूध पी," चाची ने कटोरा उसके हाथ में दे दिया।

कुमार ने दूध पीकर कटोरा नीचे रखा और उठता हुआ बोला, "घूम आऊं मैं अब, फिर बात करूंगा।

"जा रे घुमक्कड़, जाने किसे-किसे तेरा इन्तजार होगा।"

कुमार घर से बाहर निकला ही था कि पीछे से चाची बोल उठी, "जो कोई कुछ खिलाये तो मेरे लिये भी लेते आना।"

"और जो मागे, तो।"

"तो अपने आप दे आना।"

साथियों और दोस्तों से मिल कर गांव के हाल मालूम करने की उत्सुकता में कुमार आगे बढ़ा जा रहा था कि पीछे से कानों में पड़ते गीत के स्वर सुन कर ठिठक गया। गीत की पंक्तियां थी—'ओ जाने वाले'

कुमार ने मुड़कर देखा तो शफीक खड़ा हंस रहा था। नमस्ते करता हुआ बोला, "कहाँ चले इतनी तेजी से कि इधर उधर की कुछ खबर ही नहीं ?"

"तेरे ही पास तो।" कुमार ने कहा और दोनों आलिंगन बद्ध हो गये।

"चलो खेड़े पर बैठेंगे।" शफीक ने कहा।

"चलो।" दोनों एक दूसरे का हाथ पकड़ कर चल दिये।

"कहाँ चली जोड़ी ?" लाला मोहनमल ने उन्हें देख पूछा, "कब आये कुमार ?"

"नमस्ते लाला जी।" कुमार ने उत्तर दिया, "जब आपने देख लिया।"

"अच्छा, हो तो ठीक ?" लाला जी ने चलते-चलते पूछा।

"जी हां।" कुमार ने उत्तर दिया और आगे बढ़ गया।

—: ० :—

खेड़े पर पहुंच शफीक और कुमार सड़क पर जा बैठे। इधर उधर से घूमते-फिरते और भी दो एक साथी आये और वहीं बैठ गए। सबके बैठने पर कुमार ने पूछा—"अब सुनाओ गाँव के हाल।"

"हाल कुछ ठीक नहीं" शफीक बोला "तुम्हारे कहने से हमने यहाँ मिडिल स्कूल खोलने का विचार किया था लेकिन ...

"लेकिन क्या ?" कुमार ने उसे चुप होते देख पूछा "इन रईसों के रहते यहां कुछ नहीं हो सकता, कुमार," सुरेश ने कहा, "जनरल मीटिंग में खड़े होकर चौधरी कृपालसिंह ने कहा—क्या जरूरत है यहां स्कूल की।"

"फिर—?"

"फिर क्या ? शफीक ने काफी कोशिश लोगों को समझाने की करी। किन्तु हो कुछ न सका। चौधरियों ने कुछ चन्दा दिया नहीं और मजदूरों के पास इतना था नहीं।"

"ठीक है" कुमार ने एक ठंडी सांस ली, "और वाचनालय।"

तुम्हारे जाने के कुछ ही दिनों बाद चौधरी कृपालसिंह ने सबको बहका-फुसला कर चन्दा देने से मना कर दिया।

"हूं" कुमार ने एक निश्वास खींची और चुप हो गया। साथी भी सब मौन थे।

सब सुख होने पर भी कुछ लोग दूसरो के गम मे दुखी हो जाते हैं। पूर्ण शिक्षित होने पर भी अपने चारों ओर अनपढ़ और बेबस मानव समुदाय को देख उनका हृदय रो उठता है। विशेषकर उस स्थिति में जब कि उन्हें ऐसा बनाये रखने में किसी का हाथ हो। कोई जान बूझ कर मनुष्यों को भेड़ और बकरियों से आगे न बढ़ने देना चाहता हो। वही कुन्दन इस समय कुमार के अन्तर में था। गाँव की दशा और लोगों की बेबसी देख उसने इन लोगों की उन्नति का मार्ग साफ करना चाहा था परन्तु ...

तुम लोगों से यह नहीं हुआ कि स्वयं चन्दा देकर स्कूल के कमरे बनवा देते और वाचनालय को क्रमबद्ध रखते।

"हमने ऐसा किया कुमार।" शफीक उत्साह से बोला—किन्तु केवल कमरों के बनने से स्कूल नही चलता। उसके लिये मास्टर चाहिये और

"मास्टरों के लिये वेतन!" कुमार ने उसका वाक्य पूरा किया। किन्तु विद्यार्थियों की फीस से उनका वेतन निकल ही आयेगा।

"इतने विद्यार्थी प्रारम्भ में नहीं आ सकते कुमार" शफीक ने कहा—

कुमार फिर सोच में पड़ गया। रूढ़िवादी जागीदारी परम्परा अभी पूरी तरह समाप्त नहीं हुई। शोषण और बेगारी अभी भी चल रही है, केवल परिवर्तित रूप में। समय के साथ उसने अपने साधन और शस्त्र बदल लिये हैं गरीब अब भी पैसे का गुलाम है। पहले उसकी गुलामी सुरक्षित थी और अब नैतिकता है उसका वही रूप..... भुखमरी, कंगाली, असहायता।

दूर-दूर तक रियासत के नाम से पुकारे जाने वाले रामगढ़ में एक मिडिल स्कूल भी नहीं। पक्की कोठियों और रियासतों के नीचे बालकों को बैठ कर पढ़ाने के लिये कोई कमरा भी नहीं! मजदूरों और किसानों के लड़के चौथी कक्षा पास कर घर बैठे या पढ़ने के लिये

कहीं दूर जायें। जिसके लिये · जिसके । पैसा एक आवश्यक तत्व था। छोटा उसके अभाव में छोटा था और बड़ा अपनी ऊंचाई की चरम सीमा की ओर बढ़ना चाहता था।

रह रह कर कुमार के हृदय में एक टीस सी उठने लगी ! "जिनके खून और पसीने की कमाई इन रियासतों की नींव में लगी है उन्हीं के बच्चों की ये दशा, यह पतन !" वह बड़बड़ा उठा— "यह अब नहीं हो सकता शफीक, रामगढ़ में स्कूल खोलना ही होगा— किसी भी प्रकार · किसी भी मूल्य पर ! इन रियासतों के सामने हम झुक नहीं सकते।"

शफीक का रक्त खौल उठा जोश में वह बोला—कृपालसिंह ने कहा था कुमार—' घास की ठेठे हाथों से अभी गई नहीं हैं और स्कूल खोलेंगे।"

"घास की ठेठे !" कुमार गुर्रा उठा—इन ठेठों से तो तुम्हारा वैभव पनपा है, यह न होती तो तुम भी हमारी तरह न होते ? खैर, अब इनका अपमान तुम अधिक नहीं कर सकोगे। हमने तुम्हारा मान बढ़ाया था, हम ही उसे वापिस लेंगे। "लेकिन भय्या," सुरेश ने बीच में उसे रोका—

"कुछ लेकिन वेकिन नहीं सुरेश, मैं स्वयं स्कूल में पढ़ाऊंगा। फिर तो मास्टर की आवश्यकता न रहेगी।"

"फिर···शफीक हर्ष से उछल उठा—तुम हमारे साथ रहो तो फिर तो हम सब कुछ कर सकेंगे।"

"मैं अब यहीं रहूंगा शफीक।" कुमार बोला—"कल ही से हम लोग अपना कार्य प्रारम्भ कर देंगे · "

बीती कहानी सुन आँखों में आंसू आ जाते हैं खोई चीज पाकर हृदय एक अत्यधिक पुलेक-वेदना का अनुभव करता है वही अनुभव गांव के इन तरुणों ने कुमार की बात सुन कर किया और गांव की ओर चल पड़े।

सबसे विदा ले कुमार सोम के घर की ओर चला। कहने को तो सोम भी जमीदार-कन्या थी किन्तु उसके पिता में वह झूठा स्वाभिमान और अंहकार न था। गाँव के लोगों के दुख दर्द में साथ देना वे अपना कर्त्तव्य समझते और 'आड़े' समय पर उनकी सब प्रकार से सहायता करते। गांव उनको ' दरियादिल रईस के नाम से पुकारता।"

किन्तु सोम से कुमार के स्नेह का कारण यह न था। वह स्कूल में पढ़ती थी। २ वर्ष पूर्व कुमार जब गाँव आया तो उसने स्कूल में पढ़ाया था। खाली समय में इधर-उधर न घूम अपनी छिपी वेदना को भुलाने वह वहाँ चला जाता। स्कूल के बालकों में उसका मन बहला रहता। छोटे-छोटे बालक बिना पिटाई के पढ़ाने वाले मुंशी को देख उत्साहित हो कहते—"हमें चाहे पीट कितना ही लो, पर पढ़ा दो भाई साहब ?" कुमार का हृदय पुलकित हो उठता। ऊंच-नीच, छोटे-बड़े के भेद को भूल निश्छल खेलते इन बालकों में उसे अपनी आत्मा का घर दिखने लगा। सबसे चतुर और चंचल होने के कारण सोम उस घर की मालिक थी।

सोम के पिता जी नित्य उसे घर पर पढ़ाया करते थे। सदैव से ही उनकी शिकायत रही थी—अध्यापक स्कूल में कुछ नहीं पढ़ाते।

सहसा सोम के इस परिवर्तन को देखते आश्चर्यान्वित रह गये। उन्हें लगा जैसे अत्यन्त द्रुत गति से पढ़ाई को पीछे छोड़ती वह भाग रही हो। और सुख और, प्रसन्नता को न छिपा सकने के कारण एक दिन वे पूछ बैठे—क्या बात है सोम, आज कल बहुत पढ़ाई कर रही है ?

"भाई साहब जो पढ़ाते हैं !" उत्साह से उसने उत्तर दिया।

"कौन भाई साहब ?"

"कुमार भाई साहब, और कौन ?"

"वही कुमार जो दिल्ली में पढ़ता है।"

"हां, वही ?"

"तो उसका ट्यूशन कर ले न।"

"पूछ आऊं उनसे ?"

हां,

और उसके बाद से दो मास तक कुमार ने सोम को अवैतनिक ट्यूशन पढ़ाया था। स्नेह-ग्रन्थि और भी जटिल हो गई। बाद में कुमार देहली स्वयं पढ़ने चला गया था।

अब वह सोम के यहां जा रहा था। उससे मिलने और श्याम-सिंह (उसके पिता) से कुछ आवश्यक बात करने। वह द्वार पर पहुंचा तो सोम बाहर ही खड़ी मिल गई। आदर से नमस्ते कह वह उसके पास आ खड़ी हुई।

"मैं तो बिलकुल ठीक थी, पर आप जी ने तो कोई खबर हमारी नहीं ली।"

"पढ़ाई में बहुत लगा रहा सोम, तुम लोगों को दो-एक पत्र ही डाल सका।"

"हम तो हर महीने डालते रहे, पढ़ते तो हम भी थे।"

"लेकिन तू तो छोटे दरजे में पढ़ती है न!"

'जी:—आप ही पढ़ते हैं बड़े दरजे में तो, बात मत बनाइये बस।

अच्छी बात है, ले मैं चुप हो गया। कहले जो तुझे कहना हो। कुमार ने कहा और वास्तव में चुप होकर बैठ गया।

उत्तर-प्रत्युत्तर में मनुहार और क्रोध दोनों बढ़ते हैं। किन्तु मौन होने पर उनमें कमी निश्चित है। सोम ने कुमार को चुप देखा तो गले से लिपटती बोली—कई बार हम सब ने आपसे 'कुट्टा' करने की सोची किन्तु कर नहीं सकीं। क्यों नहीं कर सकीं भाई साहब।

कुमार ने सोम के इस सरल प्रश्न को सुना और मौन मे पड़ गया। दूरी और मौनिका कोई भी स्नेह बन्धनों को शिथिल करने में असमर्थ है। एक बालिका के मुख से इस तत्व का सधान सुन वह स्तब्ध रह गया। सरल और निश्छल संसार में यदि कुछ है तो बाल-हृदय! पुलकित हो उसने उत्तर दिया—"इस लिये मुझसे 'कहा' नहीं कर सकी सोम, क्योंकि मैने तुमसे नही किया।"

"फिर पत्र क्यों नही डालते थे ?" पीछे से सुनयना आ गई।

'न बतलाऊं तो क्या करेगी ?' कुमार हंस पड़ा,—जा सोम अपने पिता जी को तो बुला कर ला।

सोम चली गई तो सुनयना अनेकों सम्भव, असम्भव प्रश्न करती रही। कुमार यथा शक्ति उत्तर देता। किन्तु जब कुछ न समझ पाता तो हंस पड़ता—मुझे नहीं मालूम।

"तो फिर पढ़ते क्या हो ?' वह पूछती।

कुमार चुप हो जाता तो वह फिर कुछ न कुछ पूछने लगती।

"कब आये कुमार ?" श्यामसिंह ने आकर पूछा—"क्या बात कर रहे हो सुनो से ?"

"कुछ नहीं, यूं ही कुछ बात पूछ रही थी," कुमार ने उन्हें प्रणाम कर उत्तर दिया— और उठ कर खड़ा हो गया।

"बैठो-बैठो," चारपाई पर बैठते हुये श्याम ने कहा—और उसका हाथ पकड़ लिया।

"परीक्षा कैसी रही ?" कुछ देर बाद उन्होंने पूछा।

"ठीक हो गई हैं।"

"कौन सी डिवीजिन आ जायेगी ?"

"देखिये, आशा तो सैकिंड की है।"

"चलो अच्छा है, इससे एम०ए० में प्रवेश आसानी से मिल जाएगा।" श्यामसिंह ने हर्षित स्वर से कहा। किन्तु कुमार एकदम गंम्भीर हो चुप हो गया।

"चुप क्यों हो गये कुमार, मैंने कुछ गलत कहा क्या ?"

"नहीं तो।"

"फिर !"

"बात यह है कि अगले वर्ष मैंने पढ़ने का विचार छोड़ दिया है।"

"तब क्या करोगे ? नौकरी !"

"जी—"

"गलती कर रहे हो भाई, अभी तो तुम्हें पढ़ना चाहिये, नौकरी की अभी क्या जल्दी है।

"आप ठीक कह रहे हैं भाई साहब। लेकिन मैं नौकरी बाहर कहीं करूंगा।"

तो यहां क्या किसी के ढोर चराओगे ? श्यामसिंह हंस पड़े—"नौकरी करोगे और बाहर भी नहीं जाओगे, अजीब बात है !"

"मैं यहां मिडिल स्कूल खोलने का विचार कर रहा हूं।" कुमार ने अपनी योजना प्रस्तुत की।

श्यामसिंह को इस समस्या पर हुए वाद विवाद तथा उसकी असफलता का ध्यान हो आया। वे जानते थे कि कुमार की ही इच्छा से यह प्रस्ताव आया था। अब उसके इस वाक्य की दृढ़ता को परिलक्षित कर भी वह आश्चर्यान्वित नहीं हुये। शान्ति से बोले—"तो ठीक है। जब तुमने निश्चय कर लिया है तो मैं और क्या कहूं। वैसे तुम तो जानते ही हो कि मेरी स्वयं इन कामों में बहुत दिलचस्पी है, लेकिन अपने पिता जी से पूछ लिया है न !

कर्तव्य पालन में किसी से पूछना क्या भाई साहब। उसका निर्धारण तो हमें स्वयँ ही करना होगा।

"किन्तु फिर भी—"

'पिता जी की ओर से मुझ पर कभी कोई प्रतिबन्ध नहीं रहता।'

"मुझे तुमसे यही आशा थी।" कुमार के सिर पर हाथ फेरते

हुए श्यामसिंह बोले---इसमें शक नहीं कि शुरूआत: मुश्किल होगी लेकिन रहेगा इसका नतीजा अच्छा ही।''

"सब आपकी कृपा पर है—" कुमार गदगद कण्ठ से बोला।

"मेरी दया क्या कुमार, सेवा और कर्तव्य का पथ तो सदैव सुखद होता ही है, बात सिर्फ निर्भय बढ़ने की है।"

"कठिनाइयों की मुझे चिन्ता नहीं, सुखों की लालसा नहीं, इच्छा बस इतनी-सी है कि यह गाँव कुछ बन सके।"

"सावधानी से काम करोगे तो सब ठीक ही होगा। बस तनिक इन 'ऊंचे' लोगों से बचकर चलना, इनके चक्कर ही बेढ़ब होते हैं।"

"आपकी सलाह मिलती रहे तो सब ठीक हो जायेगा।" कुमार ने उत्साहित हो कहा।

"मैं तन-मन से तो तुम्हारे साथ हूं ही, हां, धन की लालच अवश्य नहीं दूंगा।"

"उसकी मुझे आवश्यकता भी नहीं" कुमार ने कहा और उठकर चल दिया· अच्छा अब चलूं।"

कुमार चला गया। सोम और सुनयना सारी बातें तो समझ न सकीं, इतना समझ गईं कि गांव में ही अब कुमार रहेगा। शुभ समाचार सबको सुनाने दौड़ गईं

लगन और श्रम से बड़े से बड़े कार्य सहज हो जाते हैं। कुमार और शफीक आदि की भाग दौड़ भी व्यर्थ नहीं गई। गांव में मिडिल स्कूल खुल गया। कुमार स्वयं पढ़ाने लगा तथा दो अध्यापक और रख लिये। विद्यार्थियों की संख्या प्रथम वर्ष होने पर भी पर्याप्त हो गई। कार्य ठीक प्रकार से चलने लगा। गाँव अपने जीवन की पूर्व स्मृतियों में खोया अतीत के वैभव- विलास और शोषण—क्रन्दन की छायाएं देखता तथा देखता प्रगति के इस प्रथम चरण को। हर्षातुर हो लोग कुमार पर आशीष-वर्षा करते। कुमार सकुचित सा उत्तर देता—सब आप लोगों की कृपा है।

"पुरखों ने कोई पुण्य किया था, तभी तो कुमार जैसा लड़का गाँव में पैदा हुआ।" कोई-कोई भक्त हृदय कह उठता—।

किन्तु सब प्रकार के कार्यों तथा सेवा-साधनाओं का मूल्य प्रत्येक मनुष्य समान नहीं उठाता। हृदय और भावनाओं के वैषम्य के कारण प्रत्येक का दृष्टि कोण भी भिन्न ही होता है।

मिडिल स्कूल का प्रारम्भ भी प्रत्येक ग्रामवासी को अच्छा लगा, ऐसी बात नहीं थी। जमींदार-वर्ग का पर्याप्त विरोध होने पर भी जो कार्य रामगढ़ में हुआ था, वह आश्चर्यजनक था। चौधरी कृपालसिंह तथा अन्य जमींदारों ने एक भी पैसा स्कूल के लिए देना अस्वीकार किया। कुमार को अपनी धमकियों और वाक् चातुरी से विचलित करने का पर्याप्त प्रयास उन्होंने किया। किन्तु जो होना था हुआ। सहस्रों तर्कों और दुष्प्रलोभनों के सम्मुख भी कुमार ने अपनी बात रखी और दृढ़ता से उसका पक्ष-पोषण करता रहा। पर हां, इतना होने पर भी सम्भव था कि उसका उद्देश्य पूर्ण न हो पाता। उसका मानस हंस सेवा के पुण्य सरोवर में न तैर पाता यदि मीटिंग के बीच में बाल-विधवा विद्या जाकर ५०) स्कूल के लिये दान न देती। चौधरी कृपालसिंह के सब तर्कों का खण्डन करता हुआ विद्या का एक वाक्य ५०) और गाँव भर का सहयोग कुमार के पल्ले में बंध गया। जिसे करने में सब असमर्थ रहे थे, उसे उन्होंने कर दिया। कुमार के हाथ में रुपये देते हुये उन्होने कहा था—तुम गरीब का भाग्य बनाने जा रहे हो कुमार, उसे अपने प्राण से भी तुम्हारा स्वागत करना चाहिये। रही बात जमीदारों की, सो, उन्होने हमें उठाने की कोशिश की होती तो वे इतने बड़े कैसे होते ?

विद्या का एक-एक शब्द कृपालसिंह के हृदय पर तीर सा लगा। गाँव वालों ने उन तीरों को फूल समझा। परिणाम यह हुआ कि कृपालसिंह के काफी ऊंच-नीच और सफलता-असफलता के चित्र दिखाने पर भी वह स्कूल बना और चलने लगा। जमींदारों का काफी

संख्या का बहुमत अपने सामने उसकी इमारत बनती देखता और बड़-बड़ाता रहा।

रामगढ़ के खेतों में वंशी और जंगलों में रामयण तथा महाभारत के वाक्य गूंजने लगे। हर्ष और उल्लास का स्वच्छ सरोवर, जो वहां बहने लगा था, घर-घर में फैल गया।

—: o :—

एक वर्ष बीत गया। शृंगार और सज्जा की रात्रि की तरह लम्बा तथा रोचक-एक वर्ष। कुमार ने इस बीच अपना ध्यान सब ओर से हटा कर स्कूल पर केन्द्रित किया। अपने चारों ओर के संसार को भूल वह उसी में खो गया। स्कूल के बच्चों को अपनी लगन और साधना से सफलता शुभायपथ की ओर वह ले चला। यथा समय विद्यार्थियों ने परीक्षा दीं और स्कूल इस समय ग्रीष्मावकाश में बन्द थे। छटी व सातवीं कक्षा का परिणाम निकल चुका। अधिकांश सफलता ही मिली थी।

आठवीं कक्षा की परीक्षा बोर्ड की थी। कुमार के स्कूल से ६ लड़के उसमें बैठे थे। परिणाम अभी निकला नहीं था।

विद्या अपने कमरे के बाहर पिलखन के पेड़ के नीचे बैठी चरखा कात रही थी। उसके मस्तिष्क में न कोई विचार था न कल्पना। अपने चरखे के ध्वनि संगीत तथा लहर-नृत्य में तन्मय वह अपने कार्य में व्यस्त थी।

"नमस्ते बीबी!" उसने सुना और आँखे ऊपर उठाई। कुमार एक हाथ में दोना तथा दूसरे में गिलास लिये सामने खड़ा था।

"आ बैठ," बड़े प्यार से बीबी ने कहा, "बड़े दिनों में आया मेरी तरफ, क्या लाया है इस गिलास और दोने में।"

"दूध मिठाई" कुमार ने कहा और हंसते हुये दोनों चीजें विद्या के सामने रख दीं।"

"कैसी हैं ये," पूछा उन्होने।

"पहले खा लो बीबी, फिर बताऊंगा।"

"क्यों ? तेरी सगाई हुई है क्या ?"

"नहीं बीबी, मेरी नहीं, मेरे स्कूल की सगाई हुई है।"

"कैसे ?"

"हमारा स्कूल जिले में प्रथम आया है है बीबी ! सारे लड़के सफल हो गये है।"

"सच !" विद्या के रोम रोम में प्रसन्नता नाच उठी, "और इस पर भी कहता है कि पहले खा लूँ, रहा पगला ही।"

"क्यों ? इसमें पागलेपन की क्या बात है ?"

"कितनी खुशी की बात है कुमार, मैं अपने भगवान को भोग लगाये बिना इस मिठाई को कैसे खा सकूंगी ? अनेक बार तेरी सफलता की भीख मैंने उनसे मांगी है।

भगवान का नाम सुन कर कुमार के हृदय में एक कम्पन सा हुआ, उसे लगा जैसे कोई कसैला घाव किसी ने कुरेद दिया हो, किसी बीती बात की याद उसे विह्वल कर गई। बीबी तब तक कमरे में चली गई थी कुमार अनमना सा बैठा रहा।

"ले अब पहले तू खा, बीबी ने अपने पीढ़े पर बैठते हुते कहा। क्यों ?" कुमार ने सिर ऊपर उठाया।

बीबी ने देखा कुमार के आँखो में गहरी उदासीनता छा गई उसके स्वर में अद्भुत परिवर्तन आ गया है। "क्या बात है रे तू उदास क्यों हो गया !" उन्होंने पूछा।

"नहीं तो" हंसने का असफल प्रयास कुमार ने किया।

"झूठ मत बोलो" बीबी बोलीं। "कहीं भगवान की सत्ता को तो अस्वीकार नहीं करता तू ?"

"नहीं बीबी, नहीं" कुमार शीघ्रता में बोला, "ऐसा तो मैं कभी नहीं कर सकूंगा, कभी नहीं।"

"तो फिर अचानक मुंह क्यों मुरझा गया तेरा ?" "वैसे ही" कुमार ने कहा और बात बिताने के उद्देश्य से बोला—स्कूल तो चल ही गया बीबी, अब और क्या किया जाय कि गांव की तरक्की हो।"

बीबी समझ गई कि कुमार के हृदय में कुछ ऐसा है जो गुप्त है। "तू ही सोच" उन्होंने कहा।

"मेरा विचार तो गांव को उन्नति के उस चरम शिखर पर ले जाने का है जहाँ इन छोटे बड़ों का भेद दूर हो सकें ? आदमी आदमी के अन्तर को मिटा सके।"

"तो फिर एक काम करो कुमार।"

"क्या ?"

"केवल बालकों को ही नहीं, यहां के अपढ़ युवकों और प्रौढ़ों को भी शिक्षा की आवश्यकता है, बिना उसके तुम्हारे कार्य पूर्ण सफल न हो पायेंगे।"

कुमार को जैसे एक आलोक सा मिल गया। चारों ओर सरकार का प्रौढ़ शिक्षा योजनाएं प्रसारित हो रहीं थी किन्तु अपने कार्य की धुन में कुमार का ध्यान उस ओर गया ही नहीं। बीबी की बात सुन उसका हृदय खिल उठा। उसे लगा जैसे आँखों के सामने पड़ा गुलाब का फूल उठा कर बीबी ने उसके हाथ में दे दिया हो और कह रहीं हों—ले सूंघ इसे।

"तुमने ठीक कहा बीबी" वह बोला' "मैं आज से प्रौढ़ शिक्षा को अपने उद्देश्य में गिनूगा। गांव के इन अनपढ़ मजदूर और किसानों को अपनी विकास योजनायें बताने से पहले उनको शिक्षित करना आवश्यक है। यह आवश्यक है कि उनकी समझ में वह आ जाये जो हम करना चाहते हों।"

"तू जिसको शुरू कर देगा वह पूरा तो अवश्य होगा' मेरी तो बस यहीं कामना है कि इन गरीबों के खेतों में गाये गये गीत देश के साहित्यकों के अनादर और उपेक्षा का विषय न रहे। यह भी कुछ ऐसा करें, कुछ इस प्रकार करें जैसे बड़े आदमी करते हों ?"

"बड़े आदमी से तुम्हारा मतलब ?"

"पैसे वाले नहीं रे ! वे जो बड़े काम करते हैं।"

"सच बीबी" कुमार बोला "वास्तव में आप उसी को बड़ा आदमी मानती है जिसके प्राणों में विश्व प्रेम हो विश्व वैभव नहीं। जिसका व्यक्तित्व महान हो अस्तित्व नहीं।"

"नहीं तो क्या ?"

"लेकिन"

"मैंने किसी बड़े स्कूल या कौलिज में तो पढ़ाई की नहीं। हां" गीता, रामायण और बड़े-बड़े आदमियों की कहानियां घर पर जरूर पढ़ती हूं उन्हीं के आधार पर इतना मैं कह सकती हूं, कि कर्म से मनुष्य बड़ा होता है और किसी चीज से नहीं। उसकी ऊंचाई उसकी मुसीबतों के क्षणों से नापी जाती है, सुख और आराम के दिनों से नहीं।' बीबी ने शान्ति से कहा।

कुमार बैठा उनकी बात सुनता रहा। उसके हृदय में एक निर्बाध कर्तव्य श्रोतस्विनी प्रवाहित हो उठी। बैठा-बैठा वह सोचने लगा—"सुख की छाया जिसने जीवन में कभी नहीं देखी है, नारी सुलभ प्रकृति का अधिकांश वैभव जिससे ठीक उसके विकास के समय छीन लिया गया, उसकी वाणी में प्रेम और कर्तव्य की इतनी सुन्दर अवतारणा ? जीवन के प्रति इतना तथ्य पूर्ण दृष्टि कोण इतनी महान भविष्य कल्पना ?" उनके व्यक्तित्व से वह दब सा गया।

आत्म विभोर सा वह बीबी के पांव के पास जा बैठा। पूर्व इसके कि बीबी उन्हें हटाये, उनकी धूल माथे से लगाता बोला "इसी प्रकार तुम्हारी बातें सुनता जिन्दगी से लड़ता रहूं बीबी, यही चाहता हूं।"

बीवी चकित सी बैठी रह गईं। कह कुछ न सकीं

"कुमार !" तभी बाहर से आवाज आई।

"अन्दर आ रे शफ़ीक।" बीवी ने कहा और धीरे से कुमार से बोलीं—देख तो क्या बात है।

शफ़ीक भीतर आ गया तो बीवी ने पूछा—क्यों घबराये हो क्या बात है ?

"पुलिस इन्सपैक्टर आया है बीबी।" शफ़ीक बोला, "सारे गांव के लोगों को कृपालसिंह के यहाँ बुलाया है।"

"क्यों !" कुमार उत्सुक सा बोल उठा।

"रात मंगतू के घर चोरी जो हुई है. उसी सिलसिले में।"

"तो फिर घबराने की क्या बात है। कुमार ने कहा और उठ कर दोनों चल दिये।

बीबी उन्हें जाते देख सोच रहीं थी—इनकी गति में गाँव का भाग्य चल रहा है, इनके स्वर में प्रारब्ध की वाणी है और इनके विश्राम में— ? उसमें सम्भवतः परवशता विश्राम करेगी।

❖ ❖ ❖

चौधरी कृपालसिंह के यहां पुलिस इन्सपैक्टर, सारे जमीदार, और पचास साठ गांव के आदमी बैठे थे। शफीक और कुमार भी एक ओर जा कर बैठ गये। कृपालसिंह ने एक बार उनकी ओर देखा और दांत पीसते चुप रह गये।

इन्सपैक्टर कह रहा था—मैंने तुम लोगों को सिर्फ इस लिये इकट्ठा किया है कि यहां चोरी वगैरा की होने वाली वारदातों को रोका जा सके। आज रात की चोरी को देखते हुए चौधरी कृपालसिह की राय में एक 'डिफैन्स कमिटी' बना दी जाए।

"मानी" ग्राम प्रधान ने प्रश्न किया उनके स्वर से साफ प्रकट था कि गांव के प्रबन्ध में प्रधान का मत न लिया जाना उन्हे दुख दे रहा है।

"पन्द्रह आदमियों की एक ऐसी कमेटी जो सारे गांव की चोरी और नकबजनी को बन्द करे।" इन्सपैक्टर ने कहा।

"कैसे हुजूर" एक चौहान चौधरी ने प्रश्न किया

"यह पन्द्रह आदमी सारे गांव के ऐसे आदमियों की एक लिस्ट बनायेंगे जो रात को पहरा देने योग्य हों। उसके बाद उन आदमियों से पहरा दिलाने का प्रबन्ध करेंगे।"

"इसका मतलब रात को पहरा लगा करेगा।" ग्राम प्रधान ने पूछा

"जी हां," चौधरी कृपालसिंह बोले—"और कोई बाहर का आदमी तो चोरी करने आता नहीं, गांव के ही लोग करते हैं, जब खुद पहरा देंगे तो अपने आप दिमाग ठीक हो जायेगा।"

"बात तो ठीक है।" कोई फुसफुसाया।

कुमार और शफीक अब तक चुप बैठे थे। कृपालसिंह की बात सुन कुमार को कुछ क्रोध आ गया। "इतना अहम्? "वह हँसा," इसे तोड़ना ही होगा।" वह कुछ कहने को ही था कि तब ही प्रधान जा पूछ बैठे—"और कोई काम यह कमिटी करेगी?"

"इस कमेटी को यह भी देखना पड़ेगा कि हमारे खेतों की (डोलो) पर से कौन कौन आदमी घास खोदता है।"

"क्यों?" चौहान चौधरी मेहरसिंह फिर बोले।

"इसलिये कि स्कूल में पढ़कर गांव के लड़कों और उनके मा बापों के दिमाग खराब हो गये हैं। हमारे खेतों की डालों पर घास खोदते हैं उनमें से अनाज काटते हैं और फिर हमारे ही सर पर चढ़ने को तैयार।" उनके स्वर में विजय योजना का दम था।

बात कांटे की तरह कुमार के हृदय को छेदती चली गई किन्तु परिस्थिति देख वह चुप बैठा रहा। शफीक कुछ अधिक उत्तेजित हो गया था, तुरन्त बोल उठा—" किन्तु जब मजदूरी और नौकरी तुम्हारी करेंगे तो घास किसके खेतों पर गांव के लोग खोदने जायेंगे।"

बात फिर सीधे कुमार पर थी, उसके उठते कदम पर भी, प्रगति की राह पर थी। उसने चाहा कि उठ कर कुछ उत्तर दे किन्तु तभी शफीक तेजी से कह उठा—यह नामुमकिन है चौधरी, मजदूर जहां काम करेगा वहीं खायेगा। जिस खेत में वह मजदूरी करेगा, वहीं उसके बच्चे घास खोदेंगे। और सुन लो, जहां उसके फावले चलेंगे वहीं उसके ढोर चुगेंगे। जिस पेड़ को हमने पानी दिया है उसी के नीचे हम सोयेंगे

"बको मत, यह हमारी इच्छा पर निर्भर है। काम तो उन्हें गैरों मिलते हैं और रियायतें हम उन्हें दें या न दें, हमारे सोचने की बात है।"

"तो यह भी हमारे सोचने की बात है कि हम नियम बनायें या न बनाये।"

"ठीक है, ये नियम ग्राम पंचायत बनायेगी, चौधरियों की कमेटी नहीं।" प्रधान ने उसका समर्थन कीया।

"तुम्हारा मतलब ?" इन्सपैक्टर इस उद्धत स्वभाव में अपने अपमान की गँध पाकर कर्कश हो उठा।

"देख लीजिये इन्सपैक्टर साहब, "कृपालसिंह का लड़का रावेन बोल उठा, "यह ही वह हजरत हैं जो गांव में ऊपद्रव के बीज बो रहे हैं।"

"मुझे समझने का प्रयास कीजिये इन्सपैक्टर साहब," कुमार स्वयं को यथा शक्ति सँयत कर बोला—"मेरा तात्पर्य तो केवल यह है कि यह मामला हम गांव वालों का है, हम अपनी पँचायत में उसे तय कर लेंगे। व्यर्थ यहाँ क्यों वाद विवाद बढ़ाया जाय।

इन्सपैक्टर इस नम्र वाणीसे प्रभावित हुआ। किन्तु फिर भी अपने अपमान का विचार कर पूछ बैठा—"तो इसका मतलब यह हुआ कि चोरी डकैती के सब मामले तुम अपनी पँचायत में तय करोगे। हमारी कोई कीमत नहीं।"

मेरा मतलब चोरी वाली बात से नहीं था, मैं तो सिर्फ घास वाली बात को कह रहा था। चोरी के लिए आप कुछ भी कीजिए, हमें स्वीकार है।" कुमार ने उसी प्रकार शाँत वाणी में कहा।

'लेकिन ?" चौधरी कृपालसिंह कुछ कहना चाहते थे कि श्याम-सिंह ने बीच ही में रोक दिया। वे बोल उठे—"यह ठीक कह रहा है इन्सपैक्टर साहब, आप अपनी चोरी की बात कीजिए। आपस की बातों से आपको लाभ ?"

"ठीक है," इन्सपैक्टर ने कहा, "मैं मिस्टर, क्या नाम तुम्हारा ? "उसने कुमार की ओर संकेत किया।

"रामकुमार" कुमार हँस पड़ा।

"तो मिस्टर राम कुमार, मैं तुम्हारी बात से पूरी तरह सहमत हूँ। हाँ तो डिफैन्स कमेटी के बारे में तुम्हारा क्या विचार है।"

"प्रधान जी से पूछिए। "कुमार ने उत्तर दिया," उन्हीं की राय सबसे आवश्यक है।"

इतनी देर बाद अब इन्सपैक्टर का ध्यान प्रधान जी की ओर गया। प्रधान जी भी पुलकित हो गए। कुमार से—जिस पर स्वयं इन्सपैक्टर भी कृपालु होगया था—इतना आदर पाकर वे फूले न समाये। धीरे से बोले—"कमेटी के सदस्य चुन लीजिए।"

"लेकिन एक बात ! कुमार फिर बोल पड़ा—पहरा देने वालों में किसान और मजदूर ही रहेंगे, या जमींदार भी।"

"हमारे नौकर पहरा देंगे।" रावेन ने शीघ्रता से उत्तर दिया।

"यदि उस नौकर के पहरे में चोरी होगई तो पकड़ा कौन जायेगा ? आप या नौकर ?" कुमार ने उसको सम्बोधित किया।

"बात तमीज से करो कुमार," रावेन क्रोध से भभक उठा—हम क्यों पकड़े जयेंगे, नौकर ही पकड़ा जाएगा।

"क्यों?"

"क्यों कि उसे नौकरी मिलेगी।"

"तो इसका स्पष्ट अर्थ तो यह हुआ कि चोरी कोई करे, नुकसान किसी का भी हो; पकड़े जायेंगे गाँव वाले ही।"

"चोरी कराते भी तो वही हैं।"

"आप भी तो करा सकते हैं।"

"कुमार!" कृपालसिंह गरज उठे—तुम्हारी इतनी जुर्रत।"

"आप ऐसी बात न कहें, मि. कुमार," इन्सपैक्टर ने कहा।

"ठीक कहते हैं आप" कुमार कहता गया, "ये हमारे गालों पर चपत लगाते जायें और हम कुछ न कहें। ये हमें गालियां दिए जायें और हम उत्तर भी न दें। क्षमा कीजिए, हम इतने अहिंसक नहीं और वह भी उनके प्रति जो हमारे साथ यही करते आए हैं।"

"किन्तु उन्होंने ऐसा कहा कब ?"

आप उनकी बात सुन कर भी समझ नहीं सके और हमारी बिना पूरी तरह सुने ही समझ गये। अन्यथा गांव वालों को चोर और बदमाश बता कर वे क्या हमारा प्रत्यक्ष अपमान नहीं कर रहे ? जबकि—"

"मैंने गलत नहीं कहा," रावेन मुस्करा उठा, "चोरियों की लिस्ट उठा कर देखिए, जहाँ जितनी चोरी हुई हैं,सब तुम गाँव वालों की करी हुई हैं या नही ।"

"मुझे इससे कोई आपत्ति नहीं किन्तु तनिक उन लोगों की सूची भी देखिए जिनके यहाँ सामान बरामद हुआ, जिनके कहने से वे चोरियाँ की गईं। क्यों इन्सपैक्टर साहब, हैं न ये ही बड़े लोग ?"

इन्सपैक्टर कुमार की अपराजेय तर्कना को पहचान गया था। वह समझ गया था कि युग-युग का सोया पौरुष एक ओर तथा शोषण और वैभव की गिरती दिवारें दूसरी ओर हैं। गरीबी में पली आत्मा का कुन्दन एक दिशा में तथा उस कुन्दन में फूटे अट्टहास का नाद दूसरी दिशा में। उसे किसी के भी सामने न आना चाहिये।

"तो इसका अर्थ यह हुआ कि तुम डिफैन्स कमेटी नही बनने दोगे ?" कृपालसिंह ने पूछा।

"ऐसा तो उसने नहीं कहा," प्रधान जी तथा श्यामसिंह एक साथ कह उठे।

"तो फिर इसका और क्या अर्थ है ?" कृपालसिंह ने पूछा।

"यही कि डिफैन्स कमेटी भी बनेगी और पहरा भी लगेगा। किन्तु यदि आप लोग पहरा नहीं देंगे तो हम लोग आपकी पट्टी में पहरा देने नहीं आयेंगे।" शफीक ने आवेश में कहा।

"तो फिर कोई मजदूर हमारे यहाँ किसी काम से भी न आवे।" रावेन का सामन्ती स्वर बोल उठा—यह भूलकर कि उसकी सत्ता का काल कभी का बीत चुका है।

"नहीं आयेगा जब तक आप सौ बार नहीं बुलाए" कोई भी आदमी आपके यहां नहीं आएगा।" शफीक जैसे चीख उठा।

"बन्द भी करो भाई यह बहस," श्यामसिंह बीच में पड़े—हम दे दिया करेंगे, रावेन के बदले में पहरा। अब बनने भी दो कमेटी।

"ठीक है।" सब जमींदार समय के पीछे अभ्यस्त अनुचर की भांति चल पड़े। "हमें पहरा देने में कोई एतराज नहीं।"

इन्सपैक्टर ने फिर अनुभव किया कि स्वाभिमान और अहंकार धीरे-धीरे मिट रहा है। जनक्रांति की विजय और रूढिवाद का प्लायन हो रहा है। मुस्कराता हुआ वह बोला—"तो अब कमेटी के सदस्य चुने जायें।"

"चौधरी श्यामसिंह।" कुमार ने कहा।

"प्रधान जी।" शफीक बोला।

इन्सपैक्टर लिखता गया। २५ आदमियों की कमेटी में शफीक और सुरेश का नाम भी आया। कुमार ने अपना नाम नहीं दिया।

चलते समय इन्सपैक्टर ने कुमार से कहा—"बड़ी खुशी हुई आपसे मिल कर, जरूरत हो कभी तो याद कीजियेगा।" और फिर धीरे से कहा ईश्वर करे आप अपनी मँजिल पर पहुंचे।"

"सब आपकी कृपा है।" कुमार ने हाथ मिलाते हुए उन्हें विदा किया।

सभा से कुमार घर पहुंचा तो मां बहुत चिंतित थी। उसे देखते ही बोली—तू क्यों बहस करता है रे! बेकार किसी से झगड़ा टंटा हो जाये।

झगड़ा कैसा मां

मुझसे विनय ने सब कुछ बता दिया है, तू चौधरी और थानेदार से लड़ क्यों रहा था?

कब मां? क्या किया मैंने?

बात मत बना इतनी देर तक तो उन लोगों से झगड़ता रहा। जो पकड़ कर ले जाता थानेदार तो?

तो क्या होता?

मेरी हालत पर दया कर कुमार देख तो, मुझे कुछ हरारत सी है। ऐसे में तुझे कुछ हो गया तो मैं क्या करूंगी तेरे तो पिता जी भी यहां नहीं रहते।

हरारत का नाम सुनते ही कुमार घबरा गया। तुरन्त उनका हाथ पकड़ खाट पर बिठाता बोला—तुम्हें तो वास्तव में बुखार है मां। तुम खाट पर बैठो। मैं अभी आटा मल कर ताई को दिये आता हूं।

नहीं-नहीं रे, आटा मैं अपने आप मल लूंगी। तू यह क्या करता है?

बोलो मत मां जो कुछ करता हूं चुप चाप देखती रहो। कुमार ने थाली में आटा निकालते हुए कहा।

चुप तो बैठूंगी ही। तू काम ही बड़ा अच्छा कर रहा है ना। जा अपना मदरसे का काम देख। मां ने खाट से उठने की कोशिश की।

देख लो मां, नहीं मानोगी तो मैं फिर किसी से झगड़ा मोल ले लूंगा। चुप बैठी रहो बस अब। कुमार ने आटे में पानी डाल दिया।

मां चुप बैठ गई। कुमार को आटा मलते वे सोच रहीं थी—अब इसका ब्याह करना ही पड़ेगा। नहीं तो रोज इसी तरह तंग करेगा।

कुमार सोच रहा था—क्या जरूरत है ब्याह करने की ? रोटी तो मैं ही बना कर खिला सकता हूं।

— —

रामगढ़ शताब्दियों से गरीबी बेबसी और परवशता का जीवन व्यतीत करता आ रहा था। अशिक्षा और धनाभाव के कारण प्रायः पतन होता ही है। यही तथ्य यहां भी लागू था। गाँव का चारित्रिक स्तर अत्यन्त निम्न था। घृणा और उपेक्षा से सम्पूर्ण वातावरण ग्रस्त था। कुमार ने इसे ऊंचा उठाने का भरसक प्रयास किया। किन्तु गन्दगी और कीचड़ में कीड़ों का पैदा होना स्वाभाविक है। रामगढ़ ऐसी ही कीचड़ था। "नीयत और तबियत दो चीज ठीक हो, तो क्या मजाल कि कोई हाथ भी उठा सके।" गांव के भले आदमियों की प्रचलित धारणा है। रामगढ़ में इन दोनों तत्वों का अभाव था।

यहां की इन विषैली दूषित परम्पराओं को मिटाने का जितना प्रयास भी कुमार करता उसे अनुभव होता—"इनमें अधिक हस्तक्षेप अभी करने से प्रगति के मार्ग में बाधा पड़ेगी।" इसी कारण सोच समझ कर उसने आंशिक चरित्रोत्थान का ही बीड़ा उठाया।

विद्या की रामगढ़ में ससुराल नहीं थी, नैहार था। उसके माता-पिता मर चुके थे। भाई कोई था नहीं। केवल एक गाय और बछड़े के साथ वह अपने घर में रहती थी। उसके पड़ोस में ही एक गुप्ता परिवार था। परिवार का स्तर मान-सम्मान में कुछ अधिक न था। किन्तु पैसे की लालसा उस घर के प्रायः प्रत्येक सदस्य में पनप रही

थी। विद्या के घर आते-जाते रहने के कारण कुमार का ध्यान इसके परिणामों की ओर आकृष्ट था। जहाँ लाला जी का बड़ा लड़का सुवन अनेकानेक चालाकियों से पैसा कमाता वहाँ उनकी लड़की सुशी भी यौवन-जनित कामवासनाओं की सेज पर करवट बदल रही थी। लड़का सफेद-चिट्टे कपड़े और पौशाक पहिनने में व्यस्त था और सुशी क्रीम पाउडर के मूल्य पर अपने आपको तुच्छ समझ रावेन् के हाथों बिक चुकी थी। कुमार ने इसे देखा और विचलित हो उठा—"किसी भी प्रकार रावेन् को इस पथ-से हटाना ही उसने निश्चय किया। इसी प्रकार गाँव के अन्य परिवारों में ऐसी ही दुरभि-सन्धियां थीं। गाँव मे नाचने-गाने वाले आते और मानवी सौंदर्य को अपने अश्लील गानों तथा अंगों के नग्न प्रदर्शन से नष्ट करते। कभी-कभी नटनियों को भी वहां बुलाया जाता— जिनका पेशा, बच्चों के लिये गाना-बजाना और जवानों की तबियत बहलाना होता। इन सभी अवसरों पर गाँव में बलात्कार और इसी प्रकार की अन्य घटनायें हो जातीं।

एक दिन की बात है कि ऐसी ही एक नटनी 'ग्राम्यमंच' (तख्त) पर नाच रही थी। नटनी युवा और सौंदर्य-मयी थी। गाँव के बच्चे-बूढ़े सब तन्मय होकर उसके नाच और गाने सुन रहे थे—। नटनी अपने प्रत्येक अंग विकृति के द्वारा युवकों को अपनी ओर आकृष्ट करने का प्रयास करती रही थी।

"लो रुपया" एक प्रौढ़ ने आवाज लगाई, नटनी तख्त से नीचे उतर कर उनकी ओर नाचती-गाती चली आई। निकट आ उनके गले में हाथ डाल उसने गाया—

जाओगे जाने न दूंगी···

प्रौढ़ हर्षमग्न हो गये थे, तुरन्त एक रुपया निकाला और नटनी के हाथ पर रख दिया। वह फिर मंच पर जाकर गाने लगी।

"एक गाना 'पार की तरज' में सुनाओ।" ग्राम-युवकों के कुलि नेता—बच्चन ने फरमाइश की। उनके मैले कपड़ों और बिखरे बालों को देख नटनी ने इस ओर कुछ ध्यान न दिया। वह अपने काम में लगी रही। अब वह गा रही थी—

जवानी, हाय मुझे क्यों सताय रे !

—:0:—

'अजी मैंने कहा, एक गाना हमारी मर्जी का भी सुना दो,' बब्बन ने फिर आग्रह किया।

'रुपये हैं जेब में ?' नटनी ने पूछा

बब्बन चुप हो गये।

'तो फिर चुपचाप ही खड़े रहो।'

'यह बात है' बब्बन तख्त की ओर लपका और उसे कंधे पर डाल निकट के बाग की ओर भाग गया। भागता-भागता वह कहता जा रहा था—अब देखना मेरी जान, बिन पैसे तुम्हारी जवानी का भी मजा लेंगे और······

किसी ने उसका पीछा न किया। नटनी का बाप चिल्ला रहा था—अरे कोई तो रोको उसे, मेरी फूल सी छोकरी······

इस प्रकार की घटनायें रामगढ़ में हर छटे-चौमास होती रहती थीं। कुमार इन सबको देखता और सोचता—कीचड़ में पड़े कीड़ों को यदि ठीक नहीं किया जा सकता तो कीचड़ तो समाप्त की जा सकती है। किन्तु कैसे ?

गांव में पतन के दोनों मार्ग खुले थे—एक ओर गरीबी तथा दूसरी ओर वासना। कुमार इन दोनों के बीच में खड़ा सन्तुलन करने का प्रयास कर रहा था। उन्हें बन्द कर कोई नया द्वार खोलने की

कल्पना वह सदा करता रहता किन्तु कुछ भी सफलता का सूत्र हाथ न आ पाया।

उस दिन की सभा की बातें भी अभी स्मृति में थीं। वह शफीक और सुरेश के साथ बैठ घंटों इन समस्याओं पर विचार करता किन्तु निष्कर्ष कुछ भी निकल न पाता। सफलता की केवल सीढ़ी सामने थी गाँव वालों को उन तीनों पर विश्वास था।

इसी प्रकार चिन्तन और कल्पना में लीन एक दिन तीनों सड़क की ओर चल दिए। मार्ग में सोम का घर पड़ता था। वह खेलती मिल गई। इन्हें देखते ही पास आ गई। कुमार का हाथ पकड़ बोली --कहां जा रहे हो ?

"घूमने !"

"मैं भी चलूंगी।"

कुमार ने उसकी आंखों में देखा। वह अब सयानी होगई थी। उसने कहा—"नहीं सोम, इतनी बड़ी लड़की घूमने नहीं जाया करतीं।"

सोम आज कल यूं ही कुमार से मिल न पाती थी। स्कूल उसने छोड़ दिया था और घर कुमार कभी आता नहीं था। और भी आग्रह से बोली—"मैं तो चलूंगी"

"खेलती रह यहीं।" कुमार ने शफीक और सुरेश की ओर देखते हुए कुछ कठोर हो कहा।

सोम ने उसके मुंह की ओर देखा। क्रोध के भाव स्पष्ट थे। कच्ची डोर और कोमल हृदय समान होते हैं। वह सह न सकी—आंसू बह निकले।—रुद्ध कंठ से बोली—"अच्छी बात है, जाओ।"

अब कुमार की बारी थी। सोम की वाणी का कम्पन सुन उसका हृदय भर आया। प्यार से बोला—इधर आओ सोम।"

"नहीं।" वह रोती हुई अन्दर चली गई।

"क्या बात है ?" तभी श्याम सिंह बाहर आ गये—क्यों रो रही है ?" सोम से उन्हों ने पूछा।

आप तो घूमने जा रहे हैं और हमने चलने को कहा तो अकड़ दिखाते हैं।" सोम ने उसी प्रकार रोते हुए कहा।

श्याम सिंह उसकी व्यथा को समझ गये। स्नेह पर उपेक्षा का आघात प्रबलतम होता है, वही उसे उगा था। कुमार को सम्बोधित कर उन्हों ने कहा—"ले जाओ भाई इसे भी।"

"मैं नहीं जाती अब।" सोम बरस पड़ी।

"जाएगी कैसे नहीं, "कुमार ने उसके पास जा कर कहा—तू तो माफ कर देती हो सोम, फिर

"धत्" सोम हंस पड़ी। तीनों को साथ ले आगे—आगे वह घूमने चल पड़ी।

सड़क पर जाकर सब बैठ गए तो सुरेश बोला—डिफेन्स कमिटी तो बन गई कुमार,

किन्तु उस दिन—काफी तंग लोगों को कर रहा है। इसका कुछ न कुछ इलाज होना ही चाहिए

"सोच तो रहे हैं" कुमार ने कहा,

किन्तु कुछ समझ में नहीं आता—। फिर शफीक बोला

सोम एक ओर बैठी सुन रही थी। तभी कुमार को उस दिन की विद्या की बात याद आगई। वह बोला—गाँव का चरित्र और नैतिकता ऊंचा करने के लिए मैंने सोचा है कि रात को प्रौढ़ शिक्षा का प्रवन्ध किया जाये। कैसा रहेगा—।

सुरेश को कुछ समझ में नहीं आया, धीरे से बोला—"क्या मतलब ?"

रात को १८,१९ वर्ष से अधिक उम्र वाले आदमियों को पढ़ाने का प्रबंध किया जाये।

शफीक बोला—

"बात तो ठीक है।" सुरेश ने कहा,—पहिले सा किया गया तो गांव में कुछ न कुछ शिक्षा अथवा प्रगति के कदम उठेगें हीं।

"हो भी तो," कुमार ने समझाते हुए कहा—डिग्री तो हमें किसी को दिलानी नहीं, साहित्यिक और ग्राम विकास की पुस्तकें पढ़ कर स्वयं हमारे कार्य में गाँव के मनुष्य योग देगें तथा अपना कार्य सरल हो जायेगा।

इसके अतिरिक्त धार्मिक कभी नैतिक पुस्तकें पढ़ कर उनके चरित्र में सुधार हो जयेगा। सुरेश ने कहा—राजनीती के दांव पेचो से मैं सबको पिल पिला कर दूंगा शफीक ने कहा—और तीनों हंस पड़े।

'वाह रे उस्ताद' कुमार ने उसकी कमर ठोकी।

अच्छा यह तो हो गया। किन्तु उस मजदूरी की घास फूंस की समस्या का क्या समाधान है। ? सुरेश ने कहा—

मैंने काफी सोच समझ कर यह निश्चय किया है कि हम भी अपने गाँव में मजदूरों की एक यूनियन बनायें। और कारखानों में अपना हक न मिलने पर जिस प्रकार मजदूर लोग हड़ताल कर देते हैं। हम भी उसी प्रकार इन लोगों के यहां काम करना बन्द कर देगें। बिना मजदूर के इनका काम चलेगा ही नहीं, ऐसी दशा में

यही में सोच रहा था शफीक ने कहा। —

इसके अतिरिक्त और कोई रास्ता नहीं सुरेश बोला।—

तो शीघ्र ही इस कार्य को आरम्भ किया जाये। कुमार बोला—और उठ कर चल दिया। और शफीक तथा सुरेश भी पीछे २ चल दिये। 'भाई साहब—एक कन्या पाठशाला हमारे लिए भी, पढ़ने के लिए खुलवा देनी परमावश्यक है।

कुमार को लगा कि एक समस्या और सुन्दर सत्य का उदघाटन कर रही है।

'अरे हाँ, इसकी ओर तो हम लोगों का ध्यान ही नहीं गया था।'

शफीक ने कहा--एक वर्ग के हितों का तो हमने बिल्कुल विचार ही नहीं किया—

'वाह री सोम—कुमार ने उसके सिर पर हाथ फेरते हुए कहा कितनी अच्छी बात सुझाई है तूने

'क्या चन्दा देगी उसके लिए सुरेश ने पूछा---

'एक रुपया' सोम ने उछल कर कहा'--और भी इकट्ठा करवाऊंगी।'

तो फिर पाठशाला भी खुल जायेगी। शफीक बोला और सोम को थपथपाया तू हमारे साथ रोज घूमने आया कर सोम

'सच शफीक भय्या सोम ने उसकी ओर हंस कर पूछा'

'हाँ, हाँ —' कुमार ने कहा और हंस कर कहा, लेकिन रोज ऐसी ही बातें सुननी पड़ेंगी।

'जरूर जरूर' सोम ने कहा—और अपना घर देख घर चली गई। कुमार,शफीक, और सुरेश के साथ विद्या के घर की ओर चला। कार्य करने से पहले उसे ग्राम प्रधान से मिलना आवश्यक था।

—:o:—

गांव में मजदूरों की यूनियन बन गई तथा उसका सभापति सुरेश चुना गया। प्रौढ़ शिक्षा का कार्य-क्रम प्रारम्भ हो गया था। रईस वर्ग बढ़ती जाति को देख दांत पीसता ही रह जाता। कुछ ही दिन पहले अपने से इन प्राण दूतों को वह देख वह कहते—कांग्रेस ने केवल जमींदारी खत्म की है ये हमें भी खत्म करना चाहते हैं। देखा जायगा।

कन्या पाठशाला भी प्रारम्भ हो गई थी। उसकी अध्यापिकाओं में अवैतनिक कार्य विद्या बीबी ने किया। एक और शिक्षित युवती सरोज को अध्यापिका नियुक्त कर यूनियन अपने कर्तव्य में उलझ गई। एक प्रबन्धक समिति बना श्यामसिंह को उसका प्रधान तथा प्रधान जी को उसका मन्त्री नियुक्त किया गया। चौधरी मेहरसिंह तथा अन्य आदमी सदस्य चुने गये। कुमार, शफीक तथा सुरेश का उसमें कोई हाथ न रहा। वे केवल सलाहकार नियुक्त किये गये।

उत्तर प्रदेश के प्राय: गांवों में होली के अवसर पर स्वांग-तमाशों का आयोजन हुआ करता है। लोग अपनी यथाशक्ति इस अनुष्ठान में चन्दा देकर उसे कृतार्थ करते हैं। दो-चार लड़के बाहर के और दो-चार गांव के। इस प्रकार ४-५ दिन का कार्य-क्रम हो ही जाता है।

रामगढ़ में भी प्रति वर्ष स्वाँग हुआ करता था। गाँव के कुछ मन चले लड़के उसके सूत्रधार बनते और होली के ४-५ दिन बड़े आनन्द से व्यतीत करते। चन्दे का आधा तो वे शराब आदि में उड़ा जाते और शेष संगीत में! इसके अतिरिक्त गुप्त मिलन और व्यभिचार के कार्य-क्रम भी होते। प्राय: इसी समय कुछ लोगों की पगड़ियाँ उछाली जातीं। पगड़ी वाले विवश दुहाई देते और फिर इस परम्परा-गत व्यभिचार के सम्मुख हार मान कर बैठ जाते। उनकी अपनी ग्लानि थी और अपना उल्लास! अपनी मर्यादाएं और अपने बन्धन! नियति सबकी पहरेदार कल्पित थी।

कुमार इसे बचपन से देखता आया था। शफीक और सुरेश के साथ कई बार इस हास-परिहास में वह सम्मिलित हुआ था। उसके परिणामों और वर्तमान पतन को देख उन लोगों ने इसके निराकरण का प्रयत्न किया। उन्होंने अपने प्राणपण से चाहा कि किसी भी प्रकार इनसे गांव की मुक्ति हो। किन्तु परम्परा चाहे कितनी भी दूषित क्यों न हो, उसके भागी सहज ही उसे छोड़ना नहीं चाहते। अपनी शिथिल भावनाओं को ही पुरखों की आड़ में कर्म की संज्ञा देकर बार-बार उसके औचित्य पर बल दिया जाता है। वासनाओं का यही संघर्ष प्रचीन के विरुद्ध नवीन क्रांति को जन्म देता है, पर सफल क्रांति वह ही है जो धैर्य और सन्तोष से अपने आपको क्रियान्वित करे। प्राचीन का विध्वंस ही वर्तमान का उचित निर्माण नहीं वस्तुत: समयानुकूल परिवर्तीकरण ही सर्जन का इंगन है।

अत: कुमार ने जब इसका विरोध करने का इरादा प्रकट किया तो शफीक अपने ग्राम्य अनुभव को सम्मुख प्रस्तुत करता बोला—कहीं ऐसा न हो कुमार कि हम अपने विरोध में जन। विरोध को जगा दें! सोच लो।

'तो क्या किया जाय!' कुमार ने पूछा।

आखिर में चौधरी श्यामसिंह की राय लेने का निश्चय कर दोनों उनकी चौपाल पर जा पहुंचे। वे बैठे हुक्का ही रहे थे, रावेन भी पास ही बैठा था। उसे देख कर कुमार ने लौटना चाहा परन्तु चौधरी श्यामसिंह की दृष्टि उस पर जा पड़ी, पुकारते हुए बोले कैसे आये कुमार ? आओ !

दोनों जाकर खाट पर बैठ गये।

'कुछ चिन्ता में हो क्या ? दोनों साथ-साथ घूम रहे हो।'

'होगी जनहित की, और क्या ?' रावेन्द्र ने व्यंग किया

'जी, है तो जनहित की।' कुमार ने तुरन्त उत्तर दिया, 'हमारे दृष्टि इस साल गाँव में सांग को रुकवाने पर केन्द्रित है।'

'क्यों ?' रावेन्द्र ने पूछा, 'इससे तुम्हें लाभ।'

'साँग तमाशा यूं तो कोई बुरी चीज नहीं। लेकिन उसके पीछे जो अश्लीलता और असभ्यता काम करती है, उस पर प्रतिबंध लगना जरूरी है। वह दुराचार को प्राश्रय देती है।'

'किन्तु यह असम्भव है। जो काम सदा से होता आया है उसे बन्द कैसे किया जा सकता है। यह तो व्यर्थ तुम्हारी हठधर्मी होगी।'

'जो अनुचित है उसे ही आप सदैव की बपौती क्यों कहते हैं ? कुछ अच्छाइयाँ भी तो खोज लो।'

'सो तो तुम कर ही रहे हो। मैं ऐसे कामों से दिलचस्पी नहीं रखता। सिवा पागलपन के इसमें है ही क्या ?'

'जैसा भी आप समझें कुमार ने कुछ उपेक्षा से कहा, किन्तु होगा यह अवश्य'

'अच्छा तो यही था कि तुम ऐसा न कहते। लेकिन जब कह ही रहे हो तो मेरी भी सुन लो, साँग होगा और जरूर होगा। कोई उसे रोक नहीं सकता।' रावेन ने सक्रोध कहा और उठ कर चला गया।

'कर लिया न झगड़ा,' श्यामसिंह बोले, 'काम शुरू हुआ नहीं और मुकाबला पहले ही,'

'लेकिन ··

'कोई बात नही,' शफीक को कुछ कहते देख श्यामसिंह हस पड़े, 'लेकिन साँग को रोक कर तो तुम गांव वालों को अपने विरुद्ध कर लोगे। बुराई में अधिक आकर्षण है। लोग तुम्हारी अच्छाइयां भूल अपने मजे में खलल डालते देख, एक दम तुम्हारे विरुद्ध हो जावेंगे।

पर आप तो जानते हैं यह काम कितना हानिकारक है। इससे गाव में जो गन्दी बीमारियाँ मेरा मतलब बुरे कामों से है, फैल रही है वे कितनी भयानक हैं। कुमार ने कहा।

'मैंने भी कई बार इस विषय पर सोचा है। और ··

'क्या निश्चय किया आपने ?' कुमार ने उत्सुकतावश बीच में ही उन्हें रोक दिया।

'यदि हम सांग के स्थान पर कुछ अच्छे नाटक खेल सकें तो गांव की परम्परा भी रह जावेगी और तुम्हारा उद्देश्य भी पूरा होगा। जरूरत तो केवल प्रबन्ध अपने हाथ में ले अवांछित व्यभिचार को रोकने की है।'

'तो फिर हम स्वय नाटक खेलेंगे,' शफीक ने कहा, 'आपकी बात मेरे दिमाग में बिलकुल ठीक बैठ गई'।

लेकिन तुम में से नाटक खेलेगा कौन ? नाचने गाने का काम तुम कर सकोगे ! श्यामसिंह ने मुस्करा कर कहा, 'लोग भडेला कहेंगे'।

कहने दीजिए, वह पक्तियां याद हैं न,—वतन की राह में वतन के नोजवां शहीद हो —हमें तो सिर्फ नचनियाँ बनना पड़ेगा। शहा। दत से तो अभी छूट है।

'तब ठीक है। हर फन मौला बनोगे तो जरूर तरक्की कर जाओगे। पूर्वजों ने कहा है। जैसा देश वैसा भेष ! वैसे तुम लोग चाहो तो रिहर्सल मैं दे सकता हूं बचपन में······'

'सो तो हम जानते हैं कि आप पूरे 'घाघाड़' है।' कुमार बोला और तीनों खिल खिला कर हँस पड़े।

कुमार की मां को उसके ब्याह की बहुत चिन्ता थी। होली पर अवकाश लेकर जब रामेश्वर जी गांव आये तो मां ने उनसे शीघ्राति शीघ्र कुमार की शादी करने को कहा।

'ठीक तो है लाला'। ताई ने भी उनका समर्थन किया, 'अब उसका ब्याह कर क्यों नहीं देते'।

'मुझे अपना विवाह करना होता तो अब तक कभी का कर लेता, लेकिन करना है कुमार का, क्या करूं ?' रामेश्वर जी ने चुटकी ली

'पर तुम तो उससे कहते ही नहीं, नहीं तो वह तुम्हारी बात टालता थोड़े ही है'। ताई ने अपने तर्क समर्थन का किया

'यह तो मैं जानता हूं कि अगर जोर देकर कहूं तो वह बात मान लेगा, लेकिन ध्यान है दो वर्ष पहले की बात का ? क्या कहा था उसने ?'

'क्या ?'

'जब मैंने उससे शादी करने को कहा तो वह बोला—मेरी शादी तो हो गई पिता जी आप चिन्ता न करें।'

'लेकिन''।' मां कुछ कहने ही जा रही थी कि कुमार ने वहां प्रवेश किया।

'नमस्ते पिता जी ?' रामेश्वर को देख उसने सिर नीचा कर लिया।

'नमस्ते। कहिये कहां से तशरीफ आ रही है ?'

ऐसे ही घूम घाम कर '

'झूठ क्यों बोलता है रे ! यह क्यों नहीं कहता कि रिहर्सल करके आया है। ताई ने कहा।'

'जी ' कुमार सकुचा गया।

इसमें शरमाने की कौनसी बात है ? इरादा नेक हो तो कोई भी काम कर लो। कौन-कौन से नाटक खेल रहे हो ?'

'राजा हरिशचन्दर और भरतरी के।' ताई ने कहा।

'प्रयास तो तुम्हारा ठीक है कुमार,' पिता जी हंसे 'किन्तु कहीं झगड़ा न हो जाये।'

'ऐसा नहीं हो सकेगा,' शफीक ने प्रवेश किया, 'नमस्ते चाचाजी।'

रामेश्वर जी शफीक को आशीष देते बोले—तेरे ही सहारे तो निश्चिन्त हूं शफीक ! वरना · '

'मैं तो जैसे दूध पीता बच्चा हूं।' कुमार ने अपना बचाव किया।

'और नहीं तो, क्या ? अभी तो तुझे धोती बांधने की भी तमीज नहीं, बी०ए० कर लिया तो · ।'

बस ! बस चाचा जी, और अधिक बेइज्जती मत करो वरना लल्ला रूठ जायेगा।' शफीक ने उपहास किया।

'क्यों बे,' कुमार ने फिर प्रतिवाद करना चाहा।

मां ने ऐसे अवसर से हाथ धोना उचित न समझा, चुपके से पति के कान में बोली—छेड़ दो न चर्चा ! अच्छा मौका है।

रामेश्वर मुस्करा कर बोले, 'सुना, इसकी मां क्या कह रही है शफीक ?'

'क्या ?' कुमार उत्सुकता न रोक सका।

'यही कि यदि शादी हो जाए तो बहू तो उसे कुछ सिखा सकती है।'

'पिताजी !' कुमार एकदम गम्भीर हो गया। 'मेरे बिचार से अब तुम्हें विवाह कर ही लेना चाहिये।' पिता जी ने प्रस्ताव प्रस्तुत किया।

'मैं तो आपसे पहले ही···' कह चुका था कि विवाह कर तो लूंगा। मगर—और दरअसल मेरा ब्याह तो—!

पहले की बात छोड़ तू, मां ने बीच में ही उसे रोक दिया, 'वह कैसे हो सकता था। वह तो पाप था, बिल्कुल पाप :'

'तो फिर अब दूसरी बार क्यों आप मुझसे वह पाप करने को कह रही हैं।' कुमार ने भरे गले से कहा और उठ कर बाहर चला गया। रामेश्वर ने उसकी मां की ओर देखा और नाराज-से बोले—'की न वही बदतमीजी, अपनी ही बात हर समय कहती है।'

'बस रहने दो ' मां उलहना-सा दे एक ओर को चली गई।

रामेश्वर देर तक खड़े अपना और कुमार का भविष्य सोचते रहे।

शत्रु सदैव अपनी घात में रहता है। उठते-बैठते, सोते-जागते, हर समय किसी न किसी प्रकार वह अपने प्रतिद्वंदी को नीचा दिखाने की योजनाओं में खोया रहता है। रावेन का मस्तिष्क सदैव इसी उलझन में व्यस्त रहता कि किस प्रकार कुमार के कार्यों का प्रतिरोध किया जाये। किस रीति से उसे लांछित और अपमानित किया जाये।

समय और परिस्थिति ने अपना प्रभाव दिखाया और बाज स्वयं जाल में फंस गया। कुमार के पीछे भागता-भागता रावेन स्वयं उसके आगे आगया।

रात के लग भग ६ बजे कुमार एक दिन विद्या के घर जा पहुंचा। द्वार पर पहुंचा तो ताला लगा था—। लौट कर वह चलने को ही था कि भीतर से कुछ 'फुसर-फुसर' सुनाई दी। कान लगा कर सुना तो

आभास हुआ कि भीतर कोई और है। कूद कर वह दीवार पर चढ़ गया और लाइट भीतर फेंक दी। पेड़ के नीचे रावेन सुशो की गोदी में सिर रखे लेटा था। लाइट पड़ते ही उसकी दृष्टि नीचे होगई। कुमार ने भी लाइट बन्द की और नीचे उतर कर एक ओर को खड़ा होगया। रावेन भी दिवाल कूद कर चलने लगा तो कुमार ने कहा—'आगे से कभी यहाँ आए तो पश्चाताप करना होगा रावेन' !

विवाद का समय न था। रावेन चुपचाप चला गया।

सुशो बाहर आई तो कुमार ने उसके सामने खड़े होकर कहा—डर मत सुशो, मेरी ओर देख ! मैं तुझे बहिन कहता हूं और······'

सुशो ने दृष्टि उठा कर एक बार कुमार की ओर देखा तथा चुपचाप खड़ी रही।

'बोलती क्यों नहीं, रावेन के हाथ अपने को बेच जिस शरीर का तूने अपमान किया है, उसकी जबान बन्द तो नहीं है। बिश्वास रख जो कुछ भी तू कहेगी वह उससे अधिक दुख नहीं पहुंचायेगा जितना पहुंच चुका है।'

'कुमार' सुशो उसके पैरों में गिर पड़ी, 'आज मुझे माफ करदो भय्या।'

'माफी की कोई बात नहीं सुशो, चांदी के टुकड़ों ने हमेशा गरीब की बेइज्जती की है, तूने ही '

'भय्या ! मैं तुम्हारे सामने एक बार बिलकुल नँगी हो चुकी हूं। अब मौका दो तो अपने असली रूप को दिखा दूंगी। एक बार—'

'मैं मौका देने वाला कौन ! मैं तो सिर्फ यह सुन भर सकता हूं कि किसी ने मेरी मर्यादा पर डाका डाला, उसको बचाना तो तुम्हारा काम है'

'मैं —मैं अब गलत नहीं चलूंगी। अब तक मुझे सुबन् जैसे भाई की सोहबत ही मिली थी। अब मैं । लेकिन एक बात बतलाओ, —'तुम मुझ से नफरत तो नहीं करोगे । नहीं करोगे न ? 'सुशो के

आसुओं ने कुमार के पैर तर कर दिए। वह कहती गई, 'मैं अब तक की भिखारिन हूं भय्या, तुम अपना प्यार दो तो कल की रानी बनूंगी।'

'नफरत कैसी री! तू तो मेरी मुंह बोली बहिन है।' कुमार ने उसे ऊपर उठाया।

सुशो ने कभी स्वप्न में भी ऐसे विराट् व्यक्ति तत्व की कल्पना न की थी। उस भाई को सामने खड़ा देख कर, जिसके मुंह से व्यभिचारिणी बहिन के लिए भी घृणा के शब्द नहीं निकल रहे, वह नीचे को झुक गई, चुप चाप पाँव बढ़ाती वह घर की ओर चली। लज्जा, पीडा और आहत अपमान के अंधेरे में वह कुछ ज्योति किरण सी पा गई थी।

कुमार के पाँव अपने घर की ओर मुड़े तो उसका हृदय ग्लानि और पुलक से आतुर था। ग्लानि का आशय था पतन और पुलक का उत्थान की आशा!

रावेन उस दिन सुशो के सम्मुख अपमानित हो अपने आपको अत्यन्त अशांत अनुभव कर रहा था। कुमार प्रत्येक स्थान पर उसे हार दे रहा था। जिधर भी वह हाथ बढ़ाता कुमार की दृष्टि बीच में आती और वह निरूपाय हो जाता। दांव–दांव हारता वह अपने खेल के नशे में उचित–अनुचित को भूल चुका था।

रावेन रामगढ़ की नृशंसतंत्र शासन परम्परा का अन्तिम—उपराभ था। एक विश्रृंखलित राज्य का नाम रहित छत्रपति ! साधारण सैनिक—कुमार—के हाथों पराजित चुप चाप बैठना उसके प्रशासकीय रक्त का अपमान था।

कुमार ने अपने निश्चय के अनुसार गांव के मंच पर नाटक खेलने का पूरा अयोजन कर लिया था। रावेन की सत्ता का हर संभव प्रयत्न के उपरान्त भी पराभव ही हुआ। लोगों ने 'नई बहू देखने का चाव' वाली कहावत को खूब चरितार्थ किया। सांग के लिए चन्दा देने को मना कर सब नाटक में सहयोग देने को तैयार होगये। रावेन चुप चाप अपने बुझते दीपक की लौ देख रहा था। 'या तो यह जलेगा या फिर बुझेगा,' उसने निश्चय किया, 'किन्तु आंधी से टकरायेगा जरूर।' नाटक के आरम्भ होने के ठीक एक दिन पूर्व रावेन ने बलवन्त को बुलाकर उस से कहा देखलो बलवन्त हम यहां के कितने राजा थे

श्रौर तुम लड़ाका सिपहसालार, लेकिन कुमार दोनो को खत्म कर रहा है ।

'क्या बात कहते हो कुंवर जी, ' बब्बन ने अपनी रानों पर हाथ फेरते हुए कहा, 'कल नाटक में देखना मेरे हाथ । बिल्ली के गले में घंटी बांधने चला है वह, बचना मुश्किल ही है ।'

अब यह तुम जानो, हमारा काम तो बताना था. हो गया तो सिपह सालारी तुम्हें मिलेगी ही, समझ गये न ?'

बब्बन सब प्रकार से विश्वास दिला कर चला गया तो राव्रेन ने सोचा—एक गुलामी को बेचने चला है श्रौर दूसरा खरीदने। देखना तो यह है कि मालिक का कौन होता है ।

—:०:—

होली की रात थी। युवकों की टोली गाती चली—

ओ ! होली खेल बसन्ता के भाई।

सब गाते हुए अन्त में नाट्य मंच की ओर चले। अब भी वे गाते जा रहे थे

खिलाड़ी ! कंवर खिलाड़ी,

ओ रे खिलाड़ी, कंवर खिलाड़ी ! क्यों रोवता भाई।

छत्री सिंह एक होते हैं, क्यों घबरावता भाई।

जस होनी सब जल जागी क्यों रोवता भाई !

खिलाड़ी ! कंवर-खिलाड़ी '

'बस बन्द भी करो अब,' कुमार ने उन्हें रोक कर कहा, 'नाटक का समय हो गया है, सब चल कर 'मेक अप' करो।'

'बोल होल होलिका भवानी की जय।' सबने एक साथ नारा लगाया और कुछ लड़के रंग-भूमि में चले गए। सामने आकर आदमी बैठने लगे थे। शेष सब वहीं बैठ गए।

ठीक ११ बजे नाटक आरम्भ हुआ। 'सत्यवादी महाराजा हरिश्चन्द्र की जय।' परदा उठते ही चौधरी मेहरसिंह ने आवाज लगाई और रात्रि जय-जय कार से गूंज उठी। नाटक आरम्भ हो गया।

लगभग १ घंटे तक नाटक निर्विघ्न चलता रहा। हरिश्चन्द्र का अभिनय स्वयं कुमार कर रहा था। राजभवन में महारानी और रोहिताश्व के पास खड़े हरिश्चन्द्र तारा से कह रहे थे—

क्या आज कहूं दुख का कारण, क्या हाल तुम्हें बतलाऊं मैं ?
किस्मत से नहीं बसाती है, क्या करूं कहाँ जाऊं मैं ?

'आ · ह ! सहसा ही कोई चिल्लाया और जनता में कोहराम मच गया। एक आदमी के माथे पर पत्थर आकर लगा था। लोगों ने इधर-उधर देखा तो कंकरों और पत्थरों की बौछार-सी लग गई। सब चिल्ला कर इधर-उधर भागने लगे। ठीक समय पर किस्मत अपना रंग दिखा रही थी। नाटक बन्द हो गया और घायल की मरहम पट्टी की गई। काफी खून जा चुका था। रावेन कुर्सी पर बैठा सब देख रहा था। मुख पर उसके मन्द मुस्कान थी।

जब सब इधर-उधर हो गए तो वह कुमार के पास से निकलता हुआ बोला--यह मेरे अपमान और विरोध का फल है कुमार, आगे से जरा संभल कर रहना। कहीं फल खट्टा न हो।

'अच्छी बात है,' कुमार ने कहा, 'मैं खट्टे और मीठे में भेद नहीं करता।'

अगले दिन का नाटक स्थगित कर दिया गया। अपने कार्य-क्रमों के संसार में यह कुमार की प्रथम पराजय थी।

--: ० :--

'क्या सोच रहे हो।' सोम ने कुमार की आँखे मींच लीं।'

'सोम है।' कुमार ने कहा और उसने हाथ हटा लिये। सुनयना भी उसके साथ थी।

कुमार सड़क पर बैठा अपनी असफल योजनाओं पर विचार कर रहा था। उनके आ जाने से उसकी विचार धारा टूट गई। धुंधले रूप में उसकी स्मृति में निम्न वाक्य ही रह गये—लिप्सा और स्वार्थ की ज्वाला अभी शाँत नहीं हुई। दानवता का नृत्य अभी भी हो रहा है। किन्तु कब तक ? आखिर कब तक ?

'आपने ड्रामा क्यों बन्द कर दिया भाई साहब।' सुनयना ने पूछा।

'तबियत नहीं करती थी खेलने को।'

'लेकिन ' सोम कुछ पूछने को थी कि कुमार कहने लगा—'वह भी ठीक है। यही न कह रही है तू कि पत्थर कंकर बरसाये गये।'

'नहीं भाई साहब !' सोम बोली, 'वह तो सबके सामने की बात है। मैं तो आपको यह बता रही थी कि यह काम राजेन चाचा जी ने करवाया है।'

'कौन कहता था तुझसे ?' कुमार ने पूछा।

'मृदुला बुआजी।'

'और क्या कह रहीं थीं ?'

'कह रहीं थीं—कह देना अपने भाई साहब से कि रावेन भय्या से झगड़ा न करें, वरना इसी प्रकार······'

'बस सोम—' वह कराह उठा।

'क्यों भाई साहब, क्या हुआ ?' सुनयना ने पूछा।

'कुछ नहीं नयन !' वह बोला और चुप होकर बैठ गया।

'मृदुला' वह आप ही बड़-बड़ा उठा, 'तू भी विष वृक्ष का फल ही सिद्ध हुई। रक्त की कालिमा न धो पाई मधु !'

'क्या कह रहे हो भाई साहब ?' सोम ने उसका कंधा झकझोरा।

'कुछ भी तो नहीं' उसने संभल कर कहा।

'सुना तुमने कुमार ?' तभी घबराया हुआ शफीक आ गया।

'क्या ?' तीनों एक साथ पूछ बैठे।

'कन्या पाठशाला और मिडिल स्कूल का सब सामान चोरी चला गया। एक स्टूल तक भी शेष नहीं बचा।

'हूं !' कुमार ने एक निःश्वास ली। सोम और सुनयना चकित सी खड़ी रह गयीं।

'इसका मतलब समझते—'

'सब समझता हूं शफीक,' कुमार ने उसकी बात काटते हुये कहा—'लेकिन मैं अपने आपको बेचकर भी ये दोनों चीजें चलाऊंगा।'

'लेकिन भय्या !'

'कुछ मत बोलो शफीक ! कमी हमारी ही है। हमें अपने आदमियों का नैतिक स्तर ऊंचा करना है। किन्तु' कुमार का गला भर आया।

'भाई साहब !' सोम उसके पास खिसक गई। कुमार ने उसके सिर पर हाथ रख लिया तथा सुनयना को अपनी गोदी में बैठाता बोला—'हमारे सपने अधूरे रह रहे हैं शफीक ! हमारे गांव के वे सुनहरे चित्र कभी न बन सकेंगे क्या ? जो हम चाहते हैं—'

सामने से आती विद्या और सरोज ने यह बात सुनी। बिलकुल उसके पास पहुंच विद्या बोली—बनेंगे कुमार ! तूलिका संभाले रहो

चित्र को बनना ही होगा।'

सोम और सुनयना कुमार के मुह की ओर देख रही थीं। कुमार ने उनकी चिन्ता समझी और हंस कर बोला—घबराओ मत री! तुम्हारा भय्या बावला नहीं हुआ है। क्यों सरोज ?

सरोज ने दृष्टि झुका ली।

* * * *

दो वर्ष बीत गये।

रामगढ़ के इतिहास के पृष्ठ गति और बन्धन के संघर्षों से भर रहे थे। एक ओर थी प्रगति की माँग, समय का सन्देश तथा दया-ममता का राग। दूसरी ओर पुरातन का मोह, इच्छाओं की चिन्गारी और घृणा तथा विक्षेप के गीत थे। कुमार और रानेन दोनों अपने-अपने पथ के संकेत वाहक से लगते।

जहाँ भारतीय ग्रामों, मेरा तात्पर्य उत्तर प्रदेश से है के एक वर्ग में दूसरे आगे बढ़ने वाले को रोकने की उत्कट लोलसा है, वहाँ दूसरी ओर स्वयं शोषित वर्ग—किसान और मजदूर भी इतना विवेकी अभी नहीं हो सका है कि अपने लाभ और हानि पर स्वतंत्र विचार कर सकें। उन्हें अपनी दो रोटी मिलने के बाद इधर-उधर की उलझनों में फंसना एक झंझट-सा मालूम देता है। ताश की बाजियाँ, हुक्के की

चसक और साँग-तमाशों का आयोजन तो वे एक ज्वारी की भाँति मन लगाकर हृदय में संजोए रहते हैं परन्तु उस दशा से ऊपर उठने की बात उनके सामने कहना उनकी 'गठरी' में लात मारना है, जिससे अन्न बिखर जायेगा और देवता का अपमान होगा, सो अलग।

'इसी प्रकार उनका जीवन-चक्र घूमता है। न तो वह ठीक है और न उसे वक्र ही वे मानते हैं। आठों पहर भगवान को उलाहने देने के बाद भी प्रगति की माँगें उनके सामने धीमी ही रहतीं हैं। कुमार के नाट्य-क्रम की असफलता और उस दुर्घटना में उनकी यही मनोवृत्ति मुख्य थी।

'सारी रात जागती रही और सूक निकले सो गई' कि औरत इन लोगों से भिन्न नहीं। सदैव अपनी दशा पर ग्लानि और पश्चाताप करते रहना, वर्तमान पीड़ा के संताप में रोते रहना, इनकी विवश आत्मा का कर्तव्य है। साथ ही इससे ऊपर उठने की कामना का एक दो प्रलोभनों और धमकियों में ही दमन कर देना इनका स्वभाव !

रामगढ़ में ग्राम-पंचायतों के निर्वाचन निकट आ गये थे। जमींदार और गाँव पार्टी दोनों अपनी-अपनी विजय-योजनाएं बना रहीं थीं। गाँव चाहता था कि इस द्वन्द में सत्ता उसके हाथ में रहे और जमींदारों को प्रधान-पद गंवारों को देना अपना तथा अपनी प्रतिष्ठा का अपमान लगता। दृष्टि कोण दोनों के भिन्न थे।

कुमार ने मजदूर-यूनियन और अन्य साथियों की राय से शफीक को टिकट लिवा दिया। इस नाजुक समय पर उसने अपने श्रम के घंटे और भी बढ़ा दिये तथा डट कर मुकाबला करने की तैयारी में लग गया। किन्तु कल्पना और पूर्ति की उड़ान अचानक पृथ्वी की ओर झुक गई। कुमार अधिक काम करने से बीमार पड़ गया। थोड़े-से बुखार की चिन्ता न कर उसने लम्बी बीमारी को न्यौता दे दिया और खाट पर पड़ उसकी आव भगत की तैयारी करने लगा।

चौधरी कृपालसिंह अपने विचार और नीति के पक्के खिलाड़ी थे।

समय और दाँव देख सारे जमींदारों को उन्होंने इकट्ठा किया। कुमार ने उनकी चैन से बजने वाली बंशी तोड़ने की कोशिश की थी। कृपालसिंह समय बिचारते सहते चले गये। रानी उनके तुरफ का इक्का था और बब्बन गुलाम! प्रथम बार उन्होंने नाटक पर वार किया। सफल योजना के उपरान्त अब पंचायती निर्वाचन में सचेत होकर बैठ गये। सब भाई-बन्धवों को सम्बोधित कर उन्होंने अपनी चौपाल पर 'जागते रहो' का नारा लगाया। उत्सुक दृष्टि उनकी ओर उठीं तो हंसते हुए बोले अब दिमाग को तेल देने का समय करीब आ गया है, कुछ इधर-उधर की भी सोचो।'

सब चौधरी चक्कर में पड़ गये। क्या उत्तर दें? यह सब समझ गये कि संकेत निर्वाचन की ओर है किन्तु दिमाग को तेल देने की बात कुछ साफ समझ में नहीं आई। आखिर कृपालसिंह ही हंसकर बोले - नहीं समझे, तो सुनो—इस अलैक्शन में किसी भी तरह जीत हमारी होनी चाहिये।

'लेकिन अपनी पट्टी को तो एक भी वोट देने का विचार गांव वालों का नहीं। भुवनेश्वर जी ने कहा।

'क्या नासमझी की बात कर रहे हो खरगोश ने कभी कहा है शेर से कि मुझे खाले—यह तो शेर को सोचना कि है कि किस करवट चले जो वह भागने ही न पावे।'

'तो क्या सोचा आपने?' रघुवीर शरण हंसते हुए बोले, 'शेरों को मुखिया तो भाई साहब आप ही हैं न?'

'मैंने यह सोचा है, और मैंने ही क्या तुम सबने ही सोचा होगा, कि हम में से स्वयं खड़ा होकर कोई भी जीत नहीं सकेगा। ऐसी हालत में पहले तो गांव में से तीन--चार उम्मीदवार और खड़े किए जाएं। इसके बाद हम में से एक खड़ा हो। फूट की यह नीति कामयाब हो गई तो जीत का सेहरा हमारे ही सिर बंधेगा।

कृपाल सिंह की बात सुन सब प्रसन्नता से भर उठे। रामेन ने

कहना शुरू किया —यह तो साफ है कि गाँव में जाहिलों की तादाद ज्यादा है। सिर्फ उनके नेता ढूंढने की जरूरत है। जैसे कुछ अक्लमन्दों का लीडर शफीक है, ऐसे ही बाकी गंवारों के भी तीन–चार चुन लीजिए। फिर बाजी आपके हाथों में ही है।

इसके पश्चात काफी देर सलाह–मशवरा होता रहा। अन्त में बब्बन को गांव में फूट डालने का भुवनेश्वर तथा रघुबीर शरण को रावेन के साथ मिलकर तीन और उम्मीदवार खड़े करने का काम सौंपा गया।

जाल फेंक दिया गया। आगे शिकार की मर्जी- फंसे या भाग जाये।

:०:——

'सुना है तेरे भय्या बहुत बीमार हैं' मृदुला ने प्रातः ही सोम से कहा।

'कौन कहता है ?'

'रायेन भय्या कह रहे थे।'

'सच,' सोम चिन्तित हो उठी, 'कब से ?'

'एक सप्ताह हो गया।

'लेकिन पिता जी ने मुझ से कहा नहीं, क्यों ?'

'क्या पता ?'

अच्छी बात है," सोम ने कहा और सीधी मां के पास जा पहुंची। धीरे से किन्तु जल्दी में बोली—मां सुना है कुमार भाई साहब बहुत बीमार हैं। मैं देखने जा रही हूँ।' और चल दी।

'अरी सुन।' मां ने कहा, ,अब तू बच्ची थोड़े ही रह गई है जो पाँव उठाए और चल दी।'

'तो ?' सोम रुक गई।

अब तू सयानी हो गई है। इस तरह अकेले जाना ठीक नहीं।'

इस का मतलब यह कि उन्हें देखने न जाया जाये।'

'नहीं' री! ऐसा न कह. वक्त मिले तो देखने तो उसे मैं भी जाऊं

'फिर क्या चाहती हो तुम ?'

'अगर मृदुला साथ जाये तो चली जा।'

'चलो बुआ' सोम ने तुरन्त मृदुला को पकड़ लिया।

'मां जी और भय्या मना करेंगे।' वह बोली।

'मैं कह दूंगी उनसे कि मैंने भेजा है, जा चली जा तू।' मां ने कहा

'अच्छा भाभी, कह जरूर देना।'

मृदुला और सोम चल दी

दोनों समझ रहीं थीं। एक दूसरी पर उपकार कर रही है। कर रही दोनों अपने २ ही ऊपर

कुमार की तबियत आज पहले से ठीक थी। अपनी चारपाई पर लेटा वह परिस्थियों का जाल बुन रहा था। बीमारी और निर्वाचन दोनों कितने सुन्दर योग में आकर एक हुए। शफीक को टिकट दिलवाने के बाद से अभी वह चारपाई छोड न सका था। निर्वाचन के कुछ ही दिन शेष रह गये थे। कृपाल सिंह की योजना सफल हो गई और प्रधान पद के लिए ३ और व्यक्ति भी खड़े हो गए। एक हरिजन, एक त्यागी और एक चौहान चौधरी मेहर सिंह। कृपाल सिंह त्यागी उच्च वर्ग से खड़े ही थे। '२००० की जन संख्या वाले राम गढ़ में पाच उम्मीदवार।' वह अश्चर्य में पड़ गया।

बी॰ ए॰ में कुमार का प्रिय विषय राजनीति था किसी भी प्रोफेसर ने कभी भी इस सिद्धान्त और कार्य का विश्लेषण न किया। वैदेशिक बाँटो और राज्य करो नीति तो पढ़ी थी किन्तु इस स्वदेशी नीति के विरुद्ध नया आंदोलन हो, वह न समझ सका।

'यदि एक बार ठीक हो कर मैं चल फिर सकता तो अभी भी रुख बदल देता, किन्तु अब ?' वह पड़ा पड़ा सोचने लगा। अतीत की स्मृतियां उसके मानस में लहरिकाओं सी घूमतीं और लौट जातीं वेदना और व्याकुलता से वह विकल हो उठा।

बी॰ ए॰ के बाद के अपने कार्य क्रम में उसने जो लक्ष्य बनाया था,

ग्रामोत्थान का कार्य जो उसने अपने सिर पर लिया था, वह कुछ दिन सुचारु रूप से न चल सका।

'गिरते हाथी की बियौड़े वाली टक्कर' कितनी भयंकर है ?' वह सोचने लगा, 'पाँच सौ जमींदार और १५०० ग्रामीण। उनका एक उम्मीद वार और गाव वालों के चार। नीति का सफल प्रयोग था। विवेक और बुद्धि चातुरी का अनूठा दांव था। कृपाल सिंह पर उसे क्रोध हो आया।' ग्रामीणों की भाषा में वह कह उठा, कितना काइयाँ है, यह आदमी।' गांव के लोगों में फूट डालकर अपना कार्य निकालने का यह साहस कुमार के पांवों की बेड़ी बन गया। वह अपनी सम्पूर्ण प्रतिभा और लगन को परास्त मान बैठा। वह ।

धीरे-धीरे उसने अपना ध्यान राजनीति से हटा अतीत पर केन्द्रित किया। सुन्दर अतीत के गह्वर में शाँन्ति खोजने का प्रयास उसने किया। किन्तु···वह फिर पीड़ा की ढिग दीवार से जा टकराया। फिर वहाँ से उसे अपना ध्यान हटाना पड़ा। कुछ ही घंटे पूर्व की एक घटना उसकी स्मृति में आगई। अभी-एक गाँव रिश्ते की भाभी उसके पास आई थीं। उसे समझाते हुए वे कह रही थीं—सोम अब जवान हो गई है लाला जी, उसके पास ज्यादा बैठना ठीक नहीं ।

'क्यों ?' उसने पूछा था।

'लोग इधर उधर की कहते है।'

' 'इधर उधर' की,' कुमार झल्ला उठा, 'मेरे इधर-उधर की सबको चिन्ता है। किन्तु अपनी, अपनी कोई चिन्ता नहीं करता। स्वयं ये ही भाभी, जो विधवा हैं दो युवाओं की प्रेमिका कुख्यात हैं। फिर—' फिर उसे उनके अन्तिम वाक्यों का स्मरण हो आया। उन्होने कहा था—पाप के मारग पर चलना ठीक नहीं लाला, सब करे धरे पर पानी फिर जाएगा।'

'लेकिन— '

तुम अभी ना समझ हो। कुछ भी कहो पर दुनियां भी आंख से

देखती है। सच और झूठ छिपै थोड़ेई है।

'तो तुम · '

जवान लड़की से इस प्रकार हिल मिल कर बात करना और क्या समझा जावैगा लाला।'

'भाभी।' कुमार बीच में ही बोल पड़ा, 'मुझे मेरे पाप मार्ग पर चलने दो अपने पुण्य अपने पास ही रखो :'

जैसी तुम्हारी इच्छा लाला, मैं तो तुम्हारे भले की कहवै थी। मानो ना मानो।' भाभी कहती चली गई।

'मेरे ही भले की सब कहते हैं, सबको उसकी पूरी चिन्ता है। मेरे पाप मार्गों का दुख है। किन्तु नग्न वासना का नृत्य सामाजिकता के पुण्य मंच पर करने वालों का सुझाव ! कितना आडम्बर पूर्ण है यह !' कुमार को क्रोध आकर एक करुणान्द्र व्यथा का आभास हुआ। वह सोचने लगा—कब नैतिकता उन्नत होकर हमारे गांव को उसका पूर्व गौरव प्रदान करेगी ?'

'भय्या !' तभी आवाज आई और कुमार ने द्वार की ओर देखा—सुशो खड़ी थी, अस्त व्यस्त मुद्रा, घबराई हुई।

'आ सुशो, बैठ !' कुमार स्नेह से बोला, 'कैसे घबराई हुई है री।'

सुशो आकार पांयताने बैठ गई। उसकी आँखों में पानी था और चेहरे पर उदासी। कुमार ने फिर पूछा, 'क्या बात है ? क्यों सुस्त है ?'

'रावेन मुझे बहुत तंग कर रहा है भय्या,' उसने कहा, 'कहता है '

'समझ गया सुशो। तू घबरा मत ! मै अब ठीक हो गया हू।' कुमार उठ बैठा।

'नहीं भय्या, तुम नही समझ सकते उसे।'

'क्यों ?

'तुम इतनी नीचता का बिचार नहीं कर सकते, तुम···' शब्द उसके गले में अटक गये।

'कैसी नीचता री ?' कुमार ने पूछा, 'बता न ? चुप क्यों हो गई ?'

'वह कहता है कि अगर उसकी बात मैंने न मानी तो वह मुझे और तुम्हें बदनाम कर देगा।'

'बदनाम ! सो कैसे ?'

'उसके पास मेरे कुछ पत्र हैं। उन्हें लोगों को दिखाकर वह कहेगा कि मैंने तुम्हारे लिये लिखे हैं।

कुमार क्षण भर को सोच में पड़ गया। किन्तु शीघ्र ही स्वयं पर नियन्त्रण रख उसने धीरे से कहा, 'तूने मुझे सोच में डाल दिया। अब ··'

मैं तुम्हारे ऊपर लांछन नहीं लगने दूंगी भय्या, मैं अपने···मैं ··' बात गले में रुंध गई और वह सिसक उठी।

'मैं अपने ऊपर सब झेल लूंगा, लेकिन यह नहीं सह सकूंगा सुशो! कहीं ऐसा मत कर बैठना कि ·'

'पर भय्या तुम्हारी बदनामी।'

'तुझे उसकी क्या चिन्ता री ! मैं अपने आप सब देखूंगा। तू आराम से रह !' कुमार ने पूर्ण सन्तोष प्राप्त कर लिया।

'लेकिन मैं अपने लिये—'

'बहस मत कर, इतना ही बस समझ ले कि तेरे डगमगाते कदम मेरी हिम्मत तोड़ देंगे।'

सुशो चुप हो गई। कुमार ने उसके सिर पर हाथ रख कहा— 'बुरा न मानना सुशो, मैं तनिक गुस्से में आ गया था।'

सुशो ने आंख उठा कर कुमार की ओर देखा और मन ही मन कहा—तुम्हारी बात का कोई क्या बुरा मानेगा भय्या ! सबसे बुरा तो तुम अपने आप को कहते हो।'

तभी मृदुला को साथ लिये सोम ने वहाँ प्रवेश किया तो कुमार ने उसे देखा तो आश्चर्य और हर्ष के आधिक्य से कह उठा— 'आ गई

मेरी याद तुम्हें। बड़ी ।' मृदुला पर उसकी दृष्टि सहसा ही जा पड़ी। 'तुम !' वह फुसफुसा उठा।

मृदुला के ओठों पर हँसी आ गई थी। धीरे से बोली, 'मेरे आने से कुछ दुख हुआ क्या ?'

'मृदुला !' कुमार ने कहा, 'दुख, और तुम्हें देखकर। यह क्यों और कब से सोचने लगीं तुम ?'

'जब से गाँव के लोग तुम्हें भगवान मानने लगे।'

'भगवान !' एक दम शाँत-सा हो गया। विचलित कण्ठ से बोला, उसका नाम मेरे सामने न लो। मैं आदमी ही अच्छा हूं।'

मृदुला और सोम ने लक्ष्य किया कि अचानक उसकी पूर्वमुद्रा भंग हो गई थी। 'जब भी तुम भगवान का नाम सुनते हो, उदास क्यों हो जाते हो ?' सोम ने पूछा।

'नहीं तो। ऐसी तो कोई बात नहीं।' कुमार ने कहा।

'कोई पाप किया होगा उनके सामने।' मृदुला हंस पड़ी।

'मधु।' कुमार कुछ कहने को ही था कि सुशो बोल उठी,' अच्छा, मैं तो चली भय्या।'

'जा ! और हाँ, घबराने की कोई बात नहीं।' कुमार ने कहा और सुशो चली गई।

कुमार ने सोम से पूछा, 'कैसी रही री, आई नहीं इतने दिनों तक।'

'मैं ठीक थी। लेकिन तुमने अपनी बीमारी की खबर क्यों नहीं दी ?' उसने उलटा प्रश्न किया।

इतना बीमार तो मैं नहीं था, जो तुम्हें खबर देनी पड़ती।

'जी हाँ ? चेहरा तो देखो अपना, कितना मुरझा गया है।' सोम बोली, 'वह तो आज मृदुला बुआ जी ने बता दिया, नहीं तो मुझे पता भी नहीं चलता।'

'मृदुला ने !' कुमार चकित-सा बोला, 'इसे कैसे पता चला ?'

'राजेन भय्या ने कहा था।' मृदुला ने कहा।

रावेन का नाम सुनकर कुमार उत्तेजित-सा हो गया। उसकी मुस्कराहट एक दम लोप हो गई। चुप होकर वह लेट गया। मृदुला ने इसे लक्ष्य किया और गंभीर हो गई। 'मैं तो इतनी दूर चल कर आई हूँ और तुम मुंह से बोल भी नहीं रहे। ऐसी क्या बात है ?' कुछ देर बाद उसने पूछा, 'कुछ नफरत है क्या ?'

'तकलीफ है उन्हें, इसी से।' सोम ने कुमार का सिर दबाते हुये कहा।

मृदुला कुछ कहना ही चाहती थी कि तभी कुमार की मां दूध के दो गिलास लिये आ गई। मृदुला और सोम को देती बोलीं—बहुत दिनों में हमारे घर आई है मृदुला ले दूध पी।'

'मां! कुमार 'तड़फ उठा' 'बीती बातों को क्यों याद करती हो? दूध पिलाना है तो पिला दो।'

पागल है तू।' मां ने कहा और चली गईं। जाते-जाते बोलीं—दूध पीकर जरूर जाना मृदुला। मुझे जरा काम है इस लिये जा रही हूं। तुम तो बैठी ही हो इसके पास।'

'बीती बातों को भुलाने की इतनी कोशिश क्यों करते हो ? मैं भी तो आखिर

'क्या ?' सोम बीच में बोल पड़ी, 'तुम भी तो क्या बुआ ?'

'इस घर में कम तो खेली नहीं। याद हैं वे दिन जब बेला, मैं और तुम यहाँ दिन भर खेला करते थे।' मृदुला ने कुमार की ओर ही देखते हुए कहा।

'सब याद है मृदुला, लेकिन भूल जाना अच्छा है उसका।'

'क्यों ?'

'क्यों कि तब तुम मेरी अप....' कुमार कहते-कहते रुक गया।

'रुक क्यों गये। कहते रहो!' मृदुला के मुख पर एक आरक्त मुस्कान खेल गई।

'कुछ नहीं मधु। तुम चौधरी की बेटी हो और रावेन की बहन ! मैं क्या कहूं ?'

'लेकिन तुम्हारी भी तो '

'वह दिन बीत गये मधु। बेला का विवाह, उसकी मृत्यु और तुम्हारी दूरी, सब एक ही बात बताते है—गरीब के साथ चौधरी की बेटी का कोई सम्बन्ध नही। यदि कुछ है तो बचपन को भूल जाने का।'

'तो तुम मुझे अब कुछ नहीं मानते।'

'मेरे मानने न मानने से क्या होता है। मानना तो तुम्हारा है।'

'मैंने क्या कभी न मानने की बात भी कही है ?'

'ध्यान करो मधु ! दो वर्ष पूर्व नाटक के बन्द होने पर तुम्हीं ने न साम से कहा था—कह देना अपने भाई साहब से रावेन भय्या से झगड़ा न करें वरना इसी प्रकार······'

मृदुला की दृष्टि झुक गई।

कुमार कहता गया, 'पिता और भय्या के सामने कुमार का ख्याल रखने की आदत तुमने बेला के साथ बिदा कर दी। अब तो मैं तुम्हारा प्रतिद्वंदी हूं। और फिर आज कल निर्वाचन के समय —तुम्हारी नीति काफी सतर्क होगी।

मृदुला समझ गई कि कुमार का हृदय कहां बिद्ध है। वह उसकी नस-नस को पहचानती थी। कुमार के हृदय का प्रत्येक परिवर्तन उसकी अन्तर्दृष्टि को स्पष्ट दिखाई देता। उस दिन, किसी प्रकार भी मिलने में अक्षम हो, उसने क्रोध में आकर सोम से ऐसा कह दिया था। उसका विचार था कि यह सुनते ही कुमार को सद्य पीड़ा के उस सोपान पर चलना होगा जो सीधा मृदुला तक जाता था। किन्तु कुमार बिलकुल उसकी कल्पना से दूर उस तीक्ष्ण आघात से परिताड़ित होगा, यह उसने कभी न सोचा था। मृदुला की उस बात को सुनते ही कुमार अपनी परिस्थितियों के वशीभूत उसे स्वयं से भिन्न एक

अलग वर्ग की समझने लगा था। उसका रोम-रोम विश्व-व्यथा-सा सिसक उठा था।

मृदुला सब समझ गई तो धीरे से बोली—एक बात के लिये मन्दिर की सब बात भूल गये। भूल गये कि मधु के साथ कुमार का अटूट संबंध है।

'मधु !' कुमार आवेश में आ गया, 'मन्दिर और भगवान की बात मैं नहीं सुनना चाहता। उसके बारे कुछ भी कहने का तुम प्रयास न करो।'

'क्या है रे ?' मां ने भीतर आकर कहा, 'क्यों इतना तेज बोल रहा है ? फिर बीमार पड़ेगा क्या ?'

तीनों चुप हो गये तो मा चली गई। सोम ने अवसर देख कहा, 'तुम कुछ भी कहो भाई साहब, मृदुला बुआ जी तुम्हें याद बहुत करती हैं।

'चुप रह तू !' मृदुला ने उसे डाँटा। कुमार ने लक्ष्य किया कि उसकी आवाज रोनी-सी थी। उसके कण्ठ में कहीं क्रन्दन था। वह सिहर उठा। अपनी वाणी में यथाशक्ति स्नेह सरसाता बोला, 'सच मधु, तू अभी भी कुमार को भूल नहीं सकी। सच !'

'बन्धन भूलने को नहीं, याद दिलाने को होते हैं, मृदुला उसी स्वर से बोली—' तुम कुछ भी कहो, मधु सदा मधु ही रहेगी। तुम्हारे लिये मृदुला वह शायद ही कभी बन सके। वह जो पहले थी वही अब भी है।'

'क्या थी पहले ?' सोम मुस्काई, 'हमसे भी छिपाया भाई साहब तुमने।'

'तू सिर दबा दे !' कुमार भी हंस पड़ा, 'फालतू चक्कर से तेरा मतलब ?'

'माँ जी बुला रही हैं मृदुला जीजी,' तभी नौकरानी ने आकर कहा. 'बहुत नाराज हो रही थीं।'

'अच्छा मैं चली,' मृदुला उठ खड़ी हुई 'चल री सोम।'

दोनों चलने लगीं तो कुमार बोला—रावेन या कोई और नाराज हो तो मेरे लिये सह लेना मधु, मैं तुम्हारा बदला कभी दूंगा।'

मधु ने एक बार पीछे को देखा और मन ही मन कहा—काश कि हम एक दूसरे का बदला दे पाते।

'बहुत गहरे में मत तैरो बुआ, चलो अब' सोम ने हंसते हुए उसकी ठोड़ी में हाथ डाल दिया, 'बदले के बदले इनके पास ही रहोगी क्या ?'

दोनों हंसती चली गईं।

'अच्छे होते ही भाई साहब हमारे घर आवें।' बाहर कुमार की माँ से सोम ने जाते हुए कहा।

—:o:—

कुमार ठीक होकर अपने काम में लग गया। निर्वाचन का एक ही सप्ताह शेष था। शफ़ीक और सुरेश भरसक प्रयास कर रहे थे किन्तु पलड़ा अभी भी 'चौधरात' का भारी था। गाँव के ४ उम्मीदवारों के सम्मुख एक चौधरी कृपाल सिंह थे। रावेन की प्रसन्नता असीमित थी। भेड़ियों को आपस में लड़ा लोमड़ी हंस रही थी। उसे सबकी मौसी होने का गौरव जो प्राप्त था।

कुमार ने लोगों को काफी समझाया–बुझाया तो कुछ नये ही तथ्य उसके सामने आये। भंगी इसलिए चौधरियों के पक्ष में थे कि वोट देने पर उनकी रोजी को खतरा था। ज्योतिषी और मजदूर वर्ग भी कई उम्मीदवार देख चौधरात के झंडे के नीचे आगया था। उनके बागों में लकड़ी और जंगल में घास का प्रलोभन इन लोगों से दबाया न जा सका। शेष सब गाव वाले ४ उम्मीदवारों के पक्षपाती थे। कुमार ने विद्या शफ़ीक और सुरेश के सामने अपनी गूढ़ समस्या रखी तो सरोज (कन्या पाठशाला की अध्यापिका) भी वहीं उपस्थित थी। उसने कुमार को सुझाया कि इस प्रकार की उलझनें केवल 'जरनल मीटिंग' में सुलझ सकती हैं और किसी प्रकार नहीं। सरोज ने स्वयं एक भाषण देना भी स्वीकार किया। विद्या ने कुमार से शीघ्र ही इसका आयोजन करने को कहा और

समस्त ग्रामीण समुदाय के सम्मुख निर्भय खड़ी सरोज उत्तेजना पूर्ण शब्दों में बोल उठी—

भाइयों !

'आज, जबकि तुम्हारे गाँव का भाग्य ४-५ वर्ष के लिए बनने को है, तुम्हें ऊँच और नीच दोनों बताकर मैं अपना कर्तव्य पालना चाहूँगी।'

'तुम लोग मानो या न मानो, लेकिन इतना मैं जरूर कहूंगी कि इस समय जो नीति इस गांव में चली जारही है वह किसी भी षड्यन्त्र से कम नहीं। १५०० आदमियों के ऊपर ८ उम्मीदवार खड़े करके गांव के विकास और उन्नति के मार्ग में जो रोड़ा अटकाया जा रहा है वह सोचने की बात है।'

'आप लोगों को खूब याद होगा कि अब से दो या ढाई साल पहले कुमार बाबू नें यहाँ नाटक खेलनें की कोशिश की तो रावेन और उसके लफंगे साथियों नें उसमें कितनीं बड़ी बाधा डाली थी। यदि ध्यान से सोचो तो तुम्हें मालूम हो जायेगा कि उस नाटक के खेलने न खेलने से

उनका कोई भी लाभ न था। तुम्हीं लोगों की तरक्की के लिए उन्होंने ऐसा किया था।' लेकिन --

'यह एक निश्चित बात है कि बड़ा छोटे को नीचे ही रखना चाहता है। क्यों ? यदि वह ऊपर उठने लगा तो ऊपर वाला जायगा कहाँ ? नीचे

'अब जमींदारी मिट चुकी हैं। चौधरात के वे जगमगाते चिराग, जिनकी रोशनी में आदमी और जानवर एक जैसे लगते थे, बुझ रहे हैं। ऐसी दशा में यदि तुम्हारा चरित्र ठीक होगया, यदि तुम एक हो गये, यदि तुम्हारे बच्चे पढ़ लिखकर डिप्टी कलक्टर बनने लगे तो उनका मूल्य कौन आंकेगा ? तुम्हारी पढ़ीलिखी औलाद उनके बच्चों की बराबरी में बैठेगी और अनपढ़ उनकी गुलामी करेगी। उन्होंने नाटक के शुरु होते ही इसकी कल्पना कर ली। इसीलिए, स्कूल, नाटक और पाठशाला सबका विरोध किया गया।'

'आज कुछ लोगों को लकड़ी और घास तथा कुछेक को उनकी रोजी का दबाव दिया जा रहा है। लेकिन मैं गारन्टी के साथ कहती हूं कि दुनियाँ का कोई भी महल, कोई भी मन्दिर और कोई भी राजा बिना गरीब के पसीने के बहे नहीं बन सका। किसी भी गरीब को भूखा मरने के लिये, रोने-तड़फने के लिये, कभी कोई आज्ञा नहीं लेनी पड़ी। और -- यह एक कड़वा सच है कि जब बैल ने अपने कंधे हिलाये, आगे चलने से मना किया, गाड़ी रुक गई। फिर आज, जबकि अपने खून पसीने में तर, आपस में लड़-झगड़ कर, तुम अपने बालको और आने वाली पीढ़ियों को गंवारू और बैर। द्वेष की कहानी सुनाने जा रहे हो कुछ समझ-सोच लो।'

'एक चौधरी के मुकाबले में ४ गाँव वालों ने खड़े होते समय यह नहीं सोचा कि उनमें से किसी का भी खड़ा होना बेकार है न उन्हें कामयाब होना है और न प्रधान, फिर निर्वाचन ही क्यों ?'

'मैं नहीं कहती कि आप लोग शफीक भाई को वाट दें, उन्हें अपना प्रधान चुनें, लेकिन एक बात निर्विवाद है कि चुनें एक को। आप ४ गाँव वाले एक जगह बैठकर अपने में से एक को चुन लें। वही गांव का चौधरात के मुकावले में उम्मीदवार होगा।'

अपनी बात कह कर जब सरोज बैठी तो उसके हृदय में असीम उल्लास था। हर्ष और प्रसन्नता में वह अपनी सफलता के प्रति पूर्ण आश्वस्त थी।

उसने जो चाहा उसे ग्रामीण भाषा में समझा दिया था। शेष तीनों उम्मीदवार भी वहां आये थे। भाषण समाप्त होते ही वे सरोज के पास आ गये। चौधरी मेहरसिंह ने कहा—मैं अपना नाम वापस ले लूंगा बिटिया, तुमने मेरे नेत्तर खोल दिये।

शेष दोनों भी अपना यही मत व्यक्त कर चुके तो सरोज ने कहा—'नहीं, नहीं। यदि आपको शफीक अच्छे आदमी नही लगते तो अपने में से किसी एक को चुन लो। मेरे ख्याल से चौधरी चाचा ठीक आदमी रहेंगे।'

'नहीं बिटिया, मेरे ऊपर पाप की गठरिया अब मत लादो मैं तो ऐसे ही चंगा। शफीक के मुकाबले जाने कौन से नकछत्तर के जोग में खड़ा हो गया था।'

त्यागी महाशय ने भी अपनी आयोग्यता का वर्णन कर अन्त में कहा—हम लौंडों की बात समझे ना थे सरोज, दुनियाँदारी में इकसठ साला से बढ़ कर मैंने कभी किसी को ना माना था पर तैंने मुझे चित्त कर दिया। कुमार के मुकाबले बुड्ढे बच्चे-से लगन लगे।'

'हम सब अब कुमार के साथ रहैंगे,' हरिजन नेता बोला, 'इतना पढ़ा लिखा यादमी गाँम के मदरसे में म्हारे बालकों के भले कारन ही पढ़ा रहा है।'

यही तो आप लोगों को सोचना है,' सरोज बोली, 'यह सच है

कि जमींदारी समाप्त हो चुकी, परन्तु उसके भोगने वालों का अहम्
और पूर्व गौरव आप लोगों को अभी बहुत दिनों तक खायेगा। लेकिन
फिर भी आवश्यकता बस आपके संभल कर चलने की है, कुमार जैसे
नेता आप लोगों को मिल ही गये हैं।'

'होश में हो न सरोज,' कुमार ने पीछे से कहा 'मुझे इनका नेता
बताओगी तो बेटा कौन बनेगा ?'

'तू मत बोल रे !' मेहरसिंह मुस्काये, 'अपनी बात हमेशा नीची
ही रखै है।'

'अच्छा तो मैंने मान लिया कि मैं आप लोगों से ऊंचा हूं। लेकिन
कितने फिट ! एक या दो !'

सब खिल-खिला कर हंस पड़े। त्यागी जी ने शाँत होकर पूछा,
'वह शफीक कहाँ है कुमार ? कोई गलती तो हमने की नई है जो
सामने नई पड़ता।'

'जी ! यह गुलाम हाजिर है !' शफीक ने आकर कहा, 'मैं तो
समझा था कि आप लोग—'

'भूल जा शफी,' हरिजन भाई ने कहा, 'हमने गलती करी थी
सो जो चाहे दण्ड दे ले।'

लेकिन दण्ड की अब कोई जरूरत नहीं, बस थोड़ा-सा मीठा
मुझे खिलाना होगा।' सरोज ने हंसते हुए कहा।

'क्यों, कोई बड़ी बहादुरी का काम किया है क्या ?' कुमार बोला,
'माफ कीजिये सरोज जी, मेरे पास एक पैसा है यदि चाहो तो···'

'चुप रह रे, चौहान चौधरी बोले—इसका मीठा वाकई हम पर
चढ़ गया।'

सब हंसते हुए चले गये।

—:o:—

सब जमींदारों की एक बैठक में रावेन आवेश में बोला —'कल की छोकरी और मुझसे मुकाबला ! अच्छी बात है। वह भी क्या याद रखेगी।'

'क्रोध से काम नहीं चलता रावेन !' कृपालसिंह बोले—कुछ उपाय सोचो, यदि हम इलैक्शन में हार गये तो गाँव से अपना दब-दबा सदा के लिये नतिराट हो जावेगा।'

'ठीक कहते हो भाई साहब तुम। देखा नहीं, उस दिन इन्सपैक्टर के सामने कितने जोश में बोल रहा था वह शफीक।' रघुवीरशरणसिंह ने कहा।

'जो यह प्रधान हो गया तो समझ लो कि आदमी का राज खत्म गया। अब जानवरों के दिन आये हैं।' नं.पै. भुवनेश्वर जी ने कहा, 'गाँव के घस-खोदे अगर हम पर हुक्म चलायेंगे तो इसके अलावा और कहा ही क्या जा सकता है।

'लेकिन आप लोग बेकार चिन्ता कर रहे हैं, रावेन ने कहा. 'मेरे होते आप ऐसा कभी नहीं देख सकेंगे, रामगढ़ पर हमारा हुक्म चलता आया है, हमारा चलेगा। जमींदार के खून ने न किसी की इजाजत आज तक माँगी, न आगे माँगेगा।' रही बात शफीक और कुमार की, सो हाथी के पैरों के नीचे जो आयेगा वह कुचला ही जायेगा।'

'लेकिन किस प्रकार ?' कृपालसिंह ने पूछा. कुछ बतायेगा भी कि यूं ही।'

रावेन कुछ देर तो शाँत रहा, परन्तु फिर धीरे से नीचे झुककर उसने अपनी योजना पिता के कानों में भर दी। सुनकर कृपालसिंह कुछ देर मौन रहे। कुछ देर बाद सिर ऊपर उठाकर बोले—बात तो तेरी ठीक है रावेन, लेकिन जो बात रुख बदल गई तो हम कहीं मुंह दिखलाने लायक न रहेंगे।'

'लेकिन बात क्या है वह ?' भुवनेश्वर बोले—

'लड़के का दिमाग हमेशा गर्म बात सोचता है,' कृपालसिंह ने कहा—'लेकिन इस समय तो हमें किसी भी प्रकार कुमार को अपने साथ मिलाना चाहिए। यदि वह काबू में आ जाय तो सब ठीक हो जाय।

'पर उसे काबू में किया किस प्रकार जा सकता है। दबाव तो वह कोई सह सकता ही नहीं। फिर ?' रघुवीरसिंह ने कहा।

पैसे से। इसकी मार न किसी ने सही है न सह सकेगा। यह वह दबाव है जिससे न दबना मुश्किल है।

'लेकिन कुमार --

'बेफिक्र रहिये हमारा बार कुमार और अन्य किसी में कोई भेद नहीं करता। पैसे का वजन हर जगह बराबर होता है।' कृपालसिंह ने सगर्व अट्टहास किया।

'अच्छी बात है, कोशिश कर देखिए। शायद काभयाबी मिल जाय। भुवनेश्वर ने कहा।

'हाँ चाचा जी,।' रावेन ने गर्वोक्ति की—कोशिश आप सब लोग करते रहिए किन्तु आखरी और बेमिसाल निशाने बाज गोली मेरी बन्दूक से ही निकलेगी।'

'अब यह तू जानै और तेरे पिता जी ! हम इतना ही जानते हैं कि कुमार को किसी प्रकार काबू में कर शफीक को हराना जरूरी है।' रघुवीर शरण सिंह ने कहा।

इसके बाद हुक्के और तम्बाखू की बैठक जमी रही। श्याम सिंह इस बैठक में नहीं आए थे।

—:o:—

मृदुला अपने द्वार पर अकेली खडी थी। सन्ध्या के झुरमुट अन्धकार में गाय-भैंसों की भाग दौड़ और बछड़े-कटरों की आवाजें सुनती वह रास्ते में देख रही थी। तभी धूल के उड़ते गुबार में से निकलता कुमार उनकी बैठक की ओर चला। धोती-कुर्ते की कुमार की पोशाक मृदुला के लिए नई न थी जो उसे इस समय आश्चर्य हुआ। आश्चर्य की बात थी कुमार को अपने घर आया देखना। वह स्तंभित-सी खड़ी रह गयी।

कुमार उसकी ओर देखे बिना ही बैठक में घुस गया। भीतर कृपाल सिंह थे। उसे देखते ही बोले—'आओ बेटे, बैठो।'

'कुछ न कुछ भेद जरूर है।' मृदुला ने अपने मन में सोचा और बैठक की दीवार से सट कर खड़ी हो गई

कुमार खाट पर बैठ गया तो धीरे से बोला—कैसे याद किया आपने। आज तो भाग्य खुल गये मेरे।'

कृपाल सिंह हंस पड़े। अपनी टोपी ठीक करते बोले-'अरे नहीं कुमार, भाग तो मेरे खुले हैं जो तू बात मान, मेरी चौखट में कदम

रखने को तैयार हुआ।'

'लेकिन काम क्या है ?'

'कुछ खास बात तो नहीं, वह ही ईलैक्शन का झगडा है भाई ! मैं चाहता हूँ कि अब कुछ तै ही हो जाय । यह रोज रोज की इल्लत अच्छी नहीं लगती।'

'लेकिन कैसे ? या तो आप ही बैठें या शफीक, एक को अवश्य हारना होगा।'

'कुमार !' चौधरी बोले —'तुम मुझे बैठने को कहते हो ! भला सोचो तो—'कहां राजा भोज और कहां गंगू तेली।' उस मुसलमान के छोकरे के सामने मैं बैठ जाऊ ? कुछ अकल की बात है यह ?'

'मैंने तो ऐसा कहा नहीं, मैं तो यह ही कह रहा था कि दोनों में से एक बिना लड़े हार मान ले तो समस्या सुलझ सकती है। अब चाहे आप मानें या शफीक ?'

'तो फिर उससे कहो कि वह बैठ जाये।'

'कौन ?'

'शफीक !'

'आप जानते हैं कि मैंने शफीक को खड़ा किया है। फिर मैं उससे बैठने को कैसे कह सकूंगा ?'

'क्यों कि तुम समझदार हो।'

'लेकिन इसमें समझदारी की बात क्या हुई ?' कुमार आहत-सा कह उठा—'अपने आदमियों को धोखा देना, यह कहाँ की समझदारी है?'

'तो हम तुम्हारे लिए गैर हैं। ऐं।' चौधरी साहब हंसे।

'नहीं तो, कोई ऐसी तो बात नहीं।'

'तब तो तुम्हें यह करना ही होगा कुमार, या तो उसे बैठाना होगा या उसका साथ छोड़ना पड़ेगा ?'

'लेकिन मुझे इससे लाभ,' कुमार ने उनकी थाह लेनी चाही, 'मुझे इसकी कीमत क्या मिलेगी ?'

'तुम जो मांगोगे ?'

'२००० रुपये'

'२००)दूंगा,'चौधरी बोले—तुम गाँव वालों पर हमारे कितने अहसान हैं, मालूम है ? हमारी बदौलत ही यह रामगढ़ अब तक बसा है वरना कभी का उजड़ जाता। तुम्हारे दादे-पर दादे हमारी रोटियों के आसरे जिये हैं। वह तो तुम—

कुछ भी कहिए, २००)बहुत कम हैं ?' नं. पै.'५००)मिल सकते हैं कुमार !' चौधरी की आशा-लता पल्लवित हो आई थी।

पीछे दिवार से सटी खड़ी मृदुला की आँखों में पानी आगया था।

'यह भी कम है चौधरी।' कुमार ने कहा, 'अगर अपनी सारी जमीन गांव वालों के नाम करदो तो मैं तुम्हारा साथ देने को तैयार हूं।'

'मुझसे मजाक कर रहे हो कुमार !' चौधरी क्रोधित हो उठे।

'आप भी तो मुझसे मजाक कर रहे थे,' कुमार की नस नस फड़क उठी, ५००) के लालच में सारे गाँव की गुलामी आपकी चौधरात को लिखदूं। वही जो बाप-दादों ने की है। माफ कीजिये, मेरे बस की बात नहीं।'

'सोच लो कुमार' चौधरी ने कहा, 'फिर कहीं ऐसा न हो, 'झुनिया पीहर की रही न ससुराल की।'

'सब सोच लिया है, कुमार ने चलते हुए कहा, रुपयों की जमीन खरीद कर रखिए। रावेन के काम आयेगी।' वह बैठक से निकल गया।

मृदुला हंसती घर में भागी जा रही थी।

चौधरी बैठे सोच रहे थे— 'पैसे का वजन एकसा कैसे नहीं रहा।' उसके दवाव में कमी आगई थी।

—:o:—

निर्वाचन का केवल एक ही दिन शेष रह गया था। गाँव और शफीक की प्रसन्नता की सीमा न थी। सब एक स्वर से शफीक के साथ थे। कुमार और विद्या सरोज के इस अमूल्य सहयोग की प्रशंसा करते अघाते न थे। इसी प्रकार उल्लास और आमोद-प्रमोद में निर्वाचन के ठीक समय की प्रतीक्षा हो रही थी।

सांप को यदि,केवल इसलिए कि वह काटेगा, लाठी मार दी जाय तो प्राण बचाकर भागने के बाद सर्वदा अपने प्रतिकार की घड़ी वह देखा करता है। रावेन् एक ऐसा ही साँप था। कुमार ने न चाहते हुए भी उसे विषधर कह कर दुत्कारा था। विषधर ने अपने अंग-प्रत्यंग के गरल को संचित किया और—— ——

विपक्षी वह वाम पंथी-चाहे कितना भी कमजोर हो, अपने अन्त समय तक भी आशा और उत्साह से परिपूरित रहता है। 'किसने देखी है बैठते हुए ऊंट की करवट'—उनके विश्वास का आधार होता है।

निर्वाचन के ठीक २४ घंटे पूर्व रावेन ने एक जनरल मीटिंग की। जब काफी लोग जमा हो गये तो इधर उधर की बातें करने के बाद उसने सुशो की अपने नाम लिखी गईं चिट्ठियां पढ़ कर लोगों को सुनाई। सब कह चुकने के बाद वह बोला—'ये वे पत्र हैं जो सुशो ने कुमार के नाम लिखे हैं। यदि किसी को विश्वास न हो तो देखलो, इन पर सुशो

का नाम।' और नीचे लिखे सुशो के नाम को सब लोगों को दिखा दिया।

'लेकिन इसका क्या सबूत है कि यह कुमार बाबू के नाम लिखे गये हैं।' एक युवक ने उठकर प्रश्न किया।

२०) के मूल्य पर इसका प्रबन्ध रावेन ने पूर्वतः ही कर लिया था। एक कहारिन को, जो सुशो के घर बरतन मांजती थी, उसने अविलम्ब प्रस्तुत कर दिया, कहारिन ने सबके आगे हाथ जोड़ते हुए सफल कलाकार की भांति अभिनय किया—मो से का पूछो हो सरकार, मैं तो अपना काम करै थी। सुशो ने बोला कुमार बाबू को पाती दे आ : मैं दियाई। बस.

'सुन लिया आप लोगों ने!' रावेन ने कहना प्रारम्भ किया, 'आप लोगों के चरित्र और आदतों को सुधारने वाले अपने आप इस प्रकार लुक-छिप कर काम करते हैं। अब सोचिए कि इनकी बातों में आकर आपका क्या होगा। अपनी तफरीह और मजे के लिए सारे गाँव की उन्नति का ढोंग करने वाला किस तरह आप लोगों के काम आ सकेगा, कुछ समझ में नहीं आता।'

सब आदमी स्तब्ध रह गये। कुमार और शफीक दोनों वहाँ उपस्थित थे। सुशो के पिता तो रावेन की बात शुरु होते ही चले गये थे। अब जब सबके साथ मिल कर शफीक की दृष्टि कुमार पर पड़ी तो आँखें झुका वह चुपचाप चल दिया। आत्म ग्लानि और क्षोभ से उसका हृदय चीत्कार कर उठा— सुशो के पिता को जाते समय उसने देखा था। देखा था—गरीबी और बेनियती दोनों का अधिकारी अपनी बेटी की इज्जत को पगड़ी मान, उसे धूल में पड़ा देख कितना दुखी होता है। उसकी धमनियों में किस रक्त का संचार होता है?

'मैं अपनी निर्दोषिता का कोई भी प्रमाण इन्हें नहीं दूंगा,' उसने निश्चय किया और अपने घर चला गया।

सबके शांत होने पर रावेन ने फिर कहा, 'उस सरोज के बारे में

भी यही बात है। कन्या पाठशाला और शिक्षा के पीछे उसकी जवानी नाचती है और कुमार देखता है।'

कुछ देर रुक कर उसने फिर कहा, 'मैं आपको क्या क्या बताऊं? उस दिन कुमार के बीमार होने पर मधु जब सोम के साथ उसके घर गई थी तो अपनी आंखों से उसने कुमार और सोम ..।' कहते कहते वह इस प्रकार रुक गया मानो किसी हार्दिक पीड़ा से विकल हो।

रावेन ने कहने को यह कह दिया किन्तु फिर उसकी दृष्टि वहां बैठे श्याम सिंह की ओर न उठ सकी। श्याम सिंह ने एक बार उसकी ओर आग्नेय नेत्रों से देखा और फिर जड़-प्रतिमा से शांत बैठे रहे।

मीटिंग समाप्त हुई तो दो आदमियों की पगड़ी उछाल अपनी विजय -योजना की प्रसन्नता में गीत गाता रावेन घर की ओर चला। श्याम-सिंह के कानों में अनचाहे उसके स्वर पड़ रहे थे। पीछे-पीछे ही वे भी घर की ओर चले।

निर्वाचन हो गये। उस समय के बाद तीनों पूर्व उम्मीदवार फिर अपने-अपने निश्चय पर आडिग बढ़ गये। दबाव और चौधरात फिर प्रबल हुई और बहुमत से कृपाल सिंह प्रधान निर्वाचित हो गये।

निर्वाचन के उपरान्त जब कुमार घर आया तो उसकी मनःस्थिति अत्यन्त अस्त-व्यस्त थी। मृदुला और सुशो के चित्र क्रमशः उसकी स्मृति में आते और वह बड़बड़ा उठता—

'आदर्श, कल्पना और सेवा सब भ्रम हैं। सत्य, श्रम और तपस्या सब पाप-मार्ग के प्रतीक हैं और— ?

'झूठ' विश्वासघात तथा शोषण पुण्य पथ के। जिसे सब प्यार कहते हैं वह हृदय की भ्रमावृत भावना मात्र है। एक मोहक गरल-चषक !

गांव के लोगों का पुण्यमार्ग आज उसके सामने स्पष्ट ही आ गया था। उनके अपने स्तर से ऊंचा उठने का प्रयास करने वाला उनके पथ का राही न था, वह था पाप मार्ग का पथिक ! कुमार वह पथिक और उसका मार्ग पाप-पंथ प्रमाणित हो चुका था।

रावेन के दोषारोपण के पश्चात शफीक कुमार से कुछ विशेष न बोला था। निर्वाचन के समय केवल कुछ आवश्यक कार्यों में ही उनकी मुठभेड़ हुई, अन्यथा कुमार ने अनुभव किया कि शफीक उससे कुछ खिचा-खिचा-सा है। उसे लगा जैसे शफीक के हृदय में भी भ्रम घर कर गया हो। पथिक और पथिक में से एक खो गया। उसे दिखाई दिया—उसका पथ शून्य और निर्जन है। भयानकता और उपेक्षा घृणा की सह चारिणी बन उसके बटोही-जीवन के साथी हैं। वह—वह

सब ओर से ध्यान हटा अन्त में वह फिर सुशो और मृदुला के चित्रों को कल्पलोक में देखने लगा। वह सोचने लगा, 'मैं हार गया। जीवन-संग्राम में दो सुकुमार यौवनमयी अपने अस्तित्व से मेरा पथ रुद्ध कर गईं। दो—पूर्णतः विभिन्न विचार कल्पनाओं की प्रतिमाएं—दो रमणीं।

एक सुशो थी—जिसने पाप के पथ पर भी उसके हृदय को पहचाना, कल्पनाओं को जाना और भाव-विटपों के सुमन चुन यथा-शक्ति अपनी माला में पिरो इस प्रकार उसके सामने फेंक दिये कि शूल

बन स्वयं उसका पथ कंपकंपा उठा। रो-रो कर, सिसक-सिसक कर स्वयं उसे पतन के द्वार पर खड़ा कर जो वह चाहता था, दे दिया।

दूसरी मृदुला थी—पुण्य-पथ के फूल-सी जो उसके पाँवों को लुभाती चली गई। सारल्य, सत्य और विश्वास की सीमाओं में जो उसके डगमगाते विश्वास को थपथपाती रही। किन्तु मंजिल की अन्तिम भेंट में चुपचाप जो उसके कण्ठ में उन्हीं कमनीय हाथों से गरल उड़ेल गई जिन्होंने कभी अमृत की ओर संकेत किया था। स्नेह—प्रेम—

वह और अधिक न सोच सका। दवात कलम और कागज उठाकर वह लिखने बैठने गया। तरल आंसुओं की दो बूंद कागज पर गिर स्नेह-समर्पण कर गईं तो उसने लिखना प्रारम्भ किया—

'कल के साथी !

कई वर्ष बाद तुमसे एक काल्पनिक भेंट कर एक कहानी सुना रहा हूं। रोचक तो वह कदाचित तुम्हें न लगे किन्तु यदि कुछ भी हृदय लगा कर पढ़ा तो, विश्वास करो, होगी आँसुओं से भीगी हुई। सुनो '

—:०:—

अमरूद के एक पेड़ के नीचे दो बालिकाएं बैठीं ऊपर की ओर देख रही थीं। आँखों में चाह और मुख पर उनके जिज्ञासा थी। पेड़ पर एक लड़का चढ़ा था। अन्य निकटवर्ती वृक्ष भी लड़कों से लदे थे।

'हमें भी अमरूद दो न !' उनमें से एक बालिका ने कहा।

'देता हूं बेला, तोड़ लूं पहले।' पेड़ पर चढ़े लड़के ने उत्तर दिया और अपने सिर की ओर लगे एक अमरूद पर लपका।

अमरूद ऊंचे पर था। लड़के को कुछ अधिक उचकना पड़ा। किन्तु ज्योंही उसका हाथ अमरूद पर पहुचा, पाँव के नीचे की शाखा खिसक गई। वह निरुपाय-सा पृथ्वी पर आ गिरा। अधिक चोट तो नहीं आई किन्तु उसके माथे में पत्थर लगने के कारण रक्तस्राव हो चला।

बेला ने झट उठकर उसका सिर अपनी गोद में रख लिया और चिल्ला उठी।

दूसरी बालिका ने तुरन्त अपनी धोती की खूंट फाड़कर उसके माथे पर पट्टी बांध दी। लड़का उठ बैठा तो वह बोली—ठीक हो कुमार ?

'हाँ मधु।' कुमार ने कहा और बेला के आंसू पोंछ दिए। 'तू रो क्यों रही है ऐ।' उसने पूछा।

'तेरे चोट जो लग गई।'

'अरे वाह !, यह भी कोई रोने की बात है। मेरे तो रोज इसी तरह चोट लगती है।' लड़का हंस पड़ा।

तभी 'टन-टन' की ध्वनी हुई और लड़के पेड़ों से उतर उतर कर भाग लिए।

'चलो कुमार' मधु बोली, 'घंटी बज गई।'

'चलो बेला' कुमार ने कहा और तीनों स्कूल की ओ चल दिए।

—:o:—

तीन दिन बाद—

मधु अपने घर से परांवठे और गुंजिया लाई था। घंटी बजते ही कुमार से बोली—चलो बाग में चलें। कुमार ने बेला को आवाज दी और तीनों बाग में जा पहुचे। मधु ने अपना सामान खोला और तीनों खाने लगे।

'तुम कितनी अच्छी हो मधु,' बेला बोली—जो कुछ भी घर से लाती हो, हमें जरूर खिलाती हो।

'तुम भी तो मेरे ऊपर 'मुन्शी जी' की कम्मचें खाती हो। पता है की दफै पिट चुकी हो मेरे लिए ?' फिर कुमार की ओर देख वह बोली—कुमार तो हमारे लिए जानकी भी परवाह नहीं करता। देख उस दिन अमरूद के पेड़ पर से गिर गया था।

'हम तीनों इसी तरह एक दूसरे से रोज २ मिलते रहें तो कैसा बढिया काम हो ? क्यों मधु ?'

'और क्या कभी अलग भी हो सकते हैं।'

कुमार ने कहा—क्या बावलेपन की बात करती है ?

'बड़े होकर भी ?' बेला ने पूछा।

'अरी हां,हां। बड़े होकर भी ! बड़े होकर कौन सी आफत आ जायेगी ? हम तो हमेशा साथ २ हैं और साथ ही रहेंगे।'

यह अच्छी बात है कुमार, तू कभी हमारा साथ नहीं छोड़ेगा ? बेला ने फिर पूछा।

'और क्या ! ये भी पूछने की बात है।' कुमार ने कहा।

'अब तो आगया यकीन ?' मधु ने चुटकी ली, 'धोती पकड़ो खेंकर इसकी। कभी भाग जावे ।'

'आग गया।' बेला ने कहा, 'इसमें मज़ाक की क्या बात है री इसेई कवों कै है, तू भगेगी तो तेरी भी कौली भरने पड़ेगी।'

'मुझे तो ऐसा लगे है तुम्हें अभी कौली भर कै मदरसे ले जाना पड़ेगा।' कुमार ने कहा, 'ख्याल है कुछ मुन्शी जी की कम्मच का। उल्टे हाथ पर पड़ैगी।'

तीनों हंसते हुए स्कूल की ओर चल दिये। राह में उनकी हंसी मज़ाक और दंगा बराबर जारी था।

एक साल बाद—

—:o:—

कुमार बोला, और मधु कक्षा में बैठे पढ़ रहे थे। मास्टर साहब ने कम्मच हाथ में ली और उसे हवा में घुमाते हुए पूछा सरिता माने—?

सब लड़के चुप हो गये।

'तुम बताओ कुमार।' मास्टर साहब ने कहा।

'जी याद नहीं ।' कुमार खड़ा हो गया ।

'मधु ।' मास्टर साहब ने फिर पुकारा ।

मधु चुप चाप खड़ी हो गई ।

'गोपाल !'

.........!

'नाथे !'

'.........'

'भादो !'

... .

'नदु' बेला ने खड़े होकर कहा और बैठ गई ।

'चपत लगाओ इन सबके गाल पर !' मास्टर साहब ने आदेश दिया ।

'अच्छा ! कितने २ ? बेला हंसते हुए बोली ।

'दो दो ।'

'बेला ने सबके गालों पर चपत लगाए । अन्त में मधु और कुमार खड़े थे । बेला उनके पास जाकर रुक गई । चपत नहीं लगाए ।

'लगा चपत । खड़ी क्यों है ?' मास्टर साहब ने कहा ।

'मैं नहीं लगाऊंगी ।'

'क्यों ?'

'मर्जी मेरी ।'

'अच्छी बात है । तो तुम इसके गाल पर चपत लगाओ मधु !' मास्टर साहब ने सक्रोध आदेश दिया ।

'जी नहीं' मधु ने उत्तर दिया ।

'तुम लगाओ कुमार इन दोनों की कमर पर पांच पाँच मुक्के ।'

'हम में से कोई किसी को नहीं मारेगा ।' कुमार ने सदर्प कहा ।

'यह बात है तो लाना भादो खजूर की एक कम्पच ।' मास्टर साहब का क्रोध चिल्ला उठा ।

'इसके बाद तीनों की खूब पिटाई की । लड़के बैठे कह रहे थे— 'पिटे तो क्या हुआ ? अपने साथी को मारा तो नहीं ।'

दो वर्ष पश्चात्—

कुमार मधु और बेला चौथी कक्षा में पढ़ रहे थे । एक दिन बात-बात में वे मन्दिर के पास जा निकले । बाहर चबूतरे पर बैठकर बातें करते-करते बेला बोली—आज मां ने एक कहानी राजा विक्रमादित्य की हमें सुनाई थी ।

'क्या था उसमें ?' मधु पूछ बैठी—

'जब राजा विक्रमादित्य मुसीबत में दिन काटते फिर रहे थे तो एक बनिये के यहां ठहरे। वहीं पर उनका बनिये की बहिन से प्रेम हो गया।

'फिर' कुमार ने पूछा—

'राजा जी ने उसे अपनी अंगूठी दी और कहा कि आज से हम एक दूसरे के साथ रहेंगे।'

'लेकिन गवाह कौन है इस बात का?' बनिये की बहिन ने पूछा।

'राजा उसे मन्दिर में ले गए। वहां जाकर भगवान के सामने उन्होंने कहा—आज से हम एक दूसरे के पति-पत्नी हैं। हम वायदा करते हैं कि दुख, खुशी, मुसीबत और मौज, सब बातों में हमेशा एक दूसरे के साथ रहेंगे।'

'फिर?' मधु ने पूछा।

'फिर राजा के ऊपर एक इलजाम लगाकर उसे सजा दिलवाई गई। राजा जी बड़ी-बड़ी मुसीबतों में कई साल बिता कर अपनी राजधानी में पहुंचे। वे फिर महाराज हो गये।'

'और बनिये की लड़की।'

'उसे भी बहुत दुख दिए गए। आखिर में वह घर से भाग निकली और एक ऋषि के पास बन में भटकती हुई पहुंची। राजा जी ने उसे ढूंढ़ने के लिए दूर-दूर तक आदमी भेज रखे थे। जब वह मिल गई तो उसे बुला कर उन्होंने शादी की! बस।'

कहानी सुन कर बालकों के मन में कौतूहल जागता है। वे सोचते हैं—'जो हम भी इतने ही अच्छे होते जैसे वे थे, तो कितना अच्छा होता।' कल्पना और उत्साह की उड़ान कभी-कभी क्रियान्वित होती है और कहानी सत्य का निर्माण करती है।

यही कल्पना और सत्य का अन्तर मधु, कुमार और बेला के हृदय की जिज्ञासा बन गया। उनके मन में भी वचन और राजा जी की बात

कुछ गहरी खुशी। कुछ देर चुप रहने के बाद मधु बोली, 'एक काम करो बेला, चलो हम भी मन्दिर में अन्दर चल एक दूसरे को कुछ बचन दें।'

'चलो।' बेला बोली, 'तुम्हारी क्या मर्जी है कुमार ?'

'जैसी तेरे और मधु की' कुमार ने उठते हुए कहा और तीनों मन्दिर में घुस गये।

मूर्ति के सामने पहुंच कर बेला बोली—क्या बचन दें अब ?

तीनों सोच में पड़ गये। कुछ देर बाद मधु ने कहा तू और कुमार दोनों यह बचन दो कि आपस में पति-पत्नी रहोगे।

'चल !' बेला लजा गई, 'यह तो शादी में कहेंगे।'

'जा री, रही तू भी गंवार की गंवार।' मधु हस पड़ी,

'यहीं तो बचन देना है।'

'पर शादी तो मां-बाप करते हैं।' बेला ने फिर संशय किया।

तो तेरे ख्याल से राजा विक्रमादित्य बेवकूफ थे। ऐं। उन्होंने तो अपनी शादी का बचन आप दिया। मधु ने हंस कर कहा।

'पर ' '

पर वर क्या करती है, तू कुमार को चाहती नहीं क्या ?' बेला का वाक्य अधूरा छोड़ मधु ने पूछा।

'चाहती हूं।' उसने धीरे से कहा, 'पर तू भी तो चाहती है।'

'तू तो निपट, फिर मैं भी कहूंगी।' मधु ने तेजी से कहा, 'कहती है कि नहीं।'

बेला ने कुमार का हाथ पकड़ लिया।

कह !' मधु बोली।

'मन में कह रही हूं।'

'मैं भी।' कुमार ने कहा।

दोनों ने हाथ छोड़ दिए तो मधु ने पूछा, 'क्या कहा बेला तैने ?'

'जो राजा जी और बनिए की बहिन ने कहा था।' बेला हंस पड़ी।

'लो, अब मैं भी वचन देती हूं' मधु ने कुमार और बेला का हाथ पकड़ते हुये कहा—'मैं भी हमेशा तुम दोनों के साथ रहूंगी।'

मन्दिर से बाहर निकलते तो तीनों हँस रहे थे। मधु ने कुमार से पूछा, 'शादी कब होगी अब !'

जब पढ़ लिखकर बड़े हो जायेंगे तब। पर किसी से कहियो मत।'

इसके बाद तीनों अपने-अपने घर चले गये।

--:o:--

दिन बीतते गए। स्कूल की पढ़ाई समाप्त हो गई और मधु तथा बेला घर पर रहने लगीं। कुमार निकट गाँव के स्कूल में पढ़ने जाता; किन्तु तीनों सुबह शाम मिलते और खेलते। इसी प्रकार खेल ही खेल में एक दिन ———

कुमार मधु और बेला तीनो कनेर खेल रहे थे कुमार ने तीन कनेर बेईमानी से जीत लीं। बेला और मधु को क्रोध आगया। तेजी में बेला बोली तुमने बेईमानी क्यों की ?

'झूठ बोलती है,' कुमार ने कहा, 'अपने आप बेईमानी करती है और नाम मेरा लेती है।'

'झूठा कहीं का !' बेला कह उठी, 'शर्म नहीं आती तुझे।'

'बकवास करती है,' कुमार ने झपट कर उसके गाल पर एक चपत लगाया और चिल्ला उठा --खबरदार जो कोई भी बात आगे से कही।

'बेला तो चुप हो गई परन्तु मधु कुमार से चिपट गई। मार पीट में कमजोर गाली देता है। उसकी शक्ति है। मधु ने भी अपनी शक्ति का पल्ला पकड़ा और गालियाँ देने लगी।

नहीं मधु गालियाँ मत दे---बेला ने कहा और चल पड़ी।

कुमार तेजी से मधु को झटक कर चल पड़ा।

'खबरदार जो कभी यहाँ आया तो ?' मधु चिल्लायी

'नहीं मधु ऐसा मत कहो।' बेला कहती---परन्तु कुमार चला गया था।

जीवन में प्रथम बार आज झगड़ा हुआ था---

बाल हठ और प्रेम दोनों प्रसिद्ध है। प्रेम कोई करने लगे तो रात दिन साथ रहता है। हठ पर आ जाय तो महीनों तक बोलता नहीं---कुमार,बेला और मधु को फिर दो वर्ष व्यतीत हो गये। इसी बीच में कोई किसी से नहीं बोला। जब भी कोई किसी को देखता चुप चाप निकल जाता। प्रत्येक की इच्छा एक दूसरे से बोलने की होती परन्तु हठ विवश कर देती। मौन अटूट रहता।

कुमार की गांव की पढ़ाई समाप्त हो गई। अपने पिता जी के साथ दिल्ली जा रहा था। पिता जी ने बतलाया कि उसे वहीं रहना होगा। एक वर्ष से पहले लौटने की आशा नहीं। कुमार देहली से जाने से पूर्व बेला तथा मधु से मिलने के लिए तड़फ उठा। जाने से पहले मिल लेता तो---उसके अंर्तमन ने कहा---

हठ सामने आकर बोला --यह मेरा अपमान होगा---

'और मेरा---उसे लगा जैसे मन्दिर का बचन दुहाई दे रहा हो।

'मैं मिलूंगा' वह बड़बड़ा उठा---बिना उनसे मिले दिल्ली में मेरी

पढ़ाई चल न सकेगी।' और उसके पांव बेला के घर की ओर चल पड़े।

मधु और बेला बैठी गन्ने खा रही थीं।

कुमार को आते देख बेला बोली—बुलाले मधु उसे।

'नहीं' मधु ने कहा—आना होगा तो अपने आप आयेगा।

लेकिन हमने तो सदा एक दूसरे के साथ सदा रहने का वचन दिया है। बेला बोली—

'तो' ——···बेला तभी कुछ कहने को थी कि तभी कुमार आकर बोला—

मैं कल दिल्ली जा रहा हूं मधु, एक बार माफी मागंना अच्छा समझा।

मधु ने उसकी ओर देखा तो वह नीचे को दृष्टि कर बोला—'मुझे याद है मधु, तुमने मुझे कभी भी अपने पास न आने को कहा था। लेकिन कुछ ऐसा था जो मैं चला आया। माफ कर देना।' उसके स्वर में रुदन की ध्वनि थी।

मधु काँप सी गई। पूर्व इसके कि वह कुमार से कुछ कहती। परन्तु कुमार इतने में ही अपने घर की ओर चल पड़ा।

'बेला ' मधु ने कहा कि हम हार गये। रोको उसे। दोनों ने झपट कर कुमार के हाथ पकड़ लिये—खेलोगे नहीं हमारे साथ मधु बोली—

'नहीं मधु,' कुमारने रूंआसे स्वर में बोला मैं बेईमान और बेशर्म हूं।

'हमें माफ करो कुमार बेला ने कुमार के पांव पकड़ लिये।' तुम्हारे लड़ने के बाद पता है मैं कितनी रोई थी।

कुमार ने उसका हाथ पकड़ कर उठाया और बोला—रोई क्यों बेला ? मैं तो बेशर्म और···

'चुप रहो कुमार अब उन बातों को मत याद करो।' मधु ने कहा, चलो बैठ कर याद करेंगे।

'चलो' कुमार ने उत्तर दिया और तीनों चबूतरे पर बैठ गये।

'तुम कल जरूर आओगे कुमार' मधु बोली रुक नहीं सकते किसी प्रकार ?

'मुझे जाना है मधु, पिता जी कहते हैं कि फिर दाखिला नहीं मिलेगा।'

'तब तो चले ही जाना चाहिए। पढ़ाई तो जरूर करनी है।' बेला ने धीरे से कहा।

'क्यों ? पढ़ लिख कर शादी जो करनी है, इस लिये।' मधु मुस्करायी।

बेला अब पूर्णतया बालिका न रही थी। उन तीनों की ही अवस्था इस समय १३, १४ वर्ष के लगभग थी। रवीन्द्र नाथ द्वारा निर्देशित वही आयु जो जीवन की सबसे विकट अवस्था है। इधर-उधर की सोचने का कुछ आभास उन्हें होने लगा था। मधु की बात सुन बेला ने उसकी भाव भंगिमा पर ध्यान दिया तो लजाती हुई बोली—तू हर समय मजाक ही करती है।

शादी क्या होगी मधु ? दो दो वर्ष से तो तुम मुझसे बोली नहीं। वह तो हार कर मैं ही चला आया वरना''।'

'भूल जाओ न उस बात को' बेला बिलकुल उसके पास आकर बोली'''मैं तुम्हारी कसम खाती हूँ कि कभी किसी बात का कड़ा उत्तर न दूंगी कभी तुमसे न लड़ूंगी।'

'हाँ कुमार, अब तो हमें एक दूसरे से कभी न लड़ने की प्रतिज्ञा कर ही लेनी चाहिये। इस तरह दो दो वर्ष तक न बोले तब तो चल गया काम।' मधु ने कहा।

'आओगे कब ?' बेला ने पूछा।

'करीब ५, ६ महीने में।'

'चिट्ठी डालते रहना,' मधु ने कहा, 'नहीं तो मुझे तो जो दुख होगा सो होगा ही लेकिन यह मेरी जान खा लेगी।'

'चिट्ठी तो डालूंगा पर जवाब भी दोगी तुम ?'

'हाँ,' मधु ने गर्दन हिलाई।

कुमार चला गया जाते समय दोनों ने फिर जल्दी पत्र डालने की बात कही और जाने के बाद घन्टों बैठी न जाने क्या २ सोचने लगी।

—:o:—

एक वर्ष बीत गया। कुमार दिल्ली जाकर अपने अध्ययन में पूर्णतः लीन हो गया। पिता जी की इच्छा और पढ़ाई का भार, दोनों मिलकर उसे गांव आने से रोके रहे। हृदय और भावनाओं पर नियन्त्रण किए बुद्धि के द्वार वह खड़ा रहा। परीक्षाएँ हुई और वह अच्छे नम्बरों से अपनी कक्षा में सफल हुआ।

इस बीच मधु और बेला के पास २-३ पत्र उसने डाले थे। जब भी समय मिलता वह पत्र डालने की बात सोचता किन्तु सोचते-सोचते समय निकल जाता और वह ऐसे ही बैठा रह जाता। गांव की याद पल भर की आज्ञा माँग कर उसके मन में घुसती और घंटों तक वहाँ बैठी रहती। मधु-बेला का एक ही पत्र पूरे वर्ष में उसे प्राप्त हुआ था, 'क्यों वे पत्र नहीं डालती हैं ?' वह सोचता, 'कुछ बात दीखती है।'

किन्तु बुद्धि का द्वार तभी खुलता है और उस में से आवाज आती 'सब कुछ ठीक है कुमार, बस तू अपने आप को और ठीक रख।'

बेला और मृदुला प्रतिदिन आपस में मिलतीं। दिन भर के काम की बातें होतीं और कुमार की स्मृति। प्रतिमा का अनावरण। अतीत का कला–चितेरा वर्तमान के चित्र बनाता २ धीरे-धीरे भविष्य की ओर उन्मुख होता तो वे कह उठतीं कब आयेगा कुमार, ? अब तो काफी दिन हो गये।

इसी प्रकार की कल्पनाओं में लीन एक दिन बेला का मन कुछ उद्विग्न-सा हो गया। भास्कर को अपनी मन्द–मन्द गति से गोधूली की ओर जाते देख वह सोचने लगी—

—क्यों दिन इतना लम्बा होता जारहा है आज ? इस सूरज को भी पता नहीं, क्या सूझी है कि छिपता ही नहीं।

ज्यों ही धूल का गुब्बार उड़ा पशुओं ने मार्ग और क्षितिज को अदृश्य-सा किया, सूर्य ने संध्या को आलिंगन बद्ध कर एक चुम्बन ले लिया। दृष्टि उठा कर जग ने पश्चिम की ओर देखा तो उसके कपोलों की मिटती लाली अब भी कुछ शेष थी। लज्जामयी के मस्तक पर टीका और सिर पर फूलों के गजरे लगे थे। बेला की दृष्टि जो उस पर पड़ी तो दौड़ी हुई मधु की ओर चली।

'जल्दी आना !' माँ ने कहा और वह लपकी चली गई।

'क्या बात है ऐ ! आज बड़ी घबरा रही है।' मधु ने उसे चिन्तित देख पूछा।

बेला उसका हाथ पकड़ बाहर चबूतरे पर खींच लाई और बैठने पर बोली, 'आज मैंने बड़ा बुरा सपना देखा है।'

'क्या ?'

'मैंने देखा कि कुमार हम दोनों से लड़कर भाग गया। हमने उसे खूब गाली दी और नोचा खसोटा तो उसने जाते हुए कहा मैं आज

से जो कभी दिखाई दूं तो समझ लेना मुर्दा हूं। जिन्दा नहीं दीखूंगा।'

'फिर!'

'फिर वह भागता-भागता एक बहुत बड़ी नदी के किनारे पहुंचा। हम आवाज लगाती उसके पीछे-पीछे भाग रही थीं। नदी पर पहुंच उसने एक बार मुड़ कर पीछे की तरफ़ देखा और कहा—तुमने मुझे दुखी किया है, इस लिये

'और और बता ना?' मधु ने शीघ्रता की।

'फिर हमने काफी आवाजें दीं पर वह नदी में कूद गया। जब तक हम किनारे पर पहुचे, उसका कहीं पता न था। हम दोनों वहीं पर रोने लगीं। तभी मेरी आँख खुल गई।

'ले मधु!' विनय ने उनके पास आकर कहा, वे दोनों अभी भी मुंह लटकाये चुपचाप बैठी थी।

'क्या है?' मधु ने उसकी ओर देखा।

'चिट्ठी भय्या की!' उसने कहा।

'सच!' दोनों उठ खड़ी हुई। मुख पर हर्ष की रेखाएं स्पष्ट हो आई थीं। मधु ने हाथ बढ़ा कर पत्र ले लिया और खोल कर पढ़ने लगी। पढ़ते-पढ़ते वह हर्ष से फूल फूला उठी तू रोज ऐसे ही सपने देखा कर बेला, रोज ऐसी ही कहानी-सी सुनाया कर!' और उसने विनय को उठा कर गोदी में ले लिया।

'बात क्या है री, क्या लिखा है इस चिट्ठी में?' बेला ने पूछा।

मधु ने चुपचाप उसकी ओर चिट्ठी बढ़ा दी। खोल कर उसने पढ़ना प्रारम्भ किया। लिखा था-

मधु-बेला!

अधिक तो मिलने पर कहूंगा। इस समय तो इतना ही काफी है कि एक सप्ताह के भीतर ही भीतर मैं आ रहा हूं।

तुम्हें 'राम राम' कहता—

राम

पढ़कर बेला भी प्रसन्नता से खिल उठी। मधु की ओर संकेत कर कहा --फूलों की माला बनाकर रखा करेगी मधु हम रोज, जिस दिन भी वह आएगा, पहना देंगी।

'हां, तू माला पहना, ना मैं दोनों को एसे ही देख लिया करुंगी।'

'देखेगी क्यों रे, तू तो उसके गले में अपने आप ही जा पड़ना।'

'चल,' मधु ने कहा, 'अभी से बहकने लगी। अभी तो आया भी नहीं वह।'

'आने पर ही क्या करूंगी री!'

'क्यों अब इरादा नहीं क्या?' मधु ने हंस कर पूछा,-

'मन्दिर का वचन भूल गई।'

'पागल! ऐसे इरादे भी कहीं बदलते है। सच कहती हूं मधु, उस वचन का ख्याल आते ही हृदय प्रसन्नता से खिल उठता है।'

'और अगर चाचा और चाची ने मना किया, तो?'

'पड़े! मुझे इसकी चिन्ता नहीं।'

'जो कुमार ही मना कर दे तो?'

'तो मैं अपने आपको जीने से ही मना कर दूंगी।'

'चुप री! अशुभ बात मत कह। कुछ हो गया तुझे तो क्या जबाब दूंगी कुमार को?'

'फिर तू ऐसी बात पूछती ही क्यों है?' बेला ने मधु को अपनी गोदी में भर लिया।

दोनों देर तक बैठी बातें करती रहीं और फिर हंसी खुशी कल मिलने का वायदा कर विदा हुईं।

---:०:---

दिल्ली से आते ही कुमार सीधा बेला और मधु से मिलने गया। वे पहले ही तैयारी किये बैठी थी। ज्यों ही उसने चबूतरे पर पैर रक्खा, बेला ने पीछे से उसके गले में माला डाल दी। मधु सामने से बोली 'नमस्ते कुमार'

कुमार ने मधु की नमस्ते का उत्तर दिया और पीछे मुड़ कर बेला को गले लगाता बोला, 'बड़ी छिपती है बेला, क्या बात है ?'

मधु की मां घर के दरवाजे से यह देख रही थी। वहीं से बोली। इधर चल री मधु, क्या कर रही है वहां ?

मधु ने एक बार कुमार की ओर देखा और फिर बेला को इंगित करती चली गई।

'तू भी आ बेला !' मां की आवाज कुछ कर्कशता लिये फिर सुनाई दी।

'अच्छा ताई जी।' बेला ने कहा और कुमार से फिर मिलने का वायदा कर चली गई।

कुमार अकेला रह गया तो उसने अपने चारों ओर देखा। क्षण भर पूर्व की घटना को सोचा और चिन्तित-सा घर की ओर चल दिया। हृदय में उसके रह रह कर एक आशंका उमड़ती आरही थी।

गीत स्वयं लय का प्रतीक है। आनन्द, उल्लास और प्रेरणा की अलौकिकता का स्रष्टा। किन्तु है फिर भी पीड़ा जन्य ! उसकी सर्वाधिक सुन्दर और परमानन्द दायक कड़ियां भी वे ही हैं जिनका शब्द-शब्द वेदना के स्वच्छ सरोवर में स्नात हो। सबसे अधिक सुनहरापन उसके रचयिता की अनन्त पीड़ा का प्रमाण ही है, अन्यथा कुछ नहीं।

कुमार और मधु-बेला के जीवन-गीत की भी उन्हीं कड़ियों का निर्माण अभी हुआ था जो सरल थीं, जिनमें शब्द और छन्दों के साथ साथ तुकबन्दी की गई थी। कविता का वास्तविक स्वरूप तो उस दिन के पश्चात् ही सामने आया जब बेला और मधु को मधु की माँ की शंकालु दृष्टि ने कुमार के साथ देखा, उनके यौवन के विकास और सारल्य में द्वंद हुआ। सुनते हैं यौवन स्वच्छन्द और निर्बाध गति का सूचक है। किन्तु मधु-बेला के जीवन में इसका प्रवेश एक और ही मार्ग से हुआ। उनकी स्वतन्त्रता अपने आप को यौवन के हाथों में छोड़ कहने लगी--यह एक कारा है, मैं अब बन्दिनी हूं। बालकपन में की मेरी मुक्त वांछाएं अब परतन्त्र बन्धन के आधीन हैं।

अपनी महीने भर की छुट्टियाँ समाप्त कर कुमार दिल्ली चला गया। उस दिन के बाद मधु और बेला में से किसी से भी वह मिल न सका था।

एक दिन जब उसने बेला के घर पर जाकर आवाज दी तो उसकी माँ ने बाहर आकर कहा —'शर्म नहीं आती रे तुझे गाँव में घूमते हुए। अपने घर बैठ न ! आप तो फिरता ही है बे माई-बाप-सा औरों को भी बेकार धक्के खुलाने चल पड़ा है।'

कुमार ने दृष्टि उठा कर एक बार उनकी ओर देखा। बचपन-से बेला के साथ उसे हंसते-खेलते देख खुशी होने वाली माँ का यह कथन सुन वह चुप चाप वापिस चला आया। पांव अपने आप ही मधु के घर की ओर चल पड़े। द्वार पर जाकर वह आवाज लगाने को ही था कि किसी अज्ञात आशंका ने हृदय में घर कर लिया। वह उल्टे पांव घर लौट आया। अकेला वह कई दिन तक इधर—उधर भटका किन्तु कहीं उसकी तबियत न लग सकी। मधु-बेला से मिले बिना उसने अपने आपको अनचाहा अनुभव किया। आहत पक्षी कुछ देर छटपटाया और फिर पिंजरे की ओर चल दिया।

कुमार दिल्ली चला गया।

—:०:—

कुमार को दिल्ली आये ८—६ मास बीत गये थे। सदैव की भांति इस बार भी वह मधु-बेला के पत्र की आतुर प्रतिक्षा करता रहा। दिल्ली के पार्कों में बैठा वह खिलते फूलों को देखता, उगती घास को

देखता और उसके हृदय में मिलन की अदम्य प्यास उग आती। किन्तु जो होना था, वह उसके चाहने से न रुका। न उसे कोई पत्र ही उनका मिला और न कुछ समाचार उनके विषय में जान सका। फूलों के बाग में कांटों के पेड़ उग आये थे। फिर बहारें आती, तो कहाँ से !

पढ़ाई चल रही थी। जीवन की सुख परितृप्तियों में अभाव कल्पनाओं का एक ही चित्र कुमार को उन्मन किये रहता। अपनी कक्षा और स्कूल का सर्वाधिक तेजस्वी छात्र—कुमार—सदैव सोचता रहता—क्यों उस दिन के बाद बेला और मधु मुझसे नहीं मिली। कहीं फिर तो उन्होंने मुझसे सम्बन्ध विच्छेद नहीं कर लिया। कहीं उन्होंने ही तो बेला की मां से शिकायत कर मेरा अपमान नहीं कराया था ?'

पर्याप्त चिन्तन के उपरान्त मुक्ति-भवन का एक ही द्वार खुलता—तिमिराच्छादित, अभेद्य।

वह फिर सोचता—'उसके माता और पिता ने स्वयं ही तो कहीं उन पर बन्धन नहीं लगा दिये। वे मुझसे मिलने में रोक तो नहीं दी गईं ! कहीं ? तो फिर अब मैं कभी उनसे न मिल सकूंगा। कभी उनके पास बैठ अपनी आत्मा की अतृप्त लालसा को पूरी न कर सकूंगा ?

इसी प्रकार बैठा वह एक दिन सोच रहा था कि कक्षाध्यापक उसके पास आ खड़े हुये। प्यार से उसके सिर पर हाथ फेरते बोले—क्या बात है कुमार, कुछ दुख है क्या तुम्हें ?

'नहीं गुरुदेव !' उसने कहा।

तो फिर सदैव चिन्तन कैसा करते हो ? अपनी अध्ययन-शाला को छोड़ और कहाँ-कहाँ दिमाग के घोड़े दौड़ाते हो ?'

'कहीं नहीं गुरुदेव,' उसने हंसने का प्रयास किया 'आज से ठीक पढ़ूंगा।'

गुरुदेव चले गये। एक साथी ने उसके निकट आकर हाथ पर पत्र-

रख दिया। कुमार ने उसके एक कोने में लिखा मधु का नाम देखा तो प्रसन्नता से अभि-भूत हो उठा।

हर्षाधिक्य अपनी मात्रा से अधिक माप कर निराशा और सूनेपन की घड़ियाँ उस समय लौटा लाया, जबकि कुमार ने पत्र को खोल कर पढ़ा। लिखा था---

प्रिय कुमार !

उस दिन के बाद हम लोग तुमसे मिल न सके थे इसका दुःख अब भी सम्भवतः तुम्हें हो किन्तु आज का यह दुःख तुम्हारी कमर ही तोड़ देगा।

बन्धनों, ताड़नाओं और उपेक्षाओं का अन्तिम लक्ष्य सामने आ गया है। बेला का विवाह उसके पिता जी ने निश्चित कर दिया है। मन्दिर और भगवान की प्रतिमा अब भी हमारे सामने है और बेला के आंसू उनकी भेंट चढ़ रहे हैं। मैं अपनी तो क्या कहूं, हां, बेला कहती है—यदि तुइ शीघ्र ही हम से न मिले तो वह ··· ।

तुम्हें मेरी सौगन्ध है कुमार, शीघ्र चले आओ। अन्यथा ···।

तुम्हारी
मृदुला

हां, मधु का पूरा नाम मृदुला ही था।

कुमार वहीं का वहीं बैठा रह गया—'मन्दिर और हृदयाकाश में यह वाक्य प्रतिध्वनित होने लगा—बेला के आंसू···।

उसके हृदय ने पुकारा--और मेरा कर्त्तव्य ?

उत्तर कहीं से कुछ न मिला। स्मृति अपने वक्ष पर बेला को बैठाये निर्भय चली आई और सामने आकर बोली—देख ले इसे, इसके आंसुओं को और इसकी मुरझाई सुषमा को।

'बेला' वह बड़बड़ा उठा—'मैं आ रहा हूं बेला।

'अपने सम्पूर्ण सुखों को तेरे आंसुओं में बहाने, अपना सब साम्राज्य लुटाने, मैं तेरे पास आ रहा हूं।'

तभी उसे लगा जैसे मधु बेला के सिर पर हाथ रखे कह रही है—मैं इसके साथ हूँ भय्या। तुम घबराओ मत, जल्दी चले आओ, बस !

दूसरे दिन प्रातःही कुमार पिता जी से कह गाँव को चल पड़ा। गाड़ी की गति और पर लगे देवों की कल्पना में लीन वह उड़ने की कामना करता और अपने नीचे की सीट देख कर बैठा रह जाता। 'फकफक'की ध्वनि और जंगल नदियाँ तथा स्टेशन अपने पीछे छोड़ती गाड़ी आगे बढ़ी जारही थी। किन्तु कुमार की कामना ! अप्रतिहत कल्पना ! उसकी गति गाड़ी से अधिक तीव्र थी। गांव में पहुंच कुछ देर इधर-उधर भटकने के बाद वह बेला और मधु के घर के सामने उनकी खोज में व्यस्त थी। कभी वह उनके पास पहुंच वार्ता करती और कभी क्रमशः बेला और मधु की माँ द्वारा परिताड़ित हो अपने घर की ओर चल पड़ती। किन्तु दूसरे क्षण वह फिर चलती। मन्दिर में पहुंचती और बेला के साथ बैठ प्रतिमा के सम्मुख घुटने टेक देती। बेला कहती—'मैं कसम खाती हु कुमार,आगे से कभी तुम्हारी बात का उत्तर न दूंगी। कभी तुमसे कुछ न कहूंगी। किन्तु तुम मेरे होकर रहना, मेरे साथ ही रहना, बस।' और उसकी आँख आँसुओं से भीग जाती'

कल्पना अपनी निस्सीम परिधि के अन्त छोर पर बैठ लुप्त होती और कुमार बड़ बड़ा उठता—क्या कहती है बेला ? तू और मैं भी कभी दूर हो सकेंगे? अलग रह सकेंगे ?

'और मैं ? ' कल्पना फिर अपने अंक में मधु को लिटाये आती और वह अलगायी-सी पूछती—'मैं कहाँ रहूंगी कुमार ? मुझे तुम छोड जाओगे क्या ? मैं भी तो—— ——।'

'तुझे कैसे दूर रहने देंगे री, तू तो स्वयं हमें एक दूसरे का प्रिय-पथ दिखायेगी।' बेला और कुमार एक स्वर से कह उठते। कल्पना छिप जती और कुमार की दृष्टि फिर डिब्बे के यात्रियों और उनकी गतिविधियों पर चली जाती।

गजरौला जंक्शन आया और दो नये यात्री डब्बे में घुसे। एक ग्राम्य युवक और दूसरी अवगुण्ठन मयी नव-यौवना थी। अवगुंठन का विस्तार वक्ष से कुछ नीचे तक था। दोनों आकर कुमार के पास ही खाली जगह पर बैठ गये। कुमार ने एक बार उनकी ओर देखा फिर मधु-बेला का चित्र भावाधीन हो स्मृति सरिता के किनारे खड़ा उसे दिखाई दे गया वह अपने आप को भूल गया अपनेपन को समझने लगा।

'बाबा को छोड़ थारे साथ भागी हूं जी मोहे दगा मत देना जी।' उस अवगुण्ठनमयी ने अपने साथी से धीरे से कहा और उसकी फुस-फुस कुमार से मधु-बेला को विलग कर गई। वह उसकी बातें ध्यान से सुनने लगा।

युवक को शांत देख वह फिर कह रही थी-- मेरो दुख-सुख, तन-मन सब थारो ही है, जैसे राखोगे रह लेऊ पर राखियो सदा साथ। राखोगे ना ?

'किन्तु तुम मेरे हो कर रहना मेरे साथ रहना।' कुमार को लगा जैसे बेला युवती के स्वर में स्वर मिला कर रही हो। वह समझ गया कि वे दोनों घर से भागे हुए प्रेमी-प्रेमिका हैं।

जैसे तैसे कुमार ने गांव में पदार्पण किया। दिन भर अथक परिश्रम करने पर भी शाम को भूखे पेट सोने वाले के हृदय में एक हाहाकार होता है। सुनते हैं उसकी आत्मा अपने अस्तित्व को धिक्कार अनन्त में विलीन करने का ही यास करती है।

कुमार को गांव आने पर अनुभव हुआ कि उसका निर्दिष्ट पथ कहां और कितनी दूर है। दिल्ली से वह सोचता आया था कि गाँव चलते ही वह मधु और बेला से मिलेगा। अतीत के क्षण विस्मर हो गये। किन्तु गांव आने पर घर से बाहर निकलते ही पाँव रुक गये। जैसे पूछ रहे हों—किधर जाना होगा ? कहाँ है अपनी राह का दीप !

परन्तु एक क्षण की झिझक दूसरे क्षण की आशा बन गई। वह चल पड़ा। समय सम्भवतः उसके अनुकूल था।

अपने द्वार पर खड़ी बेला ने उसे आते देखा और आगे बढ़ी।

'कहां चली री !' पीछे से आवाज आई और बढ़ते पाँव रुक गये। बेला की मां ने द्वार बन्द कर लिया। किन्तु कुमार ने उसकी एक ही दृष्टि में वह सब कुछ पढ़ लिया था जो उसे आशंका थी। वहां से लौटते हुये वह मधु-के घर की ओर चला। द्वार खुला था किन्तु दिखाई कोई नहीं दिया। बहुत दिनों बाद आज उसे अपने कन्ठ से लाभ उठाने की सूझी—और उसने गाना प्रारम्भ कर दिया। पंक्तियां थी -

मधु के द्वार आज मैं आया,
कलि ! घूंघट तो खोल, देख ले प्रिय तेरा मन भाया।

स्वरों का अनुरोध, उनकी मधुरिमा और मनुहार खाली नहीं गई। मधु ने द्वार के पास खड़ी हो संकेत से उसे प्रणाम किया और धीरे से बोली -- रात को खेड़े पर !

इतना कह वह शीघ्रता से भीतर चली गई और कुमार ने अपने स्वरों को फिर संजोकर गाया—मधु के द्वार ..

पांव उसके अपने घर की ओर बढ़ रहे थे।

—:0:—

खेड़े के सूने आँचल की छांव में बैठे कुमार, मधु और बेला निशा के 'सांयसाय' संगीत को सुनते अपनी भविष्य कल्पनाओं में लीन थे। तीनों चुप थे। एक लम्बे समय के बाद मिलने के कारण एक दूसरे की ओर निहारते तीनों के नयन अनिमिष थे।

'क्या सोच रहे हो कुमार?' मधु बोली, 'कुछ निश्चय किया तुमने?'

'किस बात का?' किसी गहरी नींद से जागता-सा वह बोला!

'बेला के बारे में,' मधु बोली, 'उसके विवाह की तारीख पास ही आ गई है।

'हां मधु!' कुमार कुछ प्रसन्न-सा बोला, 'मैं पिता जी को सब बात सुनाकर उन्हें राजी कर लूंगा और—।'

'नहीं!' बेला बीच में कह उठी, 'ऐसा अब नहीं हो सकेगा।'

'क्यों?' कुमार ने पूछा, 'तुम सोचती हो कि पिता जी राजी नहीं होंगे?'

'तुम्हारे नहीं मेरे पिता जी!' बेला ने कहा, वे राजी नहीं होंगे। मैंने उनसे इस बारे में कहा था।'

'फिर!'

'उन्होंने कहा मैं अपनी जान दे दूंगा या तेरा गला घोट दूंगा पर—।' बेला रुक गई।

'कहो न ?' कुमार का गला भर आया, सब कह दो चुप क्यों हो गई ?

'उन्होंने कहा कि गांव के किसी लड़के से शादी करके बेला अपनी मर्यादा नहीं भंग कर सकती। समाज के बन्धन नहीं तोड़ सकती। जमींदार की लड़की जमींदार से ब्याहेगी। और किसी से शादी तो दूर, शादी की चर्चा करना भी उनके लिये असम्भव है।' बेला को चुप देख मधु ने कहा।

'बस मधु,' कुमार सिसक उठा, 'मैं बेला के पिता की मर्यादा नही भंग करना चाहता, जमींदार की...... —किन्तु—- ।'वह चुप हो गया।

'किन्तु क्या ? चुप क्यों हो गये तुम ?' बेला ने पूछा। वह रो रही थी।

'मन्दिर और भगवान को दिया हुआ वचन ! उसे भी तो हम नहीं तोड़ सकते।' कुमार ने कहा।

मैं अपने प्राण दे दूंगी, लेकिन जिस मन्दिर में जिस भगवान के सामने तुम्हारे साथ गई हूं। मधु के साथ खेली हूँ, उसके दर्शन किसी और के साथ करूं, यह असम्भव है।'

'फिर ?' कुमार फुसफुसा उठा।

'तुम दोनों कुछ दिनों के लिए कहीं दूर चले जाओ तो सब ठीक हो जाय। फिर मैं भी मिल ही जाऊँगी' मधु ने कहा।

'ऐसा मत कह री ! स्वयं की इज्जत बेचकर, मर्यादा तोड़ कर, आप्त अपने शरीर का सुख मैं खरीद लूं !' बेला सिसक उठी।

'ठीक कहती है बेला,' कुमार का अस्ति स्वर बोल उठा, 'अपने लिए मां बाप का सिर भी तो हम सदा के लिए नीचा नहीं कर सकते।'

'तो फिर क्या किया जाय ?' मधु के स्वर में विक्षिप्तता सी थी।

'मैं तो अपने वचन का पालन करूंगा ही। यदि बेला से शादी न हुई, तुम्हारे साथ न रह सका तो कभी भी

'मैंने सब सोच लिया है। भगवान और खानदान दोनों में के किसी की बात मैं नहीं टालूंगी।'

'लेकिन कैसे ?' मधु ने पूछा।

'फिर बताऊंगी। इस समय कुछ और बात करो।' बेला सहसा हँस पड़ी।

लेकिन तूने सोचा क्या है? मधु और कुमार ने संयुक्त प्रश्न किया।

'मैं सब बता दूंगी। इस समय मत पूछो। मैंने वह सोचा है कि जिससे तुम सदैव सदैव के लिए बेला को न भूल सको उसे छोड़ न सको। बेला हंसते हुए बोली।

लेकिन—'

'फिर वही बात !' बेला ने बीच में ही कुमार को रोक दिया, 'अब जरा कुछ देहली की बात सुनाओ'

कुमार ने अनुभव किया कि बेला की हंसी में एक अडिग निश्चय का समावेश है। उसकी हास्य मुद्रा पर भयंकर पीड़ा का अधिकार है। वह चुप हो गया।

इसके बाद काफी देर तक बैठे वे अपनी बीती सुनाते रहे, उठते समय बेला ने कुमार के पांव पकड़ते हुए कहा—आज तुम्हारे पांव की धूल माथे से लगाना चाहती हूँ, लगा लूं।'

'पगली ! क्या सनक सवार हुई है यह ? उठ चल।' कुमार ने उसे उठाने का प्रयास किया।

'नहीं, नहीं। आज मुझे मत रोको। और हाँ, तुमने मेरे आज तक के अपराध क्षमा कर दिये न।' बेला का आग्रह उमड़ पड़ा।

'कैसी बात कर रही है री ! चल, मां प्रतीक्षा कर रही होंगी।' मधु ने कहा।

'चलती हूँ। आज मैंने एक नई जिन्दगी का निश्चय किया है। तुम

भी वचन दो मधु—इनसे कभी नहीं लड़ोगी।' बेला ने उठते हुए कहा।

'अरी मैं ···।'

'नहीं मधु, वचन तुझे देना ही होगा। बेला को आज मुंह माँगा दे दो तुम।'

'बड़ी खुशी है क्या ?' मधु और कुमार हँसे, 'जा जो चाहती है पूरा होगा।'

तीनों चल दिये।

—:७:—

रामगढ़ की गली २ में शहनाइयों और बैंड बाजे का स्वर जा बैठा। लाउड-स्पीकर और सांग-तमाशों के अगामी प्रोग्राम के उल्लास में बच्चे-बूढ़े सब बेला की बारात देखने भाग चले।

रामगढ़ में पूरी शान शौकत से चढ़ी यह बारात सभी प्रकार से रईसाना थी। सबसे आगे पुलिस बैंड अपना अभियान-गीत गाता चल रहा था। उसके पीछे नौशे का हाथी था। नौशे के चेहरे पर सेहरा और सिर पर मुकुट था। उसके आगे- पीछे प्राय ! सगे तथा रिश्ते के भाई बहन बैठे थे। उसके हाथी के अतिरिक्त ६-७ रथ, १५ रब्बे तथा लगभग २० तांगे बारात में थे। लाउड-स्पीकर, पुलिस बैंड के अतिरिक्त १ फौजी बाजा तथा १ सांग कम्पनी उसमें थी। नई उम्र के बच्चे तथा

जवान खड़े कह रहे थे—ऐसी बारात यहाँ पहले कभी नहीं चढ़ी,

बूढ़े प्रतिवाद करते—है तो खासी पर भइयन, रामगढ़ की रियासत में एक से एक बढ़कर बारात चढ़ी है।

कुमार ने खेड़े पर ही खड़े होकर इस चढ़ती हुई बारात को देखा और तेजी से मन्दिर में जा पहुँचा। घंटों तक वह वहीं पड़ा रहा। जब सारे गाँव में शादी और बाजे-गाजे की धूम थी, तबले की थाप और और गवैयों के स्वर 'वाह—वाह' की प्रशंसापूर्ण उक्तियों में बह रहे थे, भुवनेश्वर की महिमा के गान उस समय भी अपने कानों में एक मन्द-ध्वनि का संचरण पा रहे थे। ध्वनि—जो उदित हो रही थी मन्दिर की प्रतिमा के नीचे बरस रही तप्त अश्रुधार के प्रवाह से।

—:०:—

मधु ने चढ़ते और सांग के समय कुमार को चारों ओर देखा। कहीं भी जब वह दिखाई न दिया तो उसने विनय से पूछा—कुमार कहाँ है ?

उनका तो शाम से पता नहीं। आज रोटी भी नहीं खाई अभी !

मधु सन्न रह गई। भगवान और मन्दिर का ख्याल आया और उसके हृदय को झकझोर गया। अन्तर तर के अन्तरस्थ में किसी के प्राणों की अनुगृहीत चीत्कार गरज उठी। कंपकंपाते पाँव से वह मन्दिर की ओर चल पड़ी। आदमी सब साँग में मस्त थे। घर वालों

को अपने काम से ही फुरसत न थी। चलते समय उसकी एक भाभी ने पूछा, कहाँ चली मधु !

'अभी आई भाभी एक गाना मैं भी सुन आऊं।'

भाभी चुप हो गई और सबकी दृष्टि से बचती वह मन्दिर की ओर चली।

हृदय में उसके रह रह कर एक बात आ रही थी—मैं सदा तुम दोनों के साथ रहूँगी।

बेला तो अब अलग हो ही गई, क्या मुझे भी होना पड़ेगा, यह · मैं ।

वह मन्दिर के आँगन में जा पहुँची। भीतर अँधेरा था। वह सीधी प्रतिमा के सम्मुख जा पहुँची। धीरे से बैठ वह बोली 'मुझे मेरी बेला और कुमार वापिस दे दे प्रभु ! मैं अब किससे अपना वचन निभाऊँगी। मैं मैं ।' वह अपने आप ही से सिसक उठी।

तू भी आगई मधु ! न रोक सकी अपने आप को।' एक कोने से आवाज आई।

'कुमार !' मधु के ओठ हिले और दूसरे ही क्षण वह किसी की बाहुओं में थी।

पंछी चहचहाये तो कुमार बोला—रात के चिराग बुझ रहे हैं मधु सुबह होने को है, चलो।'

मधु ने कुछ उत्तर न दिया। वह चुपचाप बैठी रही। अपलक वह मूर्ति की ओर देख रही थी।

'आज मैं भीतर नहीं आऊँगी भगवान ! रात के अंधेरे और सुबह की रोशनी में सबको सुनाकर मैं तुम्हें भेंट चढ़ाने आई हूँ। लोगे!' बाहर से किसी का करुण स्वर सरसा उठा। मधु ने अपने कानों में बेला की आवाज का आभास पाया। वह कुछ कहने को थी कि तभी फिर आवाज आई- पर करोगे क्या इस भेंट का। सिर्फ दो चार बूंद खारा पानी है बस !

'बेला' भावावेश में मधु और कुमार एक साथ बोल उठे।

बाहर पांव तेजी से उठने की ध्वनि हुई और बेला भाग गई। दोनों मन्दिर से निकल एक दूसरे की ओर देखते लड़खड़ाते पाँवों से अपने-अपने पथ पर चल दिये।

—:o:—

सखियों और मां-बहिनों से घिरी बेला अपने को देख विस्मय में पड़ गई। पूर्ण रूपेण नववधू बनाया गया था उसे।

'बहू' वह मन ही मन कह उठी, 'आज मैं बहू बनी हूं। अब उनसे मिलने जा रही हूं। उनसे—— —'

'लाड़ो जल्दी से हो जा तैयार, देखन को सब-सखियां खड़ी।'

तभी एक लड़की गा उठी। सबने उसके स्वर के साथ सहयोग किया और—

'टीका तो पहनो बीबी बड़ी खुशी से,'

जी···टीका तो पहनो बीबी बड़ी खुशी से;

आस लगी तमन्ना——

'हां हां! आज मेरी तमन्ना पूरी होगी। मैं टीका पहन कर चल रही हूं। मिलूंगी। हमेशा हमेशा के लिये मिलूंगी। वह गति का

कड़ियों के पार पहुंच सोचने लगी। किसी भी तरह, किसी भी—'
वह सोचती रही।

बाहर द्वार पर रथ आ गया था। भुवनेश्वर जी आंखों को पोंछते आकर बोले—जल्दी करो, रथ आ गया है।

'अच्छी बात है, हम सब भी तैयार हैं।' एक बुढ़िया ने कहा और उमंग में गा उठी—

'भयो शिवजी के साथ गोरा
मेरी राज दुलारी है।'

औरतों ने ऊपर उठाया—

'शीश बीबी जा के झूमर सोहे,
टीके की छब न्यारी है।
भयो शिवजी
नैन बीबी जी के डोरे सोहे
कसमों की छब न्यारी है।
भयो शिवजी के साथ '

'मेरे शिव ! मेरे सुन्दर शिव ! मैं तुम्हारी गोरा हूं। शंकर की गोरा ! महादेव की गोरा। अपने ।' आंसुओं की गिरती बूंदों से अनभिज्ञ बेला सोचती रही। 'मेरा कुमार ही तो शिव है। मैं उसी की तो ।'

'जल्दी भी करो अब, देर हो रही है।' भुवनेश्वर ने फिर कहा।

'पर लड़की के मामा को तो बुलाओ तुम।' उन्हीं बुढ़िया ने कहा।

'मैं ही जो ले चलूंगा। अपने हाथ से ही तो—

'मुझे सदा सदा के लिये उनकी सेवा करने के लिये रथ में बैठा दोगे।' बेला ने मन ही मन उनका वाक्य पूरा किया।

'नहीं भुवन ! यह हमारा नेग है। लड़की को उसका मामा ही रथ में बैठायेगा।'

वे बाहर चले गये। औरतें फिर गाने लगी—

'बागों आया री, लाडो तेरा बनड़ा।
'झूमर लाया री, लाडो तेरा बनड़ा
दोनों हाथों से पहनावे
दोनों नयनों से निहारे
ले सीने लगाय बीबी तेरा बनड़ा।
बागों ·· ···

कहां आया ? मेरी इतनी पुकार, इतनी गुहार, सब बेकार गई। मेरा— कब मेरे पास आया ? कब वह मुझे लेने आया ? कहां ? तुमने आने कहां दिया ? मैं तो स्वयं उसके पास पास जा रही हूं। निर्लज्ज बनकर, ! सजधज कर ! उसके आने से तुम्हारी लाज जो टूटती थी ! तुम्हारी सजावट जो फीकी पड़ती थी। मैं—' अब की बार सोचते-सोचते बेला जोर से सिसक उठी।

मधु पास ही खड़ी थी। औरतों में चुपचाप खड़ी वह अब तक आने भिन्न बेला को देख रही थी। सोच रही थी मन ही मन—क्या निश्चय कर रखा है इसने ?

अब वह और न देख सकी। उसके गले में हाथ डाल धीरे से बोली—कुछ तो बतादे मुझे, क्या सोचा है तूने ?

'एं ! कुछ भी तो नहीं। मैं अपनी ससुराल जा रही हूं। बस।' बेला ने उसे देख कॉन में कहा,' तू खुशी के गीत क्यों नहीं गा रही री ! तू क्यों !

'ठुमक राधिका फिरै है दिवानी, सांवरिया वर पाने को।'
एक औरत उसकी ओर देख हंसती हुई गाने लगी—
'हाथ पकड बाबा जी की कलाई
हाथ पकड़ ताऊ जी की कलाई
अपना वर दिखलाने को।'

'सुना तू ने! यह सोच रही हूं मैं।' बेला मधु की ओर देख बोली।

'नहीं बेला, तूने कुछ और सोचा है, बता दे मुझे।'

कुछ भी तो नहीं री। हाथों में मेंहदी लगा कर सांवरिया के अलावा और किसके बारे में सोच सकती है लड़की।' बेला ने एक निश्वास खींची।

मामा जी आगे और उसे गोदी में उठा कर चल दिए। मधु पीछे पीछे चुपचाप चलती रही।

मां ने आकर उसके सिर पर हाथ फेरा तो उनकी आंखों में से भी पानी भर रहा था। वे भाग कर अपने कमरे में चली गईं। युग-युग का अमर मन-धन उन्हें मिल रहा था। वे न सम्भालती-सी अपनी खाट पर जा रोती रहीं।

बेला ने उन्हें मन ही मन प्रणाम कर सोचा --अब तुम्हें और रुलाने न आ सकूंगी मां—शायद। आंसू मामा के कपड़े भिगोते रहे।

रथ में बैठ बेला ने मधु को पास बुलाया। उसके गले से लग जोर से रो पड़ी। छुड़ाने पर न छोड़ वह देर तक रोती रही। दोनों के मन-सरितायें भड़क रही थीं। नाव उलझी रही।

आखिर मुंह ऊपर उठा धीरे से बेला ने कहा---आज विदा दे मधु, अब ?

वह कह न सकी।

मधु रोती रही।

फिर कुछ रुक कर उसने कहा—उन्हें कभी दुखी मत करना। कभी भी ! —

और फिर एक पत्र निकाल कर मधु की जेब में रख दिया। कान में कहा—मेरे जाने के बाद पढ़ना —।

रथ चल दिया। बाजे की धुन में गीत गूंज रहा था—

'काहे को बोई बाबुल हल्दी की गठिया

काहे को जन्मी थी !

रे लखी बाबुल मो रे।

हम तो रे बाबुल तेरे खूंटे की गइयां
जिधर बांधे उधर बंध जायें। रे ! लखी —'

—:०:—

रात को मन्दिर में बैठ मधु और कुमार ने बेला का पत्र पढ़ा। लिखा था—

मेरे देवता !

देवता के चरणों में जो वचन दिया था, उसे पाल न सकी, ऐसा मत सोचना। प्यार और कर्त्तव्य से दूर पूजा के देश में मैं अपने सांवरिया की प्रतीक्षा करूंगी। कैसे ? मिलने पर ही बताऊंगी।

मधु को साथ ले कब मेरे पास आओगे, मन्दिर में जाकर बता देना।—

दासी
—बेला

'बेला मर गई।' तभी बाहर से कोई किसी से कहता हुआ भाग रहा था, 'पहले पड़ाव पर ही जब रथ में देखा तो बेला मरी हुई मिली। पहिये में उसकी धोती आकर गला— —'

मधु और कुमार के कानों में ये शब्द पड़े तो वे हिलते पत्ते से कांप उठे। उनके सामने पत्र की पंक्तियां साकार नृत्य कर उठीं —

मैं अपने सांवरिया की प्रतीक्षा करूंगी। मैं अपने

मैं भी मिलूंगा बेला। एक न एक दिन तेरे देश में जरूर आऊंगा। कुमार फफक फफका उठा।

मैं भी बेला। भगवान के सामने कहती हूं मैं भी । मधु का गला रुंध गया।

मूर्ति चुप थी। हंस रही थी। उसके ऊपर इसका कोई प्रभाव न था। जैसे कह रही थी—मुझमें सब सहने की शक्ति है। उठो! अपने घर जाओ।

'चल मधु! मैं भी कल दिल्ली चला जाऊंगा।'

'तो मैं भी '

'नहीं री! पर हम अब मिल न सकेंगे। दुनियां की दृष्टि का यही परिणाम—! हम बेला की याद की कड़ी से सदा जुड़े रहेंगे।' कुमार ने उसे आलिंगन में ले कहा हम तीनों सदा एक साथ हैं। फिर भी अलग।

'हां।' कुमार की आंखों में झांकती मधु ने कहा। वह देख रही थी। आंखों के दर्पण और पानी के बिम्ब में बेला की सूरत साफ थी।

दोनों चले गये।

हवाओं के झोंके आ आ कर मन्दिर को उसकी गोदी में हुए बलिदानों की गाथा सुना-सुना कर कह रहे थे—पत्थरों के देवता, तू कब तक इस तरह चुप रहेगा?

—:०:—

राही चलते हैं और चलने के बाद पथ के वक्ष पर छोड़ जाते हैं कुछ एक चिन्ह-पद-चाप ! उन्हीं की स्मृति में कुछ लोग सोचते हैं राही के जीवन के विषय में. कुछ की आँखों में राही की व्यथा छलक पड़ती है और कुछ खो जाते हैं उसकी मुस्कान में। चाप स्वयं राही के जीवन का चित्र जो है।

बेला भी अपने पीछे एक कहानी छोड़ गई। उसके प्राण सो गये, वेदना सो गई और छाया ! वह अभी भी जीवित थी। कुमार मधु और मन्दिर के आँगन में वह घूम रही थी। अपने कथानक के जाल बुन रही थी।

:o:

लगभग पाँच साल बाद—

मधु कुमार से कभी कुछ विशेष न मिली थी। सहसा एक दिन सुना गया कि उसने एक भाई-बहन के स्नेह को वासनात्मक परम्परा का अवशेष बना उसके जीवन-प्रभात को कुहरे से ढक दिया।

कहानी समाप्त हो गई। बस।

तुम्हारा—

कुमार

—:o:—

ग्राम्य राजनीति के मंच पर सैद्धान्तिक व्याख्या का विश्लेषण करना ही पर्याप्त नहीं। गंवारों के इस देश में उनकी मनोभूमि पर उतरकर, उनकी भाव गंगा में नहा कर तथा उनके सुख-सपनों में आ कर ही सफलता की आशा की जा सकती है।

सत्य और वास्तविकता ही इस भारतीय हृदय के लिए पर्याप्त नहीं। इसमें उचित स्थान पाने के लिए, विपरीत वर्ग में घुल मिल कर उसका मूल्यांकन करने के लिए आवश्यक है कि मानवीयता के दोनों सूत्रों-सत्य और परिवर्तन-का उचित समन्वय किया जाये।

मात्र छलना कभी सच नहीं हो सकती। किन्तु केवल सत्य भी छलना के अस्तित्व को समाप्त करने में असमर्थ है। इसलिए नहीं कि, जैसा कि लोग कहते सुने जाते हैं, यह कलयुग है बल्कि विश्वस्त सत्य तो यही है कि सामाजिकता के मंच पर अभिनय करते करते सत्य और असत्य ने अपने पूर्ण उत्कर्ष को दृष्टि में रख एक रूप हो कार्य करने का निश्चय कर लिया है। वे सहयोग के बन्धन में बंध गये हैं।

आदर्श का उपयोग उपादेय है, अवश्य। किन्तु, यथार्थ की भूमि भी कहीं कहीं समतल है निस्संशय कर्तव्य-परता के लिए स्वयं-त्याग और अहम् का त्याग प्रथम: है किन्तु केवल निस्वार्थता का ही चरण प्रत्येक स्थान पर सफल होगा' यह कपोल-कल्पना है। देव लोक में-जिसे हम कल्पना का मनोरम स्वर्ग भी कह सकते हैं- आदर्शों की स्थापना निर्बोध

हो सकती है परन्तु मानुषी-मन में यथार्थ का पूर्ण अभाव अथवा कल्पना का एका अधिपत्य सर्वथा असंभव है।

कुमार यथार्थ की शुष्क भूमि से टकरा अपने आदर्श वृक्ष से नीचे आ गिरा। ज्यों ही सत्य के भुमित संधान में लीन वह उसका अनुचित पोषण करता आगे बढ़ा यथार्थ के चित्र उसके सामने आ गए। अपने नग्न रूप में वह कल्पना के द्वार से लौट लौट उसके सामने नाचने लगे।

जीवन से निराश, सामाजिक बन्धनों से ग्रसत और बेना के मरण-वेदना से शोषित वह कर्तव्य और सेवा के पथ पर बढ़ा था। चहु ओर व्याप्त दूषित वातावरण को लक्ष्य कर उसने उत्थान के पथ पर कदम बढ़ाये। शफीक और सुरेश जैसे साथी शीघ्र ही उसे मिले और स्वपनों की सत्यता स्पष्ट ही दिखने लगी। आदर्श का प्रथम चरण समाप्त हुआ और रामगढ़ के मनुष्यों ने अपने आप को एक एक अलौकिकता की ओर जाता हुआ अनुभव किया। उत्साह और श्रम ने मार्ग के कण्टक चुने और लगन उसकी धूल पर छिड़काव-सा करती आगे बढ़ी। यथार्थ दूर खड़ा हंस रहा था। अपने समय की प्रतीक्षा में आघात पर आघात सह वह चुप ही रहा। अवसर आया और उसने ताल ठोक दीं। नैतिकता से शठता टकराई। पर्याप्त साहसी होने पर भी शठ नीति ने राजनीति को पराजय का मुंह देखने पर बाध्य किया। रामगढ़ की दशा को पूर्णता परिवर्तित करते निर्वाचन समाप्त हो गये।

शफीक एक मिडिल पास ग्राम्य युवक था। उत्साही और श्रमी होने के साथ ही जन सेवा की भावना उसमें कूट कूट कर भरी थी। समय पड़ने पर वह कठिन दिनों के साथ टकराने और अपनी स्थिति पर नियंत्रण करने में वह समर्थ था। कुमार जैसे युवक को सेवा पथ पर उतरते देख उसका सुप्त पौरुष जाग उठा और यही कारण था कि अपने प्रत्येक कार्य में कुमार उसे आगे ही आगे पाया। बेना की मृत्यु के अघात से दुखित सेवा भावना से आकण्ठ परिपूर्ण कुमार को इस

सहयोगने एक अपूर्व बल दिया था। वह सुरेश और शफीक के साथ शीघ्र ही सपनों की साकारता में विश्वास करने लगा।

निर्माण-पथ का निर्माण और विध्वंस का अलक्ष्य अस्तित्व, यही पूर्व सब घटनाओं का संघर्ष क्रम जिसने अन्त में शफीक के हृदय में एक ऐसी आग सुलगा दी जिसकी चिंगारियाँ कुमार की ओर सम्मुख थीं, सृजन की ओट में संहार का पक्ष ले रही थीं।

अपनी निर्वाचन में पराजय का एक मात्र कारण कुमार को मान शफीक एक दम रुक्ष हो उठा। 'अपनी इसी वासना और शरीर की आग बुझाने के लिये कुमार ने यह मार्ग अपनाया था, हम सब को धोखे में रख सेवा का ढोंग रचा था। शफीक ने सोचा और उसके चरित्र का प्रत्येक पहलू उसके लिए संशय का कारण बन गया। उसका विद्यालय और कन्या पाठशाला से प्रेम, विद्या से अधिक सम्पर्क तथा रावेन् का विरोध, सब कार्य शफीक को दिल की प्यास और जलालत की माँग लगे।

कुमार का मौन तथा रावेन् का प्रबल प्रभाव उसकी धारणा और भी पुष्ट कर गया। उन दोनों का पथ पूर्णतः भिन्न है, उसने निश्चय किया और कुमार से अलग हो स्वतन्त्र कार्य प्रारम्भ किया।

'हार से मैं रुकूंगा नहीं, बढ़ूंगा।' उसने मौन प्रण किया, 'लेकिन उन कमजोर साथियों के साथ नहीं जो दिमाग की ताकत को शरीर की भूख से खराब कर देते हैं।' उत्साह तो और भी अधिक उसमें आया परन्तु पग डंडी बदल गई। राही चलता तो रहा, परन्तु पूर्व मार्ग छोड़ कर।

कुमार के हृदय पर मृदुला के आचरण का स्थायी प्रभाव पड़ा था। उसके कल्प लोक में जो आदर्श का राम राज्य स्थापित था उस पर एक महान् आक्रमण हुआ। वह नष्ट-भ्रष्ट हो गया। सब ओर से उदासीन हो कुमार अपनी कोठरी के क्षुद्र संसार में सीमित हो गया। सोम के घर जाने का उसमें साहस न था, सुशी उसके यहाँ अब आ

न सकती थी और शफीक ने उसका साथ छोड़ दिया था। सुरेश एक दो बार उससे मिला भी तो कुछ विशेष कह सुन न सका। संकोच और शंका की जो दीवार बीच में आ खड़ी हुई थी, उसने उसे भी तटस्थ कर दिया। विद्या बीबी पर कुमार का विश्वास ऐसे में कुछ अधिक था। परन्तु पावनता और सरलता की पुजारिन छल और भ्रम को सहन न कर सकीं। वे भी कुमार को अकेला छोड़ चुकी थीं।

सब ओर से शून्य देख बेला की स्मृति ने फिर मन पर प्रभाव किया और दुर्गम-पथ का राही संकोच की वीथियों में उसकी अतीत गाथा में खो गया। मृदुला और बेला के चरित्रों की परस्पर तुलना करता वह खाट पर चुपचाप लेटा रहता।

इस बीच उसके पास आने वालों में कोई था तो केवल सरोज। वह दो तीन बार उसके पास आई और पुन: अपने कार्य में लगने को कहा। किन्तु कुमार ने प्रत्येक बार एक ही उत्तर दिया।—मेरे पास मत आओ सरोज, चारित्रिक दोष के अपमान की ज्वाला में फिर तुम्हें भी जलना होगा।

वह काफी कहती सुनती और निराश हो लौट जाती।

—:०:—

राजेन के आक्षेप ने श्यामसिंह का सिर नीचे झुका दिया था। अपने कार्य की सफलता का स्वयं खानदान की पगड़ी उछाल वह मुस्कराता रहा। किन्तु श्यामसिंह रिश्ते और खून के इस टूटते बन्धन

शिखर से अपमान और उपेक्षा की बहती नदी को देख स्तब्ध रह गये। उनकी सब शक्तियाँ, सब लालसाएं एक बार को सो गईं। दो तीन दिन तक घर से बाहर वे निकल न सके। प्राणों के उत्तुंग शिखर पर बैठकर वंश-गौरव उन्हें ललकारता और सोम की ओर देख दृष्टि नीचे कर वे बैठ जाते।

धीरे-धीरे दिन बीते और गत चेतना श्यामसिंह के मस्तिष्क में लौटने लगी। वे कुमार को बचपन से जानते थे। मृदुला के साथ जब बचपन में खेलता तभी से वे उससे परिचित थे। उसके विवेक और चरित्र पर मुग्ध होकर ही अपने घर का एक सदस्य यह परिवार उसे समझने लगा था ?

'आखिर कब तक यह मौन साधे रहोगे ?' सोम की मां ने एक दिन उनसे पूछा।

'मैं ।' वे कुछ कहने को ही थे कि बीच ही में वे बोल उठीं—दुनियां में रहने चले हो और इतना ही पता नहीं कि सच-झूठ क्या होता है ?

'क्या ?' उन्होंने गरदन ऊपर उठाई।

'तुम कुमार को जानते नहीं क्या ? सोम तुम्हारी गोदी में खेली नहीं क्या ?' उन्होंने पूछा और फिर कहने लगीं दुनियाँ दारी इतने बरतते हो गये पर इतना पता अभी नहीं लगा कि गोदी में खिलाये बालक को न समझे, वह कोई जड़ ही होगा।

'क्या कहना चाहती हो तुम ?'

'मैं तुमसे कहना नहीं यह पूछना चाहती हूँ कि सोम को मुझ से ज्यादा रावेन कब से जान गया। मेरी बिटिया को उसने कब से पह-चानना शुरु किया ?' कहते-कहते उनका गला भर आया और वे बोलीं—यह तो सोचा नहीं कि लड़के के दिल पर क्या बीती होगी चुपचाप औरतों की तरह घर में दुबक गये। जानते हो उस दिन से अब तक घर से बाहर भी वह नहीं निकला।'

'कौन ?'

'कुमार ! और कौन ?' माँ ने कहा—इसी बिरते पर कहते थे कि उसे प्यार करते हो। चारों तरफ से इतना दुखी होने पर इतना भी नहीं एक बार उसे जाकर देख ही आते, कुछ खबर ले आते।

'क्या हुआ उसे ?' श्याम सिंह कुछ चेते।

'सुनते हैं कि शफीक ने भी उसका साथ छोड़ दिया है। और कोई उसका मीत था नहीं। सोम थी सो ।'

'चुप हो जाओ सोम की मां !' श्याम सिंह बोले—कोई सुन लेगा तो ?

क्या करेगा हमारा ? यही तो कहेगा सोम कुमार को चाहती है। तुम नही चाहते क्या ?'

'चाहता हूँ। लेकिन—।'

'लेकिन क्या ? मैंने मृदुला से सब पूछ लिया है, उसने किसी से कुछ नहीं कहा. जो कुछ राबेन ने कहा सब उसके मन की बात है।'

'सच सोम की मां !' वे उठ खड़े हुए,

'मृदुला ने कुछ नहीं कहा।'

'हां, हा। उसने कुछ नहीं कहा, वह तो उसी दिन से बहुत उदास रहती है।

'मैं भी कितना पागल था 'जरा सा लौंडे की बात में आगया।' श्याम सिंह ने कहा – 'अभी जाकर लाता हूँ उसे।'

और वे चल दिए।

'लिवा कर जरूर लाना उसे। दुनियाँ क्या कहेगी यह चिन्ता करने की जरूरत नहीं है।' सोम की माँ ने कहा।

वे 'हाँ हाँ।' करते चले गये।

—:o:—

विद्या बीबी कुमार को हृदय से चाहती थी। उसके गुण और कर्तव्य-गरिमा से उनका समस्त अन्तर-प्रदेश आच्छादित था। जब से गांव में मिडिल स्कूल खोलने का स्वप्न ले वह जन-क्षेत्र में अवतीर्ण हुआ सरल और निश्छल भाव-प्रदेश की सम्राज्ञी उस पर कृपालु हो गई थी।

राधेन ने ग्राम सभा में कुमार पर प्रतिघात किया और उसके विषय में किए गए इन शोधपूर्ण सत्यांशों से वे विचलित हो उठीं। रह रह कर वे सोचने लगीं—इतना सच्चा मानुषिक पहचान का अनुभव होते हुए भी मैं जीवन में भूल कर गई। . . . . .

वे बार-बार सोचतीं परन्तु निष्कर्ष कुछ भी न निकल सका। पाठशाला की अध्यापिका होने के कारण यह पता उन्हें चल गया था कि शफीक ने कुमार का साथ छोड़ दिया है। उसके घर जाकर सान्त्वना देने को हृदय बार-बार उनसे कहता। परन्तु प्रचलित अपवाद और भ्रान्त धारणाओं में निहित अज्ञात भय पांव की बेड़ी बन जाता। वे चाहकर भी जा न पातीं।

सरोज ने उन्हें कई बार समझाया—कुमार बाबू ऐसा नहीं कर सकते बीबी, मैं उनके चरित्र से भली भांति परिचित हूं। कोई भी कुछ कहे पर वे आदमी बहुत सरल हैं।

बिथा सुनती और उसकी ओर देख कर चुप हो जातीं। उत्तर-प्रत्युत्तर दोनों उन्हें निरर्थक प्रतीत होते।

इसी बात पर विचार करती वे अपने आंगन में बैठी थी कि सामने से सुशो जाती दिखलाई दी। बीबी की अजाग्रत चेतना झटके से उठ बैठी। 'इधर तो आना सुशो।' उन्होंने पुकारा।

सुशो आकर सामने खड़ी हो गई।

बीबी ने द्वार बन्द किया और उसे पास बैठा कर बोली—सच बताना सुशो, वे पत्र तूने कुमार को ही लिखे थे ?

सुशो चुप हो रही।

बीबी की मौन ज्वाला से बाष्प-निश्वास तेजी से निकलने लगीं। वे फिर बोली—सच बता, तुझे मेरी कसम है।'

'बीबी !' सुशो ने मुख खोला, 'यह बिलकुल गलत है।'

'क्या ?'

'यही कि मेरा और कुमार भय्या का···।' वह चुप हो गई।

'तो फिर ठीक क्या है ?'

'इसे बताने को खुद उन्होंने ही मना कर दिया है।' उसने कहा और फिर निष्प्रेम नेत्रों से उनकी ओर निहारती बोली—उन पर शक न करो बीबी, वे बिलकुल साफ हैं, बिल्कुल···।'

'सच कहती है तू !' बीबी प्रसन्नता से खिल उठीं।

'हाँ बीबी, सच कहती हूँ। तुम इस समय उन पर शक करने के बजाय धीरज बंधाओ वरना—'

'सुशो ! तू इतना—' कहने के पूर्व बीबी को अपनी अवस्था का ध्यान हो आया।

'मैं उन्हें कितना चाहती हू यह फिर पता चलेगा बीबी, इस समय तो इतना ही मान लो कि मैं सच कह रही हूँ।'

इसके बाद सुशो चली गई और बीबी अपनी गत-आगत अवस्था पर बिचारती वहीं बैठी रहीं।

श्यामसिंह के साथ जब कुमार ने घर में प्रवेश किया तो उसका चेहरा उतरा हुआ था। कुछ ही दिनों में उसका चेहरा पीला पड़ गया था। बैठक में न बैठा वे उसे सीधा बैठक में ले गए। माँ ने उसे आते देखा, उसके मुरझाए चेहरे को देखा और हत् प्रभ सी पूछ बैठीं—आखिर आया तू बुलाने से ही, क्यों नहीं आया इतने दिनों तक ?

'माँ ।' बात उसके गले में अटक गई।

'मैं सब जानती हूं।' माँ ने उसके सिर पर हाथ फेरा, 'मेरा कुमार कभी कोई गलत काम नहीं कर सकता।'

'लेकिन माँ—'

'तू लोगों की बात कहेगा, रावेन के बारे में बतायेगा, वह मैं सब जानती हूं।' मां ने फिर उसे बीच में रोकते हुए कहा।

'पर देखो न माँ जी, शफीक और बीबी पर मेरा कितना विश्वास था, जब उन्होंने ही साथ छोड़ दिया तो फिर और किस पर मैं विश्वास करूं।' कुमार ने क्षीण स्वर में कहा।

'उनकी बात मैं नहीं कहती पर इतना जानती हूँ कि मेरे दिल में तेरे लिए जैसे ऐसे ख्याल आ जायेंगे तो मुझे अपने आप पर भी यकीन नहीं रहेगा।' माँ ने कहा।

'तुम्हारी इसी बात की आशा तो अब तक धीरज बंधाये है अन्यथा और है ही क्या ? लेकिन फिर भी शफीक और बीबी के बिना मुझे कुछ भी अच्छा नहीं लगता मां।'

'तू चिन्ता मत कर रे ! भगवान ने चाहा जल्दी ही वे अपनी

गलती समझेंगे और तेरे साथ हो जायेंगे, पर तू अपने शरीर का तो जरा ध्यान रख।'

'रखता तो हूँ।'

'बहुत ज्यादा।' मां ने उठते हुए कहा, 'सोम को भेजती हूँ मैं, और बातें तुझे वह बतलायेगी।'

और वहीं से उन्होंने आवाज लगाई—'कहाँ गई री, देख तो कुमार आया है।'

कुमार बैठा रहा।

सोम ने आकर उसे देखा तो स्तंभित रह गई। हृष्ट पुष्ट शरीर कुछ ही दिनों में कंकाल-सा लगने लगा था। चुपचाप आकर वह कुमार के पास बैठ गई। कुमार ने उसकी ओर एक बार देखा और फिर रावेन के आरोप तथा श्याम सिंह और सोम की माँ के आचरण की तुलना में लीन हो गया।

'मुझ से कुछ नाराज हो क्या ?' कुछ देर बैठने के बाद सोम ने पूछा।

मैं—मैं तुम से क्या नाराज होऊंगा री। और जो कहीं हो भी गया तो लाभ क्या उठा ऊंगा, हानि के।'

'तो फिर इतने दिनों तक आये क्यों नहीं ?'

'यह सब तेरी मृदुला बुआ जी की कृपा है।' कुमार ने हिचकते हुए कह दिया। कुछ देर रुक कर फिर बोला, 'एक काम करोगी सोम ?'

सोम मृदुला का नाम सुनते ही एकदम कुछ स्मरण-सा करती बोली – उन्हें क्यों व्यर्थ दोष देते हो। मैं तो इस बात पर यकीन नहीं करती कि '

'किस बात पर ?'

'वही बात जो रावेन् चाचा जी ने उनके बारे में कही थी।

'क्यों ?'

'जिस दिन से उन्हों ने यह कहा है वे अकसर रोती रहती हैं। जब कभी मुझे देखती हैं उनका दिल भर आता है। दो तीन दिन की बात है। मैं उनके पास जाकर बैठ गई तो मेरी ओर देखतीं वे बोलीं—तेरा भाग्य कितना अच्छा है सोम ? कुमार का प्यार और विश्वास ही सदा तूने पाया।'

'और कुछ ?' कुमार ने उसे रुकते देख पूछा।

'फिर एकाएक मुझ से पूछने लगीं—तू तो मुझ से नफरत करती होगी सोम अब ? तो मैंने पूछा—क्यों

तो चुप हो गईं।'

'बस या और कुछ ?' कुमार ने फिर पूछा।

'नहीं। और तो कुछ नहीं भाई साहब, पर इतना सच है कि उन्हें कुछ भारी दुख है। पर हां, वह अपना काम नहीं बताया तुमने।' सोम ने कुछ रुक कर तथा याद-सा करते हुए पूछा।

'ले यह दे देना उसे। कहना कि कुमार ने दी है और कहा है कि पढ़ो जरूर।' कुमार ने अपनी जेब से निकालते हुए कापी उसके हाथ में दे दी।

सोम ने कापी लेकर हँसते हुए कहा—मैं और तो कुछ जानती नहीं भाई साहब, पर इतना समझती हूँ कि वे तुम्हारे और तुम उनके बारे में बहुत कुछ जानते हो।

'बस बात मत बना,' कुमार ने उसे झिड़क कर और आगे कुछ कहने को ही था कि तभी उसकी दृष्टि सामने के द्वार की ओट में खड़ी मृदुला पर जा पड़ी। उसने चाहा कि आवाज देकर उसे बुला ले, हृदय उससे मिलने को उत्सुक हो गया परन्तु ओठ अपनी सीमाओं से परिचित-से 'मधु' का अस्फुट स्वर उच्चारण कर शांत हो गये। किन्तु दृष्टि ? वह उसके बिखरे बालों और म्लान मुख पर टिकी रही।

सोम ने उसके उस अस्फुट स्वर 'मधु' को सुना और तुरन्त पूछ बैठी—कौन।

कुमार के स्थिर रहने पर उसने भी उसकी दृष्टि का अनुसरण किया तो देखा कि मृदुला मुहँ-फेरे घर की ओर जारही है।

मृदुला चली गई तो कुमार ने सोम की ओर देखा। उसकी नयना आभा क्षण-भर में ही पर्याप्त परिवर्तित हो गई थी। सोम ने देखा जहाँ पहले चिन्ता की गहरी बदली थी वहाँ से अब आप्त जल बरसने को था। वह उसके कंधे पर हाथ रख बोली—क्या हुआ जी, ? इतने उदास एक दम क्यों हो गये ?

किन्तु उसे स्वयं ही प्रश्न की निरर्थकता का बोध उसके करने के तुरन्त बाद हो गया। उसने अनुभव किया जैसे कारण वह स्वयं जानती हो।

कुमार की आँखों से आंसू गिरने ही वाले थे। अपना मुहँ नीचे कर वह उठता हुआ बोला—अब चला सोम, फिर कभी आऊँगा।

सोम ने उसे द्रुत गति से जाते पाँवों में एक कम्पन, तथा गहन निराशा को लक्ष्य किया।

—:०:—

मनुष्य चाहे कितना भी सशक्त क्यों न हो, प्रभुता उससे अधिक बलवती होती है। कानून के प्रतिकूल बड़ी से बड़ी शक्ति भी पराभव का अनुभव करती है परन्तु उसके अनुकूल होने पर तुच्छता भी ऊंचाई की सीमाओं में समाती जान पड़ती है।

कृपालसिंह के हाथ और बुद्धि पर्याप्त सशक्त होने पर भी प्रधान होने के पूर्व परतन्त्रता के आधीन थे, विवशता उनके सामने रहती थी। पर ज्यों ही वे गांव के प्रधान निर्वाचित हुये उनकी स्वतन्त्रता खूंटा तोड़ भाग खड़ी हुई। रावेन को शक्ति दण्ड बना वे अपना जय-प्रासाद खड़ा करने में तल्लीन हो गये। मजदूरों और किसानों की यूनियन टूट गई। शफीक के उत्साह और श्रम में कमी न आने पर भी उसकी वाणी में वह ओज न था जो सबको एक छोर में बाँध लेता। सुरेश निर्वाचन के उपरान्त जन कार्यों से तटस्थ-सा हो गया था। शफीक और कुमार दोनों को ही वह एक देखना चाहता था। वे अलग हुए तो उसने अपने आपको सीमित क्षेत्र में रख जिन्दगी की उलझनों में डाल दिया। अकेला शफीक गाँव के उन बे पढ़े लोगों के हृदय पर काबू न कर पाया। क्षणिक भावना में आकर मजदूरों ने उसका साथ छोड़ दिया और निर्वाचन में वे सब कृपालसिंह तथा अन्य उम्मीदवारों के झंडे के नीचे आ गये। हारने के बाद यद्यपि वह फिर भरसक प्रयत्न करने में लगा परन्तु जिधर 'हो हुल्ला सुनी ऊधर हो जाना' यह गाँव वालों का आम स्वभाव है, शफीक उसका शिकार हुआ। कुमार के रंग-मंच से उतरते ही नाटक का सूत्रधार रावेन बन गया। गाँव वाले उसके हाथ में साधारण कलाकारों और दर्शकों की भाँति थे। उसकी वासना स्वच्छन्द विचरण करने लगी और गाँव का भाग्य उनींदी रमणी-सा उसकी अलसायी बाहुओं में सो गया। आये दिन साँग तमाशों और दो चार ग्राम सभाओं का आयोजन कर उन्होंने पक्ष-पोषण किया। कुत्ते को क्या चाहिए ? दो टुकड़े।

उन्होंने टुकड़े फेंके और जंजीर हाथ में ले उसके बन्दी होने के क्षणों कीप्रतीक्षा करने लगा।

—:o:—

मृदुला ने कुमार का पत्र पढ़ा तो उसकी बंधी आंसुओं की सीमा घरघरा कर टूट गई। सोम पास ही बैठी थी। उसकी ओर देख संकुचित तथा संभलती-सी बोलीं, 'तू भी इसे पढ़ले सोम, देख ले तेरी बुआ का कलेजा कितना पत्थर है।'

'क्यों बुआ ? क्या हुआ ऐसा ?'

'कुमार के दिल का तार-तार टूट गया है सोम, साँस और शरीर के अलावा कुछ भी तो उसके पास अब नहीं बचा।'

'मैं कुछ समझी नहीं।'

तू समझेगी भी कैसे री ! जो तेरे सामने सदा हंसता आता है और खेलता चला जाता है उसके मन की पीड़ा कभी कैसे जान पायेगी ? लेकिन मालूम है उसके हृदय पर कितने गहरे घाव हैं।

'कितने गहरे ?' सोम सहम गई।

'उसका दिल छलनी हो चुका है। घाव को भरने के लिए, उसकी पीड़ा को भूलने के लिए उसने गांव वालों की सेवा का व्रत लिया था। एक को भूलने की कोशिश में उसने सबको याद करने की कोशिश की। तुझे पाकर उसे कुछ-कुछ सफलता मिली भी। लेकिन भाग्य से उसका, पुराना बैर है, प्यार उसके पांव की जंजीर है। चोट पर चोट खाकर वह जीने को मजबूर है जख्म धीरे-धीरे भर ही रहे थे कि तभी—' मृदुला सिसक-सी उठी।

'तभी क्या ?'

'उसके ऊपर जो लाँछन लगाये गये हैं, सोचा है, वे कितने गहरे हैं ?' मृदुला बोली—पाप और पुण्य के रास्ते में उसके हृदय में जो

सीमा बंध गई थी, तेरी बुआ ने उसे तोड़ दिया। जिस मानवता के मन्दिर की ओर वह बढ़ रहा था, उस पर सूर्य डूब गया. अंधेरा छा गया।

'लेकिन बु—।'

'क्या लेकिन है री ?' मृदुला कहती गई, जिस बेला के बिना वह एक पल भी न रह सकता था वह अलग हो गई। जिस शफीक को वह प्राण मानता था वह साथ छोड़ गया, जिस सोम को उसने अपने टूटे छप्पर के नीचे बैठाया था वह छींटों से भीग गई और—और—' वह सिर नीचे को कर चुप हो गई।

'कहती जाओ बुआ, छिपाओ आज कुछ मत। जिसे मैं जानती हूं, जानना चाहती हूं उसका कुछ भी मुझसे छिपा न रहने दो। बतलाओ।

'छिपाना ही क्या है,' मृदुला ने कहना शुरू किया, 'जो मधु कुमार के जन्म मरण के लिए बनी थी उसी ने उसे पाप के अंधकूप में धकेल दिया।'

'क्या पहेली है बुआ यह ? मैं तो अभी भी कुछ न समझ सकी।' सोम ने कहा।

'अच्छा तो यही था कि तू न समझती, लेकिन लगता है जैसे अब समझाना ही होगा। सुनेगी तू सब कुछ ?'

'हां !'

'अच्छी बात है। तो ले ...' मृदुला ने वह पत्र उसकी ओर बढ़ा दिया।

सोम ने पढ़ कर सिर ऊपर उठाया तो आंखें तर थीं। मृदुला ने पूछा—अब पूछ, क्या समझ में नहीं आया ?

सोम ने कुछ देर मृदुला के मुहँ की ओर देखा और फिर बोली—इतना दर्द है भाई 'साहब के हृदय में। पर बुआ, तुम—'

'चुप रह !' मृदुला का गला अपनी रुद्धता प्रकट कर रहा था, 'मैं अब उसकी कुछ नहीं। इन दीवारों की ऊंचाई, इन रुपयों के वजन

और इज्जत की मोहरों पर मैं बिक चुकी हूं। मेरा कोई मूल्य नहीं।

'तो तुमने ऐसा कहा वास्तव में नहीं था ?'

'हां. सोम। मेरे नाम से उसको बदनाम किया गया, उसका स्वपन -भवन तोड़ दिया गया और ।' वह फिर सिसक उठी– क्या कहती होगी मेरी बेला, मैंने उसे क्या-क्या वचन दिए थे ! मरते हुऐ भी उसने कहा था—उन्हें कभी दुखी न करना।

'मैं उन्हें सब कुछ समझा दूंगी। तुम बेकार दुखी मत करो मन को।' सोम ने समझाया, 'मैं उनसे कह दूंगी कि मेरी बुआ एक कैदी है। बन्धन और लज्जा की जंजीरें उसे कसे हैं।'

'तू कुछ मत कहना सोम,' मृदुला का छिपा आग्रह सामने आगया. 'एक बार मुझे उससे मिला दे, बस। उसकी गोद में सिर रखकर जी भर रोना चाहती हूं मैं।'

सोम ने आंखों के बहते पानी को देखा। मृदुबा के नयनों से गिरते बून्द उसके हृदय में घुलती चली गई। एक बून्द पानी में कितनी पीड़ा घुल-घुल कर बहती है, उसने आज जाना था मधु का हाथ पकड़ कर बोली—मैं उन्हें बुलादूंगी, तुम मिल लेना।'

सच !' उल्लास मृदुला की वाणी से कह ला गया, 'मैं कुमार से मिल पाऊंगी !'

'चुप-चुप ! रावेन चाचा जी आ रहे हैं।' दोनों चुप होकर बैठ गईं।

—:o:—

गाँव की दशा पर्याप्त बिगड़ गई थी कोई उचित नेतृत्व न पाने के कारण किसानों को अनेका नेक चालाकियों का शिकार होना पड़ रहा

था । अज्ञान और मिथ्या ज्ञान-दम्भ के भार से दबे वे उसे सहते चले जाते ।

सर्दियों में केन सोसाईटी की ओर से किसानों को बोनस देने की घोषणा की गई । पूर्व वर्ष के गन्ने पर यह किसानों का अतिरिक्त-लाभ था ।

यहाँ किसानों से तात्पर्य उन सभी से है जो मिल को गन्ना देते थे । चाहे वह जमींदार हो या कोई गाँव वाला ।

रामगढ़ के निकट वर्ती कस्बे में ही सोसाइटी का 'आफिस' था । किसान अपना-अपना बोनस लेने वहां पहुँचने लगे । आफिस के सेक्रेटरी महोदय ने प्रथमिकता उन्हीं लोगों को दी जो सोसाइटी के सदस्य थे या जिनका बोनस सैकड़ों और दहाइयों में था । ४-)-४) और ५)-५) वालों को पहले नहीं दिया गया । जब पहले दर्जे वालों में से सबको बोनस मिल गया तो सहसा ही बोनस देना बन्द कर दिया गया और कह दिया गया कि सब बोनस बंट गया ।

जो लोग उस दिन बोनस लेने गये थे, उनमें शफीक और श्याम-सिंह भी थे । श्याम सिंह को तो बोनस मिल गया परन्तु शफीक को न मिल पाया था । वह एक छोटा-सा किसान था और उसका बोनस केवल ५) था । अन्य किसानों के साथ जब उसने इसके विरुद्ध आवाज उठाई तो श्याम सिंह भी उसका पक्ष लेते बोले—ठीक तो है सेक्रेटरी साहब, इन लोगों की परेशानी का कुछ तो ख्याल आप कीजिए ।

'देखिए साहब !' सेक्रेटरी सक्रोध बोला—आपको बोनस मिल चुका है, अब और क्या चाहते हैं ?'

'मैं अपने लिए नहीं कह रहा साहब, मैं तो इन लोगों के बारे में आपसे कह रहा था ।' श्यामसिंह बोले ।

इन्हें भी तो बोनस मिल चुका है, अब क्या दो बारा बाँटेंगे हम,' सेक्रेटरी ने कहा ।

'यह सफेद झूट और सरे आम !' शफीक तड़क गया, 'हम बोनस लेकर ही यहां से हटेंगे।'

'कौन है तू ? सेक्रेटरी उसकी ओर लपका, मालूम है कहाँ बातें कर रहा है ?'

'सोसाइटी के दफ्तर में और अपने एक नौकर से !' शफीक ने उत्तर दिया।

सेक्रेटरी ने हाथ बढ़ा कर उसके गाल पर लगाना चाहा किन्तु शफीक ने उसे पकड़ सेक्रेटरी को जमीन पर पटक दिया। खड़ा होता बोला—कलम चलाओ सेक्रेटरी इन हाथों से, हमसे टकरा कर टूटने का डर है।'

सेक्रेटरी उठा और दफ्तर के अन्दर चला गया। दरवाजा बन्द कर वह वहीं बैठ गया। शफीक किसानों के साथ घंटों वहां बैठा रहा और अन्त में लौट आया।

दूसरे ही दिन बोनस वितरित करने की सूची ग्राम वासियों के अंगूठे सहित आगे भेज दी गई। बोनस किसी को न मिल सका। शफीक ने आवेदन पत्र लिखकर उस पर गाँव वालों के दस्तखत करवाये किन्तु किसी ज़मींदार या सोसाइटी के सदस्य के हस्ताक्षर न होने के कारण वह आगे न जा सकी। गांव में असहयोग और गिरावट की यह चरम परिणति थी।

—:o:—

कुमार इन सब घटनाओं को सुनता और अनसुनी कर अपनी कोठरी में पड़ा रहता। इनका उस पर कोई प्रभाव न पडता ऐसी बात न थी। उपरोक्त घटना को जब उसने सुना तो उसका हृदय-पंछी

छटपटा उठा और शफीक से मिलने को उडना चाहा। परन्तु जब उसकी दृष्टि अपने कटे परों की ओर गई तो यह कह कर चुप हो गया - जो भी हो, मुझे इससे क्या ?

कितनी वेदना थी उसकी इस उपेक्षा में, इसे तो उसके बन्धन ही समझ सके।

अन्य कुछ आश्रय न पा कुमार ने एकान्त को अपना साथी चुना था। उसी के साथ उठता-बैठता वह अपने स्वप्नों को यथार्थ के अंक में सोता देखता तो उसे लगता जैसे वहां आदर्श की ऊंची दीवार से उतर कर विफलता बैठी खेल रही हो।

एक दिन अपने कमरे के बाहर बैठा वह धूप सेक रहा था कि रिश्ते के एक ताऊ जी उधर आ निकले। कुमार की ओर देख बोले—देख लिया बे लौंडे अपनी ऊधम गर्दी का नतीजा !

'ऊधम गर्दी कैसी ताऊ जी ?' उसने पूछा

'अच्छा, अब भी वही ढाक के तीन पात ! सारे गाँव ने तो एक लौंडिया के पीछे उल्लू बना दिया और पूछता है—ऊधम गर्दी कैसी ताऊ जी !'

कुमार उनके मुख से यह परिताड़ना सुन स्तब्ध रह गया। धीरे से बोला, 'आप मुझे गलत समझ रहे हैं ताऊ जी !'

'अबे और तो सब मैं समझ गया, पर यह समझ में नहीं आया कि तेरे सिर पर जूते क्यों नहीं पड़े।' ताऊ जी बोले, 'आगे से संभल कर चलना बेटा, कभी हमें भी तेरी पिटी टाट की मदद करनी पड़े।'

'इसकी आप फिक्र न करें, मुझे कभी आपकी मदद की जरूरत नहीं पड़ेगी।'

ताऊ जी चले गये।

उसी दिन शाम की बात है—ताऊ जी एक चमारी का हाथ पकड़े घर में खींचे लिए जा रहे थे।

कुमार ने देखा तो बड़बड़ा उठा—यही तो पुण्य का पावन मार्ग। औरों की सब मेहनत उधम गर्दी तथा अपनी वासना दीया प्रकाश पुंज।

—:o:—

इसी प्रकार की एक और बात है।

एक दिन कुमार सन्ध्या-समय घर से निकल गाँव के ट्यूब वैल की ओर चला। मार्ग में लाला रामदीन की दुकान पड़ती थी। जब वह उसके सामने से निकला तो शिब्बू—बब्बन का एक साथी—रामदीन से झगड़ रहा था। कुमार भी क्षण-प्रतिक्षण एकत्रित होती भीड़ में खड़ा हो गया।

बात १०) के ऊपर थी। लाला जी कहते थे कि शिब्बू ने उनका सौदा लिया है और शिब्बू इससे साफ मुकर रहा था। बात बढ़ी और गाली-गलौज हो गई। शिब्बू ने पकड़कर लाला जी को दो-तीन घूंसे लगाए और जाता हुआ कहता गया—आगे से कभी रास्ते में या कहीं भी मुझे छेड़ा तो समझ रखना, तबियत ठीक कर दूंगा।

बब्बन तब तक वहाँ आ गया था। शिब्बू से उसने पूछा—क्या बात है बे! कैसी वहियाती है यह?

शिब्बू तुरन्त बोला—कुछ भी नहीं बब्बन चार दिन से सेठ बन गये हैं। कहता है मुझ पर १०) उधार हैं।

'यह तो गलत बात रामदीन।' बब्बन ने कहा, 'ऐसे तो कल तुम मुझ पर भी बताने लगोगे।'

रामदीन के बब्बन पर ५) चाहते थे। उसके वाक्य का व्यंग्यार्थ सुन वह चुप रह गया। सोचा कहीं दस की उम्मीद में पांच भी न जायें।

कुमार ने बीच में पड़ना चाहा परन्तु अपनी स्थिति पर विचार कर वहाँ से चल दिया।

ऐसी घटनाएं रामगढ़ में आए दिन होती थी। ग्राम पंचायत में प्रार्थनाएं जाती और साक्षी न मिलने पर लौट आतीं। अंधेर नगरी चौपट राजा! गवाह अपनी जान मुसीबत में क्यों डाले?

—:o:—

ताई चाची और अन्य सबने कुमार की हालत देख उसकी माँ को सुझाया—लड़के की शादी कर दो तो सब ठीक हो जायेगा।

'बहू का मुंह देखने को मेरा तो जी तरसता है। पर उसकी हालत देख कर कहने को जी नहीं करता। बड़ा दुखी रहता है आजकल।' मां ने कहा।

'अरी शादी के बाद सब ठीक हो जायेगा। बहू के पांव देखे नहीं कि इसकी अकल अपने आप ठिकाने आ जायेगी।' एक प्रोढ़ा ने गंभीरता पूर्वक कहा।

'ठीक तो कह रई है री!' चौधरी मेहर सिंह की पत्नी ने कहा, 'हमारे लौंडे को ही देख लो, ब्याह से पैले कुछ भी काम घर का ना करै था, पर अब

'अरी कहवै ही क्या है, अब। सब काम करने लगते हैं। सारी

पढ़ाई एक तरफ और तीन हाथ की लुगाई एक तरफ।' ताई ने विनोद की पुट बात में दी।

बात मां के मन में बैठ गई। उसी समय कुमार को आवाज लगा दी। पास आकर वह बोला – क्या कहती हो माँ ?

'कहना क्या है रे !' ताई बोली—अब तो तू ब्याह कर ले।

कुमार ने इसे हंसी समझा और माँ की ओर देखता बोला—तुम कहो मां, क्या कहती थीं ?

'यही कि मैं तेरे ब्याह के लिए लड़की ढूंढूंगी, तू कुछ आनाकानी मत करना।' उन्होंने कहा।

'इस फिकर में तुम बिल्कुल मत पड़ो माँ ?'

'क्यों ? मैं उम्र भर तुझे बना-बना कर खिलाती रहूंगी और तू खाये जायेगा। कुछ करना न···

लेकिन कुमार जा चुका था। जाकर खाट पर लेटा तो मां के वाक्य चुभते तीर-से उसके अन्तस्तल में आ-आ कर लगने लगे। उसने स्कूल की नौकरी छोड़ दी थी। खाली घर पड़े रहने पर आज माँ ने भी यह बात कही। यह बात थी—मां की, ममत्व, स्नेह और प्रेम की देवी मां।

कुमार ने देखा—सत्य और विचार दो विभिन्न तत्व हैं।

'कुछ न कुछ काम आज से मैं करूंगा।' उसने निश्चय किया और सोम के घर की ओर चल पड़ा। सोम ने खबर भेजी थी।

छोटा आदमी किसी काम को करे तो उसे रोकने और बताने वालों की कमी नहीं। इसके विपरीत उसी कार्य को—चाहे वह

अनुचित ही क्यों न हो—कोई बड़ा आदमी करे तो खुश हो उसमें कुछ अच्छाइयां ढूंढने लगते हैं।

१५-१६ वर्ष की गाँव की किसी लड़की का विवाह न हो, सबके घरों में चर्चा होने लगती है—जवान लड़की को घर में रख रखा है, क्या कलयुग आ गया है।

जगह-जगह छींटा कशीं और चिल्लपों और बैठकों में लोग चर्चा करते हैं—इतनी जवान लड़की हो गई पर शादी करने का नाम तक नहीं लेता। पता नहीं, घर में रखेगा क्या उम्र भर ?

उन्हीं गांवों के जमींदार और रईस घरानों की लड़कियां प्रायः २१-२२ वर्ष की आयु से कम में नहीं ब्याही जाती। किन्तु आश्चर्य ! कभी कोई इस पर चर्चा नहीं करता।

मृदुला की आयु भी इस समय लगभग २०-२१ वर्ष की थी। अपने यौवन और विकास की चरम उत्कर्षः अवस्था में जीवन के चौराहे पर खड़ी इधर-उधर देख रही थी। श्यामसिंह की पगड़ी उछाल अपना कार्य सिद्ध होते देख तो कुमार को कुछ विशेष हिचक न हुई थी परन्तु अब, जब मृदुला को वह देखते, उनके हृदय में एक दम कोई कह उठता- लड़की की शादी कर दे कृपाल, अब तुझे हर कदम सँभाल कर उठाना है।

'शेर के साथ कोई क्या खाकर खेलेगा। मुझे चिन्ता कैसी ?' वे अपने हृदय को ढाँढस देते और फिर मन का चोर कह उठता—

तू ही एक तो नहीं कृपाल, आदमी तो और भी गाँव में हैं।

'तो फिर ठीक है।' कृपालसिंह ने अपनी आशंका का दमन किया।

विवाह की तैयारियां प्रारम्भ हो गईं।

—:o:—

कुमार और सोम बैठे बैठक में बातें कर रहे थे। सोम तेज स्वर में कह रही थी तुम्हें कुछ काम करना ही होगा भाई साहब, ऐसी बातें सुनने पर मैं तुम्हें चुप नहीं बैठने दूँगी।

'कहती तो ठीक है सोम,' कुमार ने परास्त योद्धा की वाणी में कहा, 'किताबों में पढ़ा था, बुजुर्गों से सुना था और सिनेमा-नाटकों में देखा था कि मां अपने बेटे को चाहती है, उसकी सम्पदा को नहीं, परन्तु अनुभव बता रहा है—पैसा हर प्यार की कड़ी का जोड़ है। शरीर के सुख की अधिकता और सेवा-भावना का परम पुण्य—अपनी गुलामी की पूरी कहानी—वात्सल्य के मूल में भी जवान लड़के के लिये सुरक्षित है।'

'इतना समझने पर भी तुम चुप अपनी कोठरी की दीवारों से घिरे रहते हो। कुछ न करने का निश्चय-सा किए हो।'

'नहीं सोम! इतने दिनों से जगह-जगह नौकरी की दरख्वास्तें दे मैं उनकी स्वीकृति की प्रतीक्षा में था। पुस्तकों के आदर्श, कल्पना के स्वपन और राम राज्य की स्थापना के चिन्तन में लीन था।'

फिर क्या निश्चय किया? क्या परिणाम निकला?'

'यही कि काव्यों और आख्यानों की रचना रचनाकार के स्वपनों की सुखद अनुभूति के प्रति आत्म शांति का प्रयास मात्र है। वस्तुतः ऐतिहासिकता दानवता और पाप के नग्न नृत्य के अतिरिक्त कुछ नहीं। जिन्दगी एक आँसुओं की कहानी है और उपेक्षाओं का इतिहास! शेष सब कल्पना है।

'लेकिन अपने विषय में क्या निश्चय किया तुमने?'

'अपने बारे में इससे अधिक अभी कुछ नहीं सोचा कि किसी अँधेरी रात में रामगढ़ के मन्दिर में दो आंसू चढ़ा मैं कहीं दूर चला जाऊंगा। वहाँ, जहाँ मेरे पुण्यों की कोई प्रशंसा न करे और पापों की बुराई। मेरे भरे पेट से किसी को सुख न हो और भूख से चिन्ता। प्यार की इस दुनियाँ को छोड़ वहाँ जाने का मैंने निश्चय किया है जहां न मुझे कोई जाने और न प्यार या नफरत के बोल कहे। मैं अपने आपको उपेक्षा की धार में बहाना चाहता हूं परन्तु उनकी नहीं जो मुझसे परिचित हैं।'

'और रामगढ़! उसे छोड़ने के पहले इतना तो सोचो कि किसी दिन तुमने उसके सुखों की सुखद जिज्ञासा प्रकट की थी।'

की थी सोम, किन्तु उस समय मैं सुख को एक शारीरिक उपलब्धि मानता था। मैं मानता था कि शरीर के सुखी होने पर मनुष्य सुखी हो सकता है।'

'और अब? पर तुमने उन लोगों की मानसिक शांति का भी प्रयास किया था।'

'किन्तु था तो वह मेरा भ्रम ही। श्याम-पट पर चाक की सफेदी पोतना मैं चाहता था। भूल गया था वह केवल मेरे हाथों को गन्दा कर सकेगी, तख्ता बिना रंग के न सफेद हुआ है और न होगा। रंग केवल उसके पास है जिसने उसे बनाया। फिर …'

'फिर क्या? रोगन वाले का भी तो कुछ काम है। वह तख्ते के रंग को बदलने में समर्थ नहीं क्या?' मृदुला ने वहां प्रवेश कर कहा।

'कर तो सकता है,' कुमार ने उसकी ओर देखे बिना तन्मयता में उत्तर दिया। किन्तु वाणी के परिवर्तन का बोध होने पर उसने मृदुला की ओर देखा और नीचे की ओर देखता बोला—'लेकिन रोगन करना तो प्रत्येक के वश की बात नहीं। एक रंग को मिटा कर उस पर दूसरा रंग तो कोई तुम जैसा सफल कलाकार ही चढ़ा सकता है।'

मृदुला कुछ उत्तर न दे सकी। वाक्य की गहराई समझ चुप हो खड़ी रह गई कुमार के शब्दों की निराशा और उसका गहन व्यंग उसे कुरेदता सा चला गया।

'चुप क्यों हो गई मधु, कहो न अब भी कि मुझे ।'

'हाँ। अब भी कहूँगी। तुम मानों या न मानों लेकिन मैं इसी प्रकार कहती रहूंगी। मृदुला ने आगे बढ़ कर कहा। उसका स्वर भारी होगया था

कुमार ने इसे अनुभव किया। बात के गाँभीर्य को विचारा और कहा—'उसका तो मेरी ओर से सदा तुमको अधिकार रहा है। कभी मना तो नहीं किया मैंने।'

'किन्तु फिर भी ।'

'फिर क्या? तुम्हारा अधिकार कहने का है और मेरा करने का। कहे तुम कुछ भी जाओ और करे मैं कुछ भी जाऊं।'

'इसका तो मतलब यह हुआ कि मेरी बात की कीमत कुछ नहीं।' मृदुला ने सीधा उसकी आंखों में झांका।

कुमार चुप हो गया।

मैं जानती हूं कि तुम्हारे बस की बात ऐसा कहना नहीं है। यदि कह सकते तो आज इतने नीचे न धकेल दिए जाते। लेकिन फिर एक बार मेरी बात रख लो न! उस बीती को भूल कर फिर प्रयास कर देखो। पिता जी और रावेन जो कुछ अब कर रहे हैं, उसे रोक दो।'

'मैं उन्हें संयत करूं, गाँव की सेवा करूं और उनके साथ फिर उसी कीचड़ में चला जाऊं।' कुमार ने कहा, 'किन्तु तब उसके परिणाम के ठीक समय पर पिता और भाई के प्रेम में तुम मुझे नीचे ढ़केल देना। यही न?'

'हाँ, यही।' मधु कंपकंपाती वाणी में कह उठी—यही समझ लो कुमार, पर तुम्हें यह काम अवश्य करना होगा। नहीं तो । कुछ देर वह रुकी और फिर बोली—तुम्हें अपनी निर्दोषिता का क्या प्रमाण

दूं मैं ? जब तुम्हें स्वयं मेरे दोष पर विश्वास हैं तो फिर तुमसे अधिक और कौन विश्वास पात्र है जिसे तुम्हारे सामने लाऊं।'

'विश्वास-अविश्वास का कोई प्रश्न नहीं मधु। इस भरी दुनियां में वह कौन है जिसे मुझ पर विश्वास है ? शफीक को ही देखो न।'

'मैं सब समझती हूँ।' मधु ने उसके सिर पर हाथ रख दिया—तुम्हारी व्यथा को मुझसे अधिक कौन समझेगा ? लेकिन तुम मुझ में हो। मुझे अपने कुमार पर पूर्ण विश्वास है।

कुमार ने मुहं ऊपर उठा 'अपनत्वमयी' की ओर देखा। सूखा चेहरा, गीली और भरी आवाज ! मधु का हाथ पकड़ अपने निकट खींचता वह बोला, 'तू क्या है मधु ? मैं कभी यह नहीं समझ सका। आज भी हार गया।

'तो फिर मेरी बात मान ली गई।' सोम ने हंस कर खांसते हुए कहा—अब तो कुछ आनाकानी नहीं।

'न मान कर रहूँगा कहां री।' कुमार हंस पड़ा, 'पर आज देख लिया न तूने, मृदुला तुझसे अधिक शक्तिमयी है।'

'बस रहने दो।' मधु ने अपना सिर उसकी गोदी में रख दिया। आज उसके उल्लास की सीमा न थी।

उठ कर वे तीनों चले तो बाहर द्वार पर रावेन खड़ा मिल गया। कुमार का हाथ पकड़ बोला · आज तुझसे पूरी तरह निबटना होगा।

कुमार हाथ छुड़ा कर बोला··· 'हर समय हार-जीत का दॉव ही मत लगाया करो रावेन कभी आदमियत की जून में भी आ जाया करो।'

'तुमसे सीखूंगा !' रावेन बोला·· मेरे सामने···।

'चुप रहो चाचा जी।' सोम बोली—अपने खून पर तो कम से कम इलजाम मत लगाओ मुझसे ही सन्तोष कर लो।

'सोम !' रावेन का साहस लुप्त-सा होने लगा, मैंने कुछ···

'आपने कुछ कहा, यह मैंने कब कहा चाचा जी, मैं तो यह कह

रही हूं कि मैं ही कलंकिनी सही, बुआ जी का कुल-दीपक—को—तो मत लाँछित करो।

रावेन चुपचाप एक ओर को चला गया। उसके पांव कह रहे थे कि वे परिवर्तन में रंग के रँगना चाहते हैं।

—:०:—

कृपालसिंह ने अपने प्रधान होने के पश्चात से सारे गाँव पर पूर्ण प्रभुत्व जमाने का प्रयास अनवरत रूप से चालू रखा। ग्राम पंचायत के चन्दों और कर का सारा पैसा उन्होंने अपने मुहल्ले में सड़कें बनवाने और इसी प्रकार के अन्य कार्यों में व्यय किया। तालाबों, बाजार और स्थानीय स्थलों की जो भी आमदनी थी, उस सबसे कृपालसिंह ने गांव के विकास का कार्य प्रारम्भ किया। परन्तु उस विकास में गाँव वालों का भी कुछ लाभ हुआ, ऐसा कभी देखने में न आया। जितने भी कुओं मार्गों और थम्ब आदि में निर्माण-व्यय हुआ था, वे सब जमींदारों की पट्टी में थे। गाँव वालों ने ठीक समय पर धोखा खाया था। सदस्य और प्रधान दोनों की उनमें ही नियुक्ति कर वे जो पुण्य कमा चुके थे, उसके सन्मुख सारे पाप तुच्छ थे। अनाचार और व्यभिचार की जो शिकायतें पंचायत में जातीं, उन सबको निराधार बतला कर अस्वीकृत कर दिया जाता।

इसके विपरीत घास खोदने, गन्ना खाने, साग तोड़ने आदि पर ५) और १०) के जुर्माने किए गए। रामगढ़ के आदमियों ने एक बार रियासत का दब दबा देखा था। अब उन्होंने कानून की ताकत देखी।

इन सब के बीच में कुमार के मधुर स्वप्नों का क्रीड़ागार---मिडिल स्कूल--उचित व्यवस्था और योग्य अध्यापकों के अभाव में दिन प्रतिदिन अन्त की ओर उन्मुख होता जान पड़ता था। इस वर्ष का मिडिल कक्षा का परिणाम अत्यन्त ही गिर गया था। ५० लड़कों में से केवल ५ ही सफल हुए थे। इसका एक मात्र कारण मैट्रिक फेल और अप्रशिक्षित अध्यापक थे। स्कूल की विद्यार्थी संख्या यूं तो इस वर्ष ही बहुत कम हो गई थी, परन्तु अब उसके टूटने तक की आशंकायें व्यक्त की जाने लगीं।

कन्या पाठशाला में सरोज यथाशक्ति परिश्रम कर रही थी। विद्या बीबी और उसका संयुक्त सहयोग अपनी और पाठशाला की सत्ता अभी सम्मान प्रद ही बनाये था। उसकी दशा अभी ठीक थी। किन्तु फिर मिडिल स्कूल का प्रभाव उस पर पड़ा और लड़कियों की संख्या कम हो गई। दोनों संस्थाएं अब डगमगा गई थीं।

कुमार ने इस सबको देखा तो उसका हृदय विचलित हो उठा। अपने श्रम और गांव की सुखानुभूति का मिटता अस्तित्व उसकी आत्मा को धिक्कार उठा। मृदुला के आग्रह के साथ स्वर मिला कर लड़के उसके कल्पलोक में प्रार्थना-सी करने लगे। वह व्यग्र हो उठा। उसे लगा जैसे स्कूल की दीवारें उसके कान में कह रही हों—कल अगर हमें टूटना पड़ा तो हम पुकार-पुकार कर कहेंगी—'यही वह दुर्बल-पांव राही है जिसकी मंजिल प्रथम बसेरा यह स्कूल था। यही वह डगमगाता पथिक है जो मार्ग के पहले कांटे की धार से मूर्छित होकर गिर पड़ा, आगे न बढ़ सका। इसकी वह अधूरी लालसा थी जिसने स्वयं को विस्मृति के अंक में छिपाने के लिये, हमारा निर्माण किया, हमें गिराया —जैसे हम कोई खिलौना हों।'

कुमार ने उस ओर से अपने कान बन्द करने की चेष्टा की तो दूसरे कान पर सोम और मधु एक साथ कह उठीं—तुम्हें यह काम करना ही होगा। तुम्हें यह ·· ।

दोनों कानों को बन्द कर वह कोठरी के एकान्त से घबरा उठता तो उसे अपनी हथेलियों को चीरती मां की-सी आवाज सुनाई पड़ जाती—खाली और निठल्ला आदमी किसी का प्यारा नहीं। कोई उसका नहीं। कोई उसके साथ नहीं।

अन्त में उसके मस्तिष्क के अणु अणु में गूंज सी हो उठती—जीना चाहते हो तो काम करो। दूसरों के ऊपर बैठने से, अपनी गति रोकने से, तुम जीवित नहीं रह सकते। तुम ।

'बेला—' वह बुद बुदा उठता—तुम ही बताओ न मुझे राह, दिखाओ न कुछ प्रकाश!

जिधर भी गांव में वह जाता, वहीं गन्दे गाने और वही कड़वी आवाजें फिर सुनने को मिलतीं जो पहले थीं। वहीं वासना और शोषण का चक्र प्रवर्तन, जो पूर्वतः था। वही असभ्यता, बर्बरता की सीमा! वह सोचने लगता—वही यह बाग है जिसमें मैंने फूल के पौधे लगाये थे, यही वे पौधे हैं जो पानी न मिलने से कंटीली और सूखी डालियों के रूप में हरियाली के लिए तड़फ रहे हैं।

इसी प्रकार के विचारों में लीन एक दिन वह जंगल की ओर जा रहा था। पुलिया पर जाकर बैठा तो एक मजदूर मिल गया।

'राम राम कुमार भैय्या' दूर से उसने सिर झुका दिया

कुमार ने उसकी आदर-भावना का प्रत्युत्तर दिया और उसकी ओर देखता चुप बैठ गया।

'हमें बिल्कुल भूल गये क्या?' उसने पूछा।

'नहीं तो भोले, तुम लोगों ने ही मेरा साथ छोड़ दिया, मैं तो कभी अलग नहीं रहा तुमसे!'

'हम भरम में थे भय्या। आँखें होते हुये भी अंधे हो गए और—हमें कुछ सुध-बुध ना थी।'

'कोई बात नहीं भोले, मैं तो तुमसे नाराज हूं नहीं। हां, तुम अब भी हो।'

'हमने तुम्हें धोखा दिया है भय्या, किस मुंह से तुम्हारे सामने आयें।'

'ऐसा न सोचो भोले,' कुमार बोला, 'मुझे हमेशा अपना समझो। दुख-सुख और अच्छे-बुरे सब कामों में मैं तुम्हारे साथ हूं। तुम लोग मुझे ठोकर दिखा सकते हो, मेरे बस की यह बात नहीं।'

'कुमार भय्या!' भोले भावमग्न हो गया, 'जाने क्या पत्थर पड़ गए थे हमारी अकल पर। ऊंच-नीच कुछ भी विचारे बिना हम तुमसे दूर हो गए। तुम्हारे ऊपर शक कर जनम जनम का पाप हमने सिर से बांध लिया है।

'किस पंडित की बात कहते हो भोले,' कुमार हंसते हुए बोला, 'मेरी बात मानते हो तो यह भी मानना पड़ेगा कि कोई पाप, कोई गलती या कोई भी बुरा काम मान लेने के बाद दुनियाँ में नहीं रहता। लोक-परलोक दोनों का भला अगर चाहते हो तो जो गलत समझते हो उसे मत करो।

'तुम देवता हो भय्या!' तुम्हीं ऐसी बात न कहोगे तो हमारा बेड़ा पार कैसे लगेगा।'

'देवता कुछ नहीं भोले,' कुमार ने कहा, 'सिर्फ आदमी को ऊंचा उठाने के लिये एक तस्वीर मान ली गई है जिसकी खूब सूरती देख हम भी वैसा ही बनने की कोशिश करें।

'तुम अपनी बात आप जानो।' भोले ने गंम्भीरता पूर्वक कहा, 'हमें तो इतना पता है कि तुम झूठ नहीं कहोगे। जो कहते हो, हमारे लिए। बस। इससे ज्यादा जानने की ना हमें जरूरत है न इच्छा।'

'लेकिन...'

'तुम फिर पहली बात कहोगे, मैं हाथ जोड़ता हूं तुम्हारे भूल जाव उन बातों को। सब लोग तुम्हें पाने को बेचैन हैं।' भोले आशापूर्ण स्वरों में बोला।

'सच भोले ?' कुमार ने कहा, 'शफीक तो तुम लोगों के साथ है ही। फिर घबराते क्यों हो ?

'वह बड़ा महनती आदमी है भैया, हमारे सुख-दुख में मरने को तैयार रहता है पर··· ···।'

'पर क्या ?'

'इतनी तेज बुद्धि उसकी नहीं जो इन जमीदारों की चाल समझ सके। उसके लिये तो तुम्हारी ही जरूरत है।'

'अच्छी बात है। मैं फिर तुम्हारे रास्तों में आऊंगा। लेकिन सोच लेना, हूं मैं वही लम्पट जो पहले था।'

'हमने सब सोच लिया है। भोले ने चलते हुए कहा—तुम जैसे हो हमारे हो और हम गये बीते जो कुछ हैं तुम्हारे हैं।

— :o:—

भोले से विदा ले कुमार जब आगे चला तो रास्ते में एक तालाब पड़ता था। उसके किनारे ही से लगा हुआ चौधरी कृपालसिंह का आम का बाग था। कुमार तालब के किनारे से होता हुआ बाग में घुसने को ही था कि उसकी दृष्टि भीतर खड़े कृपालसिंह पर जा पड़ी। वह पांव पीछे लौटाने लगा। किन्तु तभी उसने एक भंगी की लड़की शीशम को वहाँ खड़े देखा। उसकी जिज्ञासा जाग उठी और वह भीतर की ओर चलने लगा। जमींदार साहब का मुख शीशम की ओर था वे उसे देख न सके। उसकी ही तरफ बढ़ते रहे। शीशम ने कुमार को

देख लिया था। चुपचाप एक स्थान पर वह खड़ी हो गई। शीशम के निकट पहुँचने पर कृपालसिंह ने कहा आज रात को घर में आ जाना री ! ५) दूंगा।

शीशम ने एक बार उनकी ओर देखा और फिर नीचे को निगाह कर बोली—क्यों चौधरी जी ! लड़की तो तुम्हारी भी जवान है। उसे ही दे दो तो घर के पैसे घर में रहेंगे और··।

'जबान मत खोल, तू किस काम आएगी ?'

'कूड़ा उठाने के !' शीशम ने कहा और पीछे हटती कुमार की ओर लपकी। कृपालसिंह का हाथ उसकी ओर बढ़ रहा था।

कुमार को देख चौधरी तो चले गये पर शीशम ने उसके पास आकर कहा—देखा बाबू जी, यह हैं इन रईसों की शान, रोज इसी तरह हम गरीबों को परेशान करते हैं।

कुमार चुप बाहर की ओर चल दिया तो उसके पीछे आती शीशम ने पूछा तुम तो हम लोगों की मदद पर उतरे थे बाबू जी, अलग क्यों हो गये ?

कुमार ने उसकी ओर देख कर कहा—अब अलग नहीं रहूंगा शीशम, आज से फिर काम शुरू करता हूं।

तेजी से वह घर की ओर चल पड़ा।

परीक्षा-परिणाम देखने के बाद से विद्या बार-बार कुमार के यहाँ जाने की बात सोचती। सुशो से सब बातें पूछने के बाद से वह उससे

मिलने को अत्यन्त व्यग्र थी। परन्तु न जाने क्यों इतने दिन उसके यहाँ न जाने का संकोच उसे रोके था। एक दिन सरोज उनके यहाँ आ गई और उसे साथ ले कुमार के यहाँ जा पहुंची। वह बैठा रोटी खा रहा था और माँ सामने बैठी कह रही थी—'अब कुछ मेरी भी फिक्र कर ले कुमार, कुछ तो ख्याल मेरा कर।'

क्या ख्याल करूं माँ, सोचा तो है कि आज से कुछ काम करूंगा।'

माँ ने सुना तो समझा कि वह अब कुछ संभल गया है। खुशी-खुशी वे कह उठीं—तेरे पिता जी को चिट्ठी लिख दूं कि कुमार की तबियत अब ठीक है। तू तो डालेगा नहीं।

'मेरी तबियत खराब कब थी। मैं तो कभी बीमार हुआ ही नहीं।'

कुमार ने पूछा 'शरीर से तो नहीं पर मन से तो बीमार है रे।' एक ओर खड़ी विद्या बोली।

कुमार ने दृष्टि उठा कर देखा तो उनके पीछे सरोज खड़ी हंस रही थी। नमस्ते कर वह बोला, 'बैठो बीबी, बड़े दिनों में आई आज।'

'आना मुझे था या तुझे? अपनी बात मेरे ऊपर टालता है।' बीबी ने कहा।

'तो फिर मैं माफी मांगता हूँ।' कुमार ने उठते हुए कहा चलो बैठक में बैठेगें।'

बैठक में पहुंच बीबी ने कहा—सुना है तूने स्कूल के परिणाम के बारे में, कैसा रहा!

'सुना है, पर मुझे इससे क्या? मैं कोई स्कूल का अध्यापक तो अब हूँ नहीं।' कुमार का उत्तर था

'यह तू कह रहा है कुमार? भूल गया क्या उस दिन को जब सारे गांव के आदमियों के सामने तूने बालकों को ऊंचा उठाने की दुहाई दी थी। यह स्कूल संभाला था।'

'उस समय का कुमार अब नहीं रहा बीबी, तब मैं केवल आदर्श के पीछे जा रहा था। परन्तु अब मुझे यथार्थ का ज्ञान है। मैं ।'

'गलत है तेरा ज्ञान । वही न कहेगा तू जो तुझ पर लांछन लगाये गए हैं । लेकिन उनका प्रभाव मुझ पर तो नहीं पड़ा, श्यामसिंह पर तो नहीं पड़ा ।

'छिपाती हो बीबी ।' कुमार रूंआसा-सा कह उठा, 'तुम यकीन न करती तो कुमार के बिना तुम्हारा स्नेह इतने दिन रह सकता ? उस सभा के बाद से तुम आज आतीं ?'

बीबी चुप हो गई । उनकी कमजोरी पकड़ी गई थी । सुशो से पूछने के पूर्व उनका हृदय भी स्वच्छ न था, यह बात सच थी । वे कुछ न कह सकीं ।

'कुमार कहता गया—मैं गलत था या ठीक नहीं कहना चाहता बीबी, लेकिन इन उपेक्षा के दिनों में सरोज को छोड़ कर कोई मेरे पास नहीं आया । मैं वास्तव में उसका ऋणी हूँ ।

'मैंने तो ऐसा कोई कार्य ही नहीं किया ।' सरोज लजा गई ।

'तुम न मानो सरोज किन्तु इन घोर निराशा के क्षणों में तुम्हारा इतना स्नेह मेरे लिये बहुत था ।' कुमार ने कहा ।

सरोज चुपचाप बैठ गई । हृदय उसका प्रसन्नता और स्वाभिमान से ओतप्रोत था ।

'जो हो गया, वह लौटेगा नहीं कुमार लेकिन···'

'तुम्हें कुछ कहने की जरूरत नहीं । मैं कल ही स्कूल में ही प्रार्थना पत्र दूंगा यदि रख लिया गया तो

'सच कहता है रे ! तू वास्तव में पढ़ायेगा, मुझसे मजाक तो नहीं कर रहा ।' बीबी हर्ष विह्वल हो गई !

'नहीं बीबी, मैंने काफी सोचने के बाद यही निश्चय किया है । पथ मेरा है और कांटे मेरे हैं, फिर रुकना किस लिये ?'

'तूने मेरी बात रख ली । जो विश्वास आज मेरी शंका को कुचल यहाँ आया था, वह सफल ही हुआ । मैं भगवान को प्रसाद चढ़ाऊंगा ।'

'तुम सरोज,' कुमार ने उसकी ओर देख कर प्रश्न किया, 'तुम क्या करोगी ?'

'मैं—। मैं तो उन्हें धन्यवाद देकर ही सन्तोष करूंगी ?' सरोज बोली।

'बस !' कुमार ने हास्य में आश्चर्य का समन्वय किया।

'नहीं। इसके बाद यह प्रार्थना और करूंगी कि फिर ऐसी परीक्षा आपकी न ली जाये।

'लेकिन यह परीक्षा तो ठीक ही रही है।'

'कैसे ?'

क्यों कि मैं अपने विचारों में यह भूला ही रहता था कि असलियत क्या है ? उसे पहचानने की मैंने कभी कोशिश ही न की थी। मेरे सामने एक मन्दिर था जिसकी ओर मै जा रहा था। आखें उसके शिखर पर थीं और पांव रास्ते में। यह मैंने देखा ही नहीं कि रास्ते में पत्थरों और गन्दगी में सने कांटे पड़े हैं। उन्हें देख-देख कर ही हमें··· ···

'पर कुमार जी ! आप कवि कब से हुए ?' सच मानो सरोज

—:०:—

पाप और पुण्य की सीमा यदि बांध दी जाय तो उनमें से दूसरे तत्व का संभवतः अवशेष भी विश्व में न रह पाये। मानव-मन की भावनाओं को एक ही बिचार के अन्तर्गत गण्य करना जितना कठिन है उतना ही अस्वाभाविक भी। अपनी अपनी स्वतत्र प्रवृति और रुचि प्रत्येक मनुष्य की होती है। फिर उनको एक ही माप तुला पर औरचित्य-अनौचित्य के निर्धारण के लिए तोलना अनुपयुक्त नहीं तो और क्या है? इसी अन्तर पट चाँद और सितारों के चित्र आकर्षण का केन्द्र बन कर आते है और इसी पर आती है उनके प्रति उपेक्षा और घृणा की प्रतिच्छाएँ! फिर क्या सत्य है?

प्राय: लोग कहते सुने जाते है— 'उस लड़के के पास मत बैठना, बिगड़ जाये गा।'

किन्तु देखा जाता है कि ऐसे मनुष्यों के पास बैठने वाले कुछ व्यक्ति अपना चरित्र-निर्माण करते है और कुछ उसकी पतनोंन्मुख ईच्छाओं मे सदैव केलिए खो जाते हैं। क्यों? यदि कांटा वास्तव में बुरा है तो उसके बिना उन्नति के द्वार बन्द क्यों है? यदि फूल हर दृष्टी से अच्छा है तो वह मानव में बासनाओं के प्रति जागरकता क्यों उत्पन्न करता है?

बस्तुत: कहीं पाप है न पुण्य! हृदय की मांदिर कल्पनाओं का अधूरापन कलुष और पूर्णता अमलिन की प्रतीक है।

मृदुला का बिबाह दिन. प्रतिदिन पास आता जा रहा था। जितनी ही घर के अन्य सदस्यों की उत्फुल्लता और प्रसन्नता में वृद्धि हो रही थी उतनी ही मृदुला के चेतनालोक की सुषमा मिटती गई। उसेकुछ खोया-खोया सा लगता। साथ की सखियां आती और कहती — क्या बात है मधु, अभी से दूल्हे की याद में बेचैन है क्या ?

मधु सुनती और चुप हो कर रह जाती। अपने मन को टटोल कर वह देखती क्या वास्तव में वहां आने वाले के प्रति कुछ विकलता है ? किंतु वहाँ उसे कुछ सूत्र न मिलता जब भी वह अपने हृदय-आँगन में झाँकती कुमार ही वहां खेलता मिलता। रहरहकर मन उसी से मिलने को बिकल हो उठता। बारबार वह सोम से पूछती— कुमार नहीं आता क्या आजकल ?

जब भी कोई उसके सामने कुमार का नाम लेता, वह पागल हिरनी सी चौंक कर इधर उधर देखती। मन कहता—'मिल ने चल कर उससे। क्यों यहां बैठी है ? ' किन्तु प्रत्यक्ष बन्धन और स्वयं की सीमाये सामने आ खड़ी हो जातीं। वह अपने काम में लग जाती।

जब भी कोई बिबाह की चर्चा उसके सामने करता, उसे लगता जैसे हृदय पर कोइ भार आ पड़ा हो। 'मैं बिबाह नहीं करना चाहती क्या !' वह स्वय से पूछती। 'नहीं तो, ऐसा तो मैंने कभी नहीं कहा' मन उत्तर देता है।

'तब तू शादी के नाम से उदासीन क्यों हो उठती है।' वह स्वयं पर आरोप लगाती है। हृदय जैसे निरुत्तर हो जाता : भारी मन से वह फिर अपने कार्य में व्यस्त हो जाती।

'कुमार को छोड़ कर अब मैं सदा के लिए चली जाऊँगी' ।कभी कभी वह सोचती।

'नहीं तो क्या हमेशा उसके ही साथ रहेगी '! सहज प्रश्न होता।

'क्या हर्ज है '? वह आप ही उत्तर देती और प्रसन्नता से अभीभूत हो जाती।

किन्तु तभी अपनी शादी का विचार उसे एक नई मूर्ति के मिलन की कल्पना कराता। किसी के साथ अपने जीवन और मृत्यु का ध्यान आता और वह बड़ बड़ा उठती। 'कुमार के मिलन के अतिरिक्त और कौन होगा मेरे जीवन मरण का संगी' ? और— और —'

किन्तु वह व्यक्ति तो कुमार नहीं होगा। वह होगा उसका पति' उसका—

'नही, नही,' वह कह उठती, 'मै अपने आप को किसी के बन्धन में नही बाँधना चाहती। किसी की इच्छाओं पर अपने भाग्य को नहीं नचाना चाहती। कुमार को छोड़ कर किसी के भी आदेश की दासी मै नहीं बन सकती'।

'तो क्या तू कुमार से—' अस्पष्ट भाषा में मन का चोर पूछता

'कुमार' वह आत्मलीन सी फुसफुसा उठती, 'क्या चाहती हूं मैं ! बताओ न, क्या इच्छा है मेरी ?'

'मुझसे पूछ' शात स्वरों में कोई कह देता।'

'कौन हो तुम ?' वह चारों ओर देखने लगती।

'उधर क्या है ? यहाँ देख, अपने मन मन्दिर में। मै मन्दिर का भगवान हूँ। याद हैं न वे वाक्य—मै सदैव तुम दोनो के साथ रहूँगी। तुम्हारे इशारे पर काम करूँगी।'

किन्तु अब वह किसी और के इशारे पर कार्य करने जा रही थी। उस इशारे पर, जो स्वयं कुमार की अनुज्ञा के उल्लंघन का आदेश भी दे सकता है।

'यह असम्भव है, पूर्ण असम्भव ! मै कुमार—'इसके आगे वह कुछ न कह पाती।

'लेकिन अन्य किसी को वह स्थान न दे। मैं कुमार के साथ भी तो हमेशा रह सकती हूं सर्वदा उसी के—'

'चुप, चुप, पाप की बात है यह। ऐसा सोचना भी पाप है मृदुला'। कोई चेताता।

'फिर पुण्य क्या है' ?

'जो धर्म सम्मत है'।

'क्या ?' अपने कर्त्तव्य का पालन।

अपने कर्तव्य का पालन करो। मन को उसके पथ पर चलाओ।'

'लेकिन कर्तव्य हृदय की अवहेलना करना ही है क्या ? दूसरे की इच्छा पूर्ति करने ढोंग करने के लिए स्वयं को भूल जाना ही है ? अपनी लालसाओं का व्यर्थ बिसर्जन ही है ? आत्मा के रोम रोम से निकलती ध्वनि को न सुन कृत्रिम संगीत में बरबस लीन होना ही है '

'नहीं पगली, कर्तव्य वह है जो तुम्हें करना चाहिए।'

'क्या ?'

'विवाह'

'किससे' ?

'जिससे हो रहा है।'

'और कुमार ?'

'उससे भूल कर दूसरे की स्मृति के पट बुनने होंगे।'

क्यों ?'

'क्यों कि उसके साथ रहने की भावना बासना की प्रत्यक्ष इच्छा है।'

'बासना क्या ?'

'शरीर की भूख।'

लेकिन मैं उसकी भूखी नहीं केवल अपनी आत्मा के मन्दिर के एक कोने में रहना चाहती हूं।'

"यही तो वासना है।"

"और इस वासना का इसलिए दमन करना कि दूसरी वासना की पूर्ति हो, यह सम्भवतः कर्तव्य है।

समाज और व्यक्ति के सम्बन्धों में अपनी इच्छा का समन्वय करने का यहीं तक उसका हृदए प्रयास करता। आगे वह कुछ न सोच पाती। जैसे इस तर्क का उत्तर न व्यक्ति के पास है न समाज के।

"फिर स्वम् ही वह सोचती—युग-युग से चली आई परम्परा का उल्लंघन करना पाप है। और उसके अनुकूल चलना पुण्य—लोग कहते हैं। तो क्या ? इस परम्परा का ध्येय यही है कि जिसे हृदय कहता है उसे न कर दूसरा कार्य किया जाय। जिसके लिए प्राण विकल हो उसी को छोड़ा जाय। और······और······"

इन्हीं उलझनों में खोई एक दिन वह सोम के पास पहुँची। "कुमार को बुला दे सोम, मैं उससे मिलना चाहती हूं।

"क्यों बुआ ?"

मुझे कुछ पूछना है उससे। मेरे मन में अशान्ति का तूफान घिर रहा है। उसका समाधान करना है।

"लेकिन वह कर सकेंगे ?" सोम ने उसकी व्यथा समझते हुए पूछा। "कर सकेंगे सोम, मैं उनकी प्रत्येक बात सच मानती हूँ। उसके कहने का मुझे पूर्ण विश्वास है। जो वह बतायेंगे, मैं सच मान लूँगी।"

सोम ने शीघ्र ही कुमार को बुलाने का वचन दिया और दोनों उठ गई।

कुमार स्कूल में फिर पढ़ाने लगा था उनके कारण लड़कों की संख्या और सन्तोष में भी बृद्धि हुई। स्कूल फिर ठीक से चलने लगा। मजदूरों का फिर संगठन हुआ। प्रौढ़ शिक्षा फिर चालू हुई। उसका अधिकांश समय व्यस्त रहने लगा। किन्तु इस बार मन में साहस और उत्साह की कमी न होते हुए भी वह उदास-सा रहता। जीवन के इस सेवा रंचित मग पर जब भी उसे का मृदुला का ख्याल आ जाता वह गम्भीर हो जाता। बंधनों और स्वप्नों के पिंजरे में आत्म पखेरू कुछ तड़फन-सी अनुभव करता। वह सोचता, तो मृदुला भी चली जायेगी। सुन्दर अध्यायों की स्मृति और पीड़ा छोड़े वह भी अपना नया संसार बसा लेगी।

"तो तुम्हे क्या ?" सेवापथ का राही उसे झकझोरता-मैं तो सदैव तुम्हारे साथ ही रहूंगा।"

"अच्छा, तो फिर ठीक है।" वह अपने मुँह पर हँसी का भाव बनाने की चेष्टा करता।" सोचता—जाने वाले तो जायेंगे ही, उनकी चिन्ता क्या ?—और तभी उसे ख़्याल आता—कल या परसों कभी भी, सोमा, चली जायेगी।

"तुम्हारा साथी मैं हूँ, केवल मैं" फिर त्याग तपस्या का प्रतिनिधि हृदय की ओर से बोलता—मेरे साथ रहोगे तो कभी तुम्हारा साथ नहीं छोड़ूँगा।

"लेकिन लालसा ?"

इसे मन में सीमित कर लो, स्कूल के बालकों में अपने मन की शान्ति खोजो।"

स्कूल में आकर इसी प्रकार के अन्तरद्वन्द्व में खोया वह बैठा था कि श्यामसिंह आ गये खड़े-खड़े ही बोले—बहुत दिनों से घर नहीं गये कुमरा, क्या बात है ?

"जी………"

हो आओ अभी सोम की माँ पूछ रही थी सोम को भी कुछ जरूरी काम हैं।

"अभी जाता हूं।" कुमार उठता हुआ बोला "आप तो भाई साहब जंगल जा रहे हैं ना ?"

"हाँ, हाँ, तू जा।'

सीधे भीतर जा कर कुमार ने माँ को प्रणाम किया तो वे पूछने लगीं—आता क्यों नहीं है रे ? कोई लड़ाई हो गई है सोम से ?"

"नहीं तो, वैसे ही कुछ काम में लगा रहता था।"

"नहीं माँ, लड़ाई नहीं हुई है।" सोम ने आकर कहा—"चलो भाई साहब समझौता करेंगे।"

"वाह री ! कुछ देर रुक कर ही कर लेना। जहाँ इतनी देर रही कुछ देर और सही।"

"क्यों ?"

"पहले मैं इसे कुछ खिला-पिला दूं।" माँ कहती हुई अन्दर चली गई।

"ओह ! आज माँ ने कुछ बनाया है।" सोम हँसने लगी "हमें दिखाया तक नहीं और तुम्हें खिलाने चली।

"तुझे खिला कर क्या करूँगी ? आज यहाँ कल वहाँ, कुमार तो मेरे साथ रहेगा।

"अच्छा दिखाओ तो ?" सोम माँ के हाथ से मठरियों को लेती हुई बोली—मैं ही खिला दूँगी।

दोनों खाने लगे। माँ खड़ी देख रही थी। सोच रही थी—काश ! कुमार अपना ही लड़का होता।

बैठक में जाकर बैठ गये तो कुमार ने पूछा—क्या जरूरी काम है मुझसे ?

"कुछ भी नहीं" सोम हँस पड़ी।

"तो बुलाया क्यों था ?"

"वैसे ही।"

"पगली कहीं की।" कुमार मुस्कराया। तभी द्वार बन्द करती मृदुला ने बैठक में प्रवेश किया।

"इन्हें है आपसे जरूरी काम। सोम ने स्पष्टता की हँसी में कहा।

"क्या हुआ मधु ?" कुमार उसके क्षीण शरीर को देख चौंक उठा—'तू कुछ बिमार है क्या ?"

मधु चुप रही।

"बोलती क्यों नहीं ? तकलीफ थी तो मुझे खबर क्यों नहीं दी ? हालत⋯ ⋯"

इसलिए तो बुलाया है कुमार।" मधु ने उसे बीच में ही रोकते हुए कहा—"आज अपनी सब पीड़ा दूर करूँगी मैं।"

"लेकिन है क्या ?"

मधु उसके पास आकर बैठ "सच बताऊँ क्या ?" उसने पूछा।

"हाँ, हाँ,।"

"मेरा मन शान्त नहीं रहता।"

"क्यों ?"

यह तो पता नहीं।" मधु ने उसकी आँखों में सीधे देखा—परन्तु अब मैं⋯⋯" वह चुप हो गई।

"बोल न ?"

"कुमार !" वह सिसक-सी उठी—"मैं सदा-सदा के लिए तुम्हारे पास, तुम्हारे ग्राम से तुम्हारे⋯"

"चुप, चुप री ! सदैव के लिए क्यों चली जायेगी कभी २ तो आया ही करेगी न। और जायेगी भी तो क्या ? एक दिन तो सब को जाना ही है।"

लेकिन क्यों कुमार ? मैं तुम्हारे साथ भी हमेशा रह सकती हूँ।

"मधु !" कुमार सिहर सा उठा "ऐसा न सोच मधु यह पाप है।

"पाप ! क्यों कुमार ? तुम मुझे⋯⋯उस वचन को सब पाप समझते हो ?

"मुझे पहचानने का अब अवसर नहीं मधु, मेरी पहिचान बहुत हो चुकी। अब तेरी पहचान······"

'लेकिन मेरा हृदय ?"

"हृदय की बात छोड़ो मधु, उस पर नियन्त्रण रखो।"

"लेकिन तुमने एक दिन कहा था—हृदय के विपरीत चलना पाप है।

"होने दे मधु, पाप मार्ग ही होने दे। लेकिन चल उस पर अवश्य।"

"पर क्यों ?"

"मत सोच मधु, इसकी बात मत सोच।" कुमार कह उठा, "यह तो केवल तेरे मेरे मन का सत्य मार्ग हैं और वह सारी दुनियाँ का। तुझे उस पर ही चलना होगा।"

"कुमार।" मधु सिसक उठी, क्यों ऐसा कहते हो ? कहीं······"

"मेरे हृदय में बैठने की कोशिश मत कर मधु ! जो कुमार बेला को अपने साथ नहीं रख सका वह तुझे कैसे रख सकेगा ? दोनों में अन्तर है ना ! सोच तो।"

"है तो, किन्तु तुम······"

"शेष कुछ नहीं मधु। मैं बेला की तरह तुझे खोना नहीं चाहता। बस इतना ही समझ ले और चली जा अपने पथ पर।

'तो फिर हम वचनों के प्रतिकूल अलग-अलग ही रहें ?"

"नहीं तो मधु, हृदय टटोल कर देख ! क्या बेला उससे अलग है ?"

"नहीं।"

"तो फिर हम कैसे अलग हो जायेंगे ?"

"तुम परलोक की बात बताओगे शायद।,'

"मैं परलोक पर अधिक विश्वास नहीं करता किन्तु इतना जानता हूं कि हम तीनों साथ रहे हैं, और साथ हैं साथ रहेंगे। कोई···"

……मैं कुछ नहीं समझ पा रही कुमार लेकिन जब तुम कह रहे हो तो ठीक ही होगा।"

"बस तो फिर……" कुमार कुछ कहने ही को था कि उसकी दृष्टि सोम की ओर गई……" तू क्यों रो रही री ?" वह पूछ बैठा।

"कहाँ भाई साहब" उसने अपने आँसू पूछ लिये, "मैं तो हँस रही हूं।"

"मुझे अपने अंक में सिर छिपा कुछ देर रो लेने दो कुमार। आज के पश्चात फिर मिलेंगे अथवा नहीं कौन जाने ?" मधु ने कहा और उस की गोदी में सिसकती जा पड़ी।

"हां मधु, यह भी कटु सत्य है।" इसके बाद आंसू बहते रहे और वाणी स्थिर।

"कुमार जब उठ कर चलने लगा तो मधु बोली—एक वचन दो कुमार।"

"क्या ?"

"जब कभी हमें दूसरे की आवश्यकता होगी, बिना बुलाये आ जायेंगे और तुम अपना काम ठीक प्रकार करोगे।"

"इसका भार मेरे ऊपर रहा," सोम बोली—मेरा भी कुछ अधिकार है।

कुमार ने सोम और मृदुला के सूने नयनों को एक बार फिर देखने को मुड़ा और द्वार खोल कर चला गया।

मृदुला का विवाह हो गया। अन्तर के तूफानों को बरबस दबा, आंसुओं का अनन्तकोष लिए दग्ध नि:श्वासों के अस्पष्ट संगीत में डूबती उतारती वह चुपचाप चली गई। हृदय के क्रन्दन को किसी पर प्रकट न किया, अवांछित बन्धनों से पलायन न प्रदर्शित किया, कुमार तो उस दिन से मिला न था। उसकी स्मृति व्यक्ति पीड़ा को संजोये वह विदा हुई उस दिन के बाद वह कुमार से मिल न सकी थी। चलते समय सोम से बोली—"मैं तो जल्दी ही लौट आऊँगी सोम, लेकिन एक वचन आज तू दे।"

"क्या ?"

"जब कभी भी उन्हें कुछ खिन्न देखे, धैर्य बंधाना उन्हें कोई दुख न होने पाये। बहुत कुछ अब तक वे सह चुके हैं, अब जहाँ तक हो सके हंसाने की कोशिश करना प्रयास करना कि उनकी आंखों में आंसू न आयें।"

सोम ने मौन स्वीकृति की और रथ चल पड़ा जब मन्दिर के सामने से बारात जा रही थी। मृदुला ने घंटी की आवाज सुनी। पुजारी तो कोई वहाँ था नहीं फिर ? वह समझ गई कि वेला को उसकी याद दिलाने कुमार मन्दिर में गया है। उसने भी मौन प्रणाम किया तथा आँसू और भी तेजी से बह उठे।

मृदुला के विवाह के कुछ ही दिनों पश्चात् सहसा ही कुमार की मां बीमार पड़ गई, कई महीनों तक इलाज होता रहा किन्तु आराम उन्हें न हो सका कुमार के पिता भी गाँव में ही आ गये थे। काफी कोशिशें की गईं। किन्तु लाभ कुछ न हुआ। उनका शरीर दिन प्रति-दिन क्षीण होता चला गया।

मां की इच्छा कुछ हो न हो परन्तु अपनी आंखों के सामने औलाद के सिर पर सेहरा बाँधने की उसकी लालसा मोक्ष से भी अधिक बल-

"......मैं कुछ नहीं समझ पा रही कुमार लेकिन जब तुम कह रहे हो तो ठीक ही होगा।"

"बस तो फिर......" कुमार कुछ कहने ही को था कि उसकी दृष्टि सोम की ओर गई......" तू क्यों रो रही री ?" वह पूछ बैठा।

"कहाँ भाई साहब" उसने अपने आँसू पूछ लिये, "मैं तो हँस रही हूं।"

"मुझे अपने अंक में सिर छिपा कुछ देर रो लेने दो कुमार। आज के पश्चात फिर मिलेंगे अथवा नहीं कौन जाने ?" मधु ने कहा और उस की गोदी में सिसकती जा पड़ी।

"हां मधु, यह भी कटु सत्य है।" इसके बाद आंसू बहते रहे और वाणी स्थिर।

"कुमार जब उठ कर चलने लगा तो मधु बोली—एक वचन दो कुमार।"

"क्या ?"

"जब कभी हमें दूसरे की आवश्यकता होगी, बिना बुलाये आ जायेंगे और तुम अपना काम ठीक प्रकार करोगे।"

"इसका भार मेरे ऊपर रहा," सोम बोली—मेरा भी कुछ अधिकार है।

कुमार ने सोम और मृदुला के सूने नयनों को एक बार फिर देखने को मुड़ा और द्वार खोल कर चला गया।

मृदुला का विवाह हो गया। अन्तर के तूफानों को बरबस दबा, आंसुओं का अनन्तकोष लिए दग्ध विःश्वासों के अस्पष्ट संगीत में डूबती उतराती वह चुपचाप चली गई। हृदय के क्रन्दन को किसी पर प्रकट न किया, अवांछित बन्धनों से पलायन न प्रदर्शित किया, कुमार तो उस दिन से मिला न था। उसकी स्मृति व्यथित पीड़ा को संजोये वह विदा हुई उस दिन के बाद वह कुमार से मिल न सकी थी। चलते समय सोम से बोली—"मैं तो जल्दी ही लौट आऊँगी सोम, लेकिन एक वचन आज तू दे।"

"क्या ?"

"जब कभी भी उन्हें कुछ खिन्न देखे, धैर्य बंधाना उन्हें कोई दुख न होने पाये। बहुत कुछ अब तक वे सह चुके हैं, अब जहाँ तक हो सके हंसाने की कोशिश करना प्रयास करना कि उनकी आंखों में आंसू न आयें।"

सोम ने मौन स्वीकृति की और रथ चल पड़ा जब मन्दिर के सामने से बारात जा रही थी। मृदुला ने घंटी की आवाज सुनी। पुजारी तो कोई वहां था नहीं फिर ? वह समझ गई कि बेला को उसकी याद दिलाने कुमार मन्दिर में गया है। उसने भी मौन प्रणाम किया तथा आँसू और भी तेजी से बह उठे।

मृदुला के विवाह के कुछ ही दिनों पश्चात् सहसा ही कुमार की मां बीमार पड़ गई, कई महीनों तक इलाज होता रहा किन्तु आराम उन्हें न हो सका कुमार के पिता भी गाँव में ही आ गये थे। काफी कोशिशें की गईं। किन्तु लाभ कुछ न हुआ। उनका शरीर दिन प्रति-दिन क्षीण होता चला गया।

मां की इच्छा कुछ हो न हो परन्तु अपनी आंखों के सामने औलाद के सिर पर सेहरा बांधने की उसकी लालसा मोक्ष से भी अधिक बल-

चती होती है। सब सुखों के होते हुए भी बेटे को अकेला देखने वाली माँ भगवान से प्रार्थना करती है—कुछ देर और जी लेने दे भगवान। अपने लाल के हाथ पीले करती जाऊँ, बस !"

बूढ़ा होने के साथ ही साथ उनकी यह लालसा भी बढ़ती जाती है। अपनी जिन्दगी में बेटे पोते वाली होकर मरने वाली को प्राय. लोग भाग्यवान कहते सुने जाते हैं। उसकी लाश के सामने चर्चा हुआ करती है—बड़े मुकद्दर वाली थी, सौ जनम के धरम का फल एक ही जनम में पा गई।

कुमार की माँ ने भी अपनी मरण शय्या पर से उसे देखा तो उन का हृदय रो उठा, "हा भगवान" वे पुकार बैठी, "मेरा कुमार ऐसे ही रहेगा क्या ? उम्र भर दूसरों के ही सहारे वह जियेगा क्या ? और तभी उन्हें ख्याल आ गया कि एक दिन एक बूढ़ा ने कहा था—बिना शादी किये आदमी की जिन्दगी खराब होती है बहन, किसी ने रोटी करके देदी तो खाली नहीं तो भूखा है।

"तो कुमार दूसरों का मोहताज रहेगा ?" शारीरिक यातना से भी बढ़कर यह मानसिक आघात उन्हें पहुँचा। रह रह कर कोई उनके कान में कहने लगा—कुमार मोहताज रहेगा, बिना विवाह के आदमी की जिन्दगी खराब होती है। कुमार···मोहताज ! ···बिना शादी··· खराब··· !

वे व्यथित हो उठीं। एक दिन जब कुमार के पिता और विनय उसके पास बैठे थे तथा कुमार पाँव दबा रहा था, उन्होंने अपने हृदय का भार हलका करने की सोची। विद्या और सरोज भी वहीं आ गई थी। सहसा ही वे पूछ बैठीं, 'कुमार ! मरते वक्त मेरी एक बात मान लेगा क्या ?"

"ऐसी बात न कहो माँ" विनय ने उनके मुंह पर हाथ रख दिया।

"मेरी बात का जबाव दो कुमार" उन्होंने अपनी बात दोहरायी।

कुमार ने सूने नैनों से उनकी ओर निहारा जिनमें लिखा था—

"कहा भी। बोला वह कुछ नहीं।

"कहूँ बेटे" माँ ने फिर पूछा उनके स्वर में आग्रह था।

"एक बार कह दो माँ, जो कहो कर दूँगा।"

"तो ब्याह करके मुझे बहू ला दे।"

कुमार पर जैसे वज्र पात हुआ। वह चुप बैठा रह गया। दृष्टि नीचे को झुक गई। पिता चुप बैठे थे।

माँ ने तृष्णा भरे नेत्रों से कुमार की ओर देखते हुए कहा—तो मानली तूने मेरी बात ?

"पर माँ··· ।"

"पर वर क्या कहता है रे।" विद्या बीच में ही बोल उठी, "तुझे शादी करनी होगी ।"

'सुनो तो बहन··· ।"

"अब सुनने का समय नहीं कुमार, माँ की बात माननी है तो मान, नहीं तो··· ।"

माँ का गला भर आया वे कुछ कह न सकीं।

"मैंने तुझसे कभी कुछ नहीं कहा कुमार, लेकिन आज की बात मान ले।" पिता जी बोले—ब्याँह कर ले।

कुमार ने कुछ उत्तर नहीं दिया। वह उठ कर बाहर चला आया। तभी सोम को लेकर वहां मृदुला पहुँच गई। ससुराल से वह आ गई थी।

"मृदुला बटी।" माँ ने उसे देखकर कहा तेरी बात कुमार कभी नहीं टालता। आज कह देखना उससे तू भी।

"क्या माँ।"

कहदे बेटी उससे कि मैं उसकी बहू का मुंह देख कर मरना चाहती हूँ। मैं··· ।"

"माँ !" किंकर्तव्य विमूढ़-सी मृदुला कह उठी।

माँ ने उसकी ओर देखा तो उनकी दृष्टि में आशा की झलक थी। मृदुला सोच में पड़ गई। वह माँ से मना कैसे करे और कुमार से कहे

कैसे ?"

सोम इसे समझ गई। तुरन्त बोल उठी—उन्हें मैं पक्का कर लूंगी माँ जी, आप लड़की तो ढूंढ लें।

"लड़की मेरी देखी हुई है। यह अपनी सरोज कोई मना थोड़े ही करेगी ?" माँ ने पहले सरोज और फिर सोम के मुख की ओर देखा।

सरोज की दृष्टि नीचे झुक गई। विद्या ने उसकी ठोड़ी में हाथ लगाते हुए कहा—इसकी मैं जिम्मेदार हूँ। क्यों सरोज ?

सरोज का मुख प्रणय से दीप्त था।

मृदुला बैठी सोच रही थी—क्या कुमार सोम की बात स्वीकार कर लेगा। वह अपने आप को माँ की आशा पर छोड़ देगा। क्या···? उसे स्वीकार कर ही लेना चाहिये। माँ की यह दशा और अंतिम इच्छा ! उसे···किन्तु···।

वह आगे कुछ न सोच सकी।

सोम उठकर बाहर चली गई थी कुछ देर बाद लौट आयी। बोली—बाहर तो कहीं दिखाई नहीं दिये भाई साहब, जाने कहाँ गये।

सब चुप रहे। मृदुला ने धीरे से उसके कान में कहा—मन्दिर में मिलेंगे सोम, उसके अलावा और कहीं इस समय वे नहीं जा सके होंगे। माँ की बात सुन कर उन्हें बेला की याद आ गई होगी। वहीं जा।

सोम चली गई।

+ + + +

कुमार माँ की चारपाई से उठकर बाहर आया तो उसके अन्तर में एक झंझावात उठ रहा था। व्यथा और चिन्ता से उसका मस्तक नत था। वह सोच रहा था—"ममता और कर्तव्य, वचन और प्रेम ! कितना दुर्गम पथ है दोनों का। एक का पालन दूसरे का खंडन है और पालन दोनों का आवश्यक है।

"माँ की वात्सल्य मयी अन्तिम इच्छा। उनके हृदय विटप का अन्तिम पुष्प, मैं उसे अमुकूलित कैसे रहने दूं ?"

और···

"बेला की चिर जीवन गूंज, उसकी स्मृति का करुण अध्याय, अतीत का एक भाव सूत्र ! उसे कैसे तोड़ दूं ?"

"माँ के प्रति कर्तव्य का आदान, सामाजिकता का कर्म बन्धन, जीवन का पुंजी भूत उद्देश्य, वात्सल्य के प्रत्युपकार की भावना ! कैसे उसका उलंघन करूँ ?"

"बेला का अन्तिम पथ, चिर प्रतीक्षा का उसका संदेश, प्रणयपथ पर अमर बलिदान, किस प्रकार इस सब को भूलूं ?"

कुमार का हृदय दिग्धि दिग्दिगन्त व्यापी भूकम्प के प्रकोप से प्रताड़ित-सा हो उठा। वह एक दीवार का सहारा लिए खड़ा हो गया। किन्तु शान्ति जैसे कहीं खो गई थी। उद्भ्रान्ति अपने कल्प—शिखर पर बैठ उसके मन मन्दिर में आ उतरी। आत्मलीन-सा वह सोचने लगा। दृष्टि उसकी इधर-उधर थी। सामने के पेड़ पर पक्षी चहचहा रहे थे। एक चिड़िया अपने बच्चे को चुगा खिला रही थी। बच्चा किलकारी मारता इधर-उधर घूमता और चिड़िया उड़उड़ कर उसके खाने को लाती। कुमार इसे देख रहा था। उसे लगा जैसे चिड़िया उसके कान में कह रही हो—इसलिए इसे चुग्गा दे रही हूँ, जिससे बड़ा होकर यह मेरी इच्छा पूर्ति करे, मेरे स्वप्नों को सत्य करे।

"उसे ऐसा करना ही चाहिए। किन्तु···।" कुमार एक बारगी बड़बड़ा उठा और फिर वही आत्मता की क्रान्ति, वेदना की उत्ताल तरंगें।

पेड़ पर से दृष्टि उठा वह दूसरी ओर देखने लगा। एक कुतिया के पीछे आठ-नौ पिल्ले जा रहे थे। वह बार बार जो पीछे रह जाता उसे चाट चाट कर आगे बढ़ा रही थी। पिल्ले अल्हड़ता में उसके साथ साथ भाग रहे थे। कुमार उसी ओर देखने लगा। कुतिया उसकी ही पाली हुई थी। ज्यों ही लौट कर उसने पीछे को देखा कुमार की आँखें जा टकरायीं। अनुराग लिप्त-सी वह वहीं खड़ी हो गई कुमार उसकी

ओर देखता रहा ।

उसे लगा जैसे कुतिया के नयनों में भी एक वाणी है । वह कह रही है—यह मातृत्व है । इसके प्रतिकार की आशा ही मेरी लालसा है ।

"माँ··· !"वह बुदबुदा उठा, "मैं · तुम···माँ" और वह कुछ न कह सका ।

धीरे-धीरे वह मन्दिर की ओर चल पड़ा । वहाँ पहुंच भगवान की प्रतिमा के सामने घुटने टेक कर बैठ गया । आँसू निर्मुक हो वह चले । मूर्ति चुपचाप सब देख रही थी । कुमार काफी देर तक बैठा रहा । अन्त में उसने मूर्ति की ओर देखा और बड़बड़ा उठा, "क्या करूँ मैं ?"

"लो मैं बताती हूँ" तभी सोम ने आकर कन्धे पर हाथ रख दिया, "चलो मेरे साथ ।"

"सोम !" कुमार ने उसकी ओर देखा, "क्या बतायेगी तू ?"

"वही जो तुमसे सीखा है—कर्तव्य का पाठ, त्याग की विद्या और तपस्या का पुन्य ।"

"क्या है ?"

"दुख, अनन्त पीड़ा ।"

"फिर, मैं क्या करूँ ?"

"उसी में खो जाओ । मां की इच्छा पूरी करो, अपने आपको वेदना की उच्शृंखल लहरों के थपेड़े खाने दो, खाने दो न भैय्या ।"

"और वचन ?"

"उसके खण्डन का दुख केवल तुम्हें होगा । मां को नहीं ।

"लेकिन बेला !"

"वह अब इस लोक में नहीं ।"

"लेकिन······"

"मान भी जाओ न ! मैं जानती हूँ । यह तुम्हारे हृदय का पाप मार्ग होगा । किन्तु उस दिन आपने ही तो बुआ से कहा था—"यह मेरे हृदय का पाप मार्ग है, वह सारी दुनिया का ।" अब अपने आप

क्यों उसे भूल रहे हो। मेरी मान जाओ भैया एक ओर सांसरिक कर्त्तव्य है और दूसरी भावनाओं का पुन्य पथ। तुम..."

"सोचने का समय नहीं भैया, सोम ने कुमार के गले में लिपटते हुए कहा, "चुपचाप मेरे पीछे चले आओ मेरे छोटेपन को भूल अपने आपको मुझ पर छोड़ दो।"

"लेकिन सोम यह तो..."

"कुछ नहीं होगा भैया, पाप केवल तुम्हारे सिर लगेगा। माता-पिता को तो सुख होगा। तुम्हीं ने तो एक दिन कहा था—दूसरे को सुखी करने के लिए यदि पाप भी करना पड़े, तो करो।"

कुमार ने अब कोई प्रतिरोध न किया—उठकर चुपचाप उसके पीछे चल दिया।

\+ \+ \+

दूसरे निर्वाचन के दो वर्ष शेप रह गये थे। गाँव वाले सम्पूर्ण साधना की त्यारी कर रहे थे। कुमार की शिक्षा और शफीक सुरेश का श्रम, [कुमार के साथ देने पर वह फिर काम करने लगा था] विद्या की प्रेरणा और सरोज की वाणी—सब ने मिलकर ग्राम में एक नवीन उत्साह पैदा कर दिया। गाँव अपने सुखद स्वपनों में खोया था। रावेन और कृपाल को भविष्य की चिन्ता न थी। वे यथाशक्ति वर्तमान से लाभ उठाना चाहते थे। दोनों पक्ष अपने-अपने पक्ष पोषण में रत थे अन्तर था उनके उद्देश्यों में।

इन सब घटनाओं के बीज सुशों अपने में ही आप जलती रही थी। उसका विवाह भी इन गर्मियों में ही तय था। वह अपने चरित्र और कुमार के मौन त्याग को देख वह अपने पर घृणा करने लगती। जब भी उसे ध्यान आता कि उसके कारण कुमार ने कितना अपमान और असह्य वदना सही है। वह रो उठती। उसका हृदय कुमार के पांव में जाकर एक बार अपने पापों की क्षमा मांगने को चाहता किन्तु घर वालों के बंधन अभी भी उसके मार्ग में थे। उस दिन के बाद से वह कुमार से मिल भी न

पाई थी।

इसी प्रकार अपने में खोई वह एक दिन अकेली घर बैठी थी। मां और भाई में से घर पर कोई था नहीं। एकान्त देख रावेन भीतर चला आया।

सामने आकर बोला—किस सोच में है सुशो ? बहुत दिन के बाद मिला हूं तुझ से आज तो दो पल के लिए—

चुप। सुशो चीख उठी चुपचाप घर के बाहर चले जाओ अन्यथा अच्छा न होगा।"

रावेन ने चाकू निकाल लिया। खोल कर सामने करता हुआ बोला—"चल अन्दर ?"

सुशो का हृदय एक दम भर आया। कुमार के अन्तिम वाक्य और प्राणों का मोह। वह सोच में पड़ गई। निरविकार योगी का मुक्त संदेश और जीवन का प्रबल आग्रह दोनों उसके मस्तिष्क में एक साथ घूम गये। किन्तु शीघ्र ही उसने कुछ दृढ़ निश्चय किया और भीतर चली गई।

कमरा बन्द कर रावेन ने कहा—वड़े दिनों में मिली हो आज, पुरी भक्त हो गई हो तुम तो उस कुमार की, दे बैठी न दिल और को ?

"नहीं तो," सुशो हंस पड़ी, "मैं तो तुम्हें अजमा रही थी।"

"क्या ?"

"देख रही थी कि रावेन जो कहता है कि वह लड़कियों को जबरदस्ती—

"तो यह बात है !" रावेन खिल खिलाकर हंस पड़ा। चाकू बन्द कर उसने जेब में रखा और गर्व से बोला—अब समझा, औरत वाकई में दिलावर की होती है।

और सुशो को अपनी बाहुओं में कस लिया। सुशो ने अपने को ढीला छोड़ दिया था। धीरे से उसने रावेन की जेब में से चाकू निकाला और जोर से हँस पड़ी। रावेन चौंक पड़ा। उसे कुछ ढीला

छोड़ पूछा. "क्या बात है ? हंस क्यों रही हो ?

"ऊपर देखो।" सुशो बोली।

ज्यों ही रावेन ने उसे छोड़ ऊपर की ओर देखा सुशो का सधा हुआ हाथ उसके पेट पर पड़ा। एक चीख के साथ खून की धार बह निकली।

भूमि पर पड़े रावेन को सम्बोधित कर सुशो ने कहा—देख लिया रावेन औरत किसी होती है ?

"हाँ देख लिया, रावेन ने रुक-रुक कर कहा—औरत धोखे बाजी और बेवफाई का दूसरा नाम है।

"नहीं रावेन औरत प्रेम की भिखारन है। कमजोरियों का पुतला है। और...और—

"सुशो की आत्म दृढ़ता एक बार काँप उठी। रावेन के शव से लिपट रूद्धा कंठ से उसने कहा—औरत सबसे बड़ी कमजोरी है। और उससे भी बड़ी मजबूती। वासना की प्रतिमा है और संयम की दृढ़ता। लेकिन मैं तो तुम्हारी सुशो हूँ।

रावेन ने अध खुले नयनों से एक बार उसकी ओर देख हिचकते पूछा—तो तू...मुझे...प...या...र...। रावेन की गर्दन एक ओर को लटक गई। और प्यार तो उसने किया ही था रावेन को !

पुलिस इस्पैक्टर के आगे खड़ी सुशो सारे गांव के आदमियों को को एक टक देख रही थी। उसके अन्तर की बात केवल कल्पना के गर्भ में अन्तर्निहित थी।

भीड़ में लोगों के जितने मुंह उतनी चर्चा थीं। कोई कहता—वही है यह जिसने कुमार को चिट्ठियाँ लिखी थीं। बदनाम करने की वजह से रावेन को मार डाला।

बच्चन खड़ा निर्भय कह रहा था—मरने वाले के लिए झूठ नहीं बोलूंगा भाई, चिट्ठी सब रावेन को ही लिखीं थी इसने।

इसी प्रकार की विभिन्न वार्ताओं में सब लगे थे कि कुमार ने वहाँ

प्रवेश किया। सब चुप हो गये। उसने एक बार सुशो की ओर देखा। आँखें मिलीं और वह इस्पैक्टर से बोला—दो मिनट बात कर सकता हूँ।

"अवश्य कुमार साहब अवश्य !"

"लेकिन अकेले में।"

"जैसी आपकी मर्जी !" इन्सपैक्टर सामने से हट गया।

सुशो को भीतर ले जाकर कुमार उसे हृदय से लगा बोला—आज तूने मेरा सिर ऊँचा कर दिया री ?

आँखों में कुमार की आँसू आ गये थे। सुशो उन्हें देख बोली—पर तुम रो क्यों रहे हो भैया ?

"ये खुशी के हैं। असलियत में तो तेरी इच्छाओं की राख, आँखों के पानी और प्यार की ऊँचाई मुझे एक रोशनी दिखा रही है। मैं फिर से जी गया हूँ।"

"मुझे सब दीख रहा है। मेरे फिर न मिलने की उम्मीद तुम्हारी आँखों में बह रही है। इस पर भी कहते हो कि खुश हो।"

"ऐसा न कह री ! अलग तो तू किसी प्रकार भी न हो पायेगी। तेरे खून के धब्बों को एक-एक कर मैं पोंछ दूंगा।"

"लेकिन मैं अब झूठी दिलासा नहीं चाहती। तुम्हारे दो चार बार के मेल से यही बस सीखा है—जिन्दगी आंसुओं की बारिश है। है न ? रिमझिम रिमझिम यह आँख बरसाती रहें तो सब सुख है। कभी न कभी तो बारिश रुकेगी हो। मेरी भी रुक रही है।"

"ऐसी बात क्यों कह रही है सुशो ! मैं तो कभी तुझ से यह सब समझाने नहीं गया।"

"ना भैया ? तुमने मुझे कभी नहीं समझाया, पर तुम्हारी वह बदनामी। वह चुप्पी ! उसने तो मुझे सब कुछ समझा दिया।"

"तो यूं कह, तूने यह मेरा बदला दिया !"

"नहीं भैया नहीं ! वह तुम्हारी कसम तोड़ने आया था। मान

लेने आया था। प्यार की अंधी मैं तुम्हें बेच न सका। बस!"

"ओह सुशो! इतना क्यों माना तूने मुझे?"

"मेरे मरने का इतना डर मत करो कि यह पूछना पड़े—तूने सच क्यों बोला?"

"फिर वही! वह बात मुँह पर मत ला।"

"लानी ही पड़ेगी भय्या! जीने को अब मेरे पास रह ही क्या गया था, वह तो मैंने......।" सुशो ने गरदन नीची कर ली।

कुमार ने गरदन उठाकर उसकी ओर देखा तो मन ही मन सोचने लगा—कितना ढोंग करते हैं तपस्या करने वाले महात्मा! इससे भी बड़ा कोई तप है?

सुशो ने उसे चुप देख पूछा—मेरा काम तुम्हें गलत तो नहीं लगा अब तो तुम मुझे......"

"क्या कहे जाती है री! हत्या के इस पाप मार्ग में कितनी पवित्र हो गई है तू? काश कि कानून उसे समझ पाता!"

"रहने दो बस! इतना ही आज मान रखो कि आगे से कभी किसी के लिए इतना त्याग न करना।"

"कितना?"

"जितना कि मेरे लिए तुमने किया है।"

कुमार चुप हो गया हो तो सुशो बाहर को चलती बोली—"देर काफी हो गई है। चलो बाहर चलो अब!"

कुमार उनके पीछे चलता सोच रहा था—यही तो है विश्वास की परिमा!

पावों की धूल में गिर-गिर कर आंसुओं के उपहार चढ़ रहे थे।

+ + +

राजभवनों और मन्दिरों में बिताए गए क्षण-इतिहास की अमर निधि-मानवी जगत की अमूल्य कहानी बन गए हैं। राजपथों पर घोड़ों की टपों, युद्ध क्षेत्रों के घमासानों और वैभव की लिप्सायों के साथ

मिलकर पुण्य के वे बटोही हमारे मार्ग दर्शक है। किन्तु भूख प्यास, बेबसी और आवश्यकताओं के आखेट, पापमार्ग के पथिकों की कथाएं न किसी ने लिखी है। न किसी को लिखने की लालसा है। महलों और मन्दिरों की दीवारों पर बने चित्रों में गौरव-गाथाओं के दर्शन होते हैं। कौन अंकित करता है उन रंगीन तस्वीरों में उस गौरव के भारवा की छाया ? किसने देखा उन्हें जिन्होंने इनके सम्मुख अपनी सुप्त आशाओं को जगने से रोका, जिनके आंसुओं से भीगी धूल को रोंदते विजय-पथिक चले।

सुशो और बेला दोनों ऐसी ही नींव की कंकरी थीं जो चुभ ने की गुणानुभूति में सदैव के लिए सो गई। जिन्हें हृदय के भाव-पुष्प श्रद्धा के उद्‌गाव अर्पित न कर सका। किसी ने कहने का कष्ट न किया-हत्या के इस पथ का राही याद करने की चीज है।

सुशो इस समय जिला-जेल की दीवारों में कैद थी। किन्तु उसकी पवित्रता, अन्धी कर्मान्धता और अदम्य पुण्य की स्मृति कुमार के अन्तर को विदारती रहती मां के चरणों में बैठकर, मृदुला के सामने और सोम के आग्रह से उसने विवाह का वचन दे दिया था। पर······। कर्त्तव्य के पावन मार्ग पर, सकुचता के स्वयं सेवा पथ पर और ममत्व की अनुरंजित पगडंडी पर खड़ा वह सोचता रहता-क्या वास्तव में मेरा मार्ग ठीक है ? कहीं भी इसमें अनौचित्य नहीं ? कहीं ऐसा तो नहीं कि पुण्य-सीमाओं में प्रभावत-सा मैं पाप की ओर बढ़ चला होऊँ।

उसे ध्यान आता-अल्हड़ता में दिए गए एक बार के वचन पर बेला सदैव के लिए मरण-प्रिय बन गई। अपने सम्पूर्ण सुखों, अभिलाषाओं और पुण्य सम्कलों को आत्म-हत्या की घिनौनी धार में डूब गई। एक मेरी इच्छा मानकर, मेरे कहने को स्वीकार कर, मेरे कर्त्तव्य और कर्म पथ पर, मृदुला अपनी भावनाओं की धूनी रमाती दूर किसी पीडा सागर के फूलों की ओर चल पड़ी।

मेरे क्षुद्रमौन को इंगन मान, मान को गौरव समझ, सुशो जेल की

सलाखों के पार खड़ी हँस रही हैं। अपने प्यार, कल्पना-कोष को लुटा गुनगुना रही हैं। और मैं ? मैं···इन सबके जीवन नाटक का सूत्रधार बन, स्वयं के बल कर्त्तव्य का भी पालन न कर सका। बचन की डोर को भी पकड़े न रह सका। सब ओर फूलों के पौधे बोता मैं एक बार को भी कांटे की शूल-वेदना को स्वयं से दूर न कर सका।

इस प्रकार वह सोचता रहता। सरोज के साथ उसके विवाह की तैयारियाँ हो रही थीं। मां की अवस्था में भी पहले से कुछ सुधार हो चला था। और अपने लाल के सिर पर मौड़ देखने की उमंग उनके रोम-रोम में व्याप गई थी। वे सदा हँसती रहतीं। पड़ौसिनें और कुमार की ताई- चाचियों के बीच जब वे विश्वास पूर्वक हँसती तो चाची प्राय: पूछ बैठती—अब तुम्हें दुख नहीं रहता क्या जीजी ?

होता क्यों नहीं। पर उससे भी अधिक खुशी जो है। महसूस कैसे हो ? वे उत्तर देतीं।

कुमार इन सबों के बीच में अपने आप से लड़ रहा था। बार-बार वह कुछ कर बैठने की बात सोचता किन्तु कर्म का आग्रह और सोम के तर्क सामने आकर चुप कर जाते। वह मौन ग्राम-विकास की योजनाओं में लगा रहा।

सगे सम्बन्धी, उसके आज्ञा पालन की प्रशंसा कर कहते—बड़ा होनहार लड़का है। हमारा कुमार।

वह सोचता—मेरी क्षुद्रता की ओर ही इनके होनहार के व्यग्यं संकेत है।

शफीक और सुरेश उसके इस भाव को कुछ-कुछ समझते। किन्तु क्योंकि किसी को उसकी वास्तविकता का ज्ञान न था, इसलिए बराबर चिन्तित रहते। एक दिन अवसर और एकान्त देख शफीक ने पूछा—मैं देख रहा हूँ कि तुम बराबर उदास से रहते हो। क्यों ?

यों ही। उसने संक्षिप्त उत्तर दिया।

तो यूँ कहो कि बताना नहीं चाहते। ऐं।

नहीं भाई। वास्तव में कोई खास बात नहीं। सब काम मैं ठीक कर रहा हूं। कोई कमी हुई क्या ? कुमार ने कहा और कुछ रुक कर फिर बोला, अच्छा एक बात बताओ शफीक ?

पूछो।

यह जो मैं शादी कर रहा हूँ, यह क्या ठीक है ?

ठीक। अरे यह तो तुम बड़ा अच्छा कर रहे हो यार, माँ की बात भी रखली और हमें तो बारात मिलेगी ही।

लेकिन क्या इसमें कोई भी गलती नहीं ?

शफीक ने एक बार उसकी आंखों में झाँका और फिर हँसता हुआ बोला—अजीब आदमी हो यार। इसमें तो कोई गलती नहीं। हां, यह तुम्हारा उदास चेहरा जरूर गलत है। सो लुगाई आकर ठीक कर देगी।

पर सुनो तो। मैंने विवाह न करने का वचन दिया हुआ हो, तो भी यह ठीक है ?

हाँ।

क्यों ?

क्योंकि दुनिया में कौल की कुछ कीमत नहीं, यहां फर्ज की बात पहले है, बाकी सब बाद में।

कुमार ने शफीक की बात सुनी और सोचता चुप बैठा रहा।

शफीक ने कहा—बस, करने लगे बहू की याद। अब तो हंस दो जरा।

कुमार ने उसके हास्य के स्वरों में स्नेह की प्रबलता का अनुभव और क्षीण मुस्कान उसके ओठों पर फूट पड़ी। मुस्कान…। जिसकी क्रिया आशा का सूक्ष्म-दर्शन आंसुओं की बहती धार में भीगा था। बहती धार…। जो घन तम-सी अभी उसके हृदयाकाश पर विचरण कर रही थी।

+ + + +

आखेट के पीछे भागते-भागते कभी कभी आखेटक अपना सब कुछ गवां बैठता है। और अन्त में निराश किसी वनखंड में बैठ कह उठता है—क्यों इसका पीछा मैंने किया ? व्यर्थ का यह भ्रम उसकी प्रवंचना। मैं क्या इससे फंसा ? क्यों ?

रावेन की मृत्यु के बाद से कृपालसिंह भी उदास रहने लगे। जमींदारी उन्मूलन कानून के पास होने से अब तक उन्होंने अपनी शक्ति का पूर्ण उपयोग अपनी टूटती दीवार को रोकने में किया था। किन्तु समय के साथ उनकी दीवार की टक्कर थी। भाग्य उनके ऊपर हंस रहा था। जिस पौधे पर छाया रखने के लिये वे दीवार को रोक रहे थे। प्रकृति ने कटुता अपनाई और वह झुलस कर सूख गया। कृपालसिंह ने देखा—उनके सपनों का सुखद सबेरा अनन्त निशा के गर्भ में खो गया था।

गांव के सब क्रियाकलापों से दूर रह वे अपने कमरे में पड़े रावेन के चित्र को देखते रहते।

मृदुला का दुख दो मुंहा था। रावेन चाहे जैसा हो—उसका सगा भाई था। स्नेह और ममत्व का इकलौता प्रतीक ! पिता की असह्य वेदना और अपने विछोह-क्षणों में वह सिसक-सिसक उठती। सुशो के लाल हाथ उसकी कल्पना में आते तो वह कातर वाणी में बड़बड़ा उठती—कहीं भैया को ही तो इसने वह पत्र नहीं लिखे थे। प्यार की वेदी पर ही तो कहीं भय्या··· ?

लेकिन प्रेम में हत्या का क्या स्थान ? प्रचलित अपवाद उसके कान में कहते और वह कृपालसिंह के घुटनों पर सिर रख सिसकती रहती।

औरत एक अजीब उलझन है, भय्या उसी में मिटे हैं···उसी में··· आँसुओं की बूँदों में वह अपनी आवाज सुनती।

इसी प्रकार बीतते दिनों के साथ उसकी जीवन के प्रति विरक्ति कुछ बढ़ती-सी जा रही थी। कुमार की शादी दिन प्रतिदिन निकट आती चली जा रही थी। मृदुला को ज्यों ही उसका स्मरण आता बेला की

उलसित प्रतिमा उसके सामने आ खड़ी होती। पूछती—मेरे और तुम्हारे अलावा कुमार और किसी का नहीं। है न ?

एक दिन इसी प्रकार सोचते-सोचते उसका हृदय भर आया। कृपाल सिंह की गोदी में सिर रख कर वह रोती रही। उन्होंने धीरे: धीरे उसके सिर पर प्यार का हाथ फेरा और बोले—बचपन में तू कुमार को बहुत चाहती थी न मधु ?

मृदुला ने उनकी आँखों में झांका, नैराश्य का दर्शन किया और चुप रही। कृपाल सिंह ने फिर कहा—तेरे और बेला के साथ कितनी ही बार मेरी गोद में वह खेला है।

"मधु चुप ही रही।

कृपाल सिंह कहते गये—मुझे मालूम है मधु, बेला क्यों मर गई। मेरे मना करने पर तू क्यों कुमार से नहीं मिली। यह भी मालूम है कि तेरी आंखों में अंधेरा क्यों रहता है।

मधु की आंखें तेजी से बह चलीं। कृपालसिंह ने कुछ रुक कर कहा—सब इस जमीदारी के कारण हुआ है। इसलिए हुआ कि मेरे दिमाग में अंधेरा था। फूल-सी बच्ची अपनी इज्जत को लिए मौत के गले मिल गई और भुवन अपनी जमीदारी की ऊंचाई कुमार से नापता रहा। तेरी जिन्दगी की खुशी आंसुओं में घुल-घुल कर बह गई और मैं अपने गरूर में झूमता रहा। तुम लोग प्यार और इन्सानियत के नाम पर खून के घूंट भर रहे थे और हम हंसते रहे। अब भी शायद मैं हंसता ही रहता पर सुशो··· ।

प्यार और नफरत ने रावेन का गला घोट दिया।

कृपाल सिंह की आंखें गीली हो गई थीं। मृदुला ने उनके मुंह पर हाथ रखते हुए कहा—क्यों ऐसी बात अब याद करते हो पिता जी। कोई जान बूझ कर तो··· ।

सब जान बूझकर किया है बेटी···। अपनी रंगीनी में चारों तरफ से मैं फूल चुनचुन कर सूंघता रहा। यह सोचकर कि ऐसा करगा मेरा

पैदायशी हक है। लेकिन···वे चुप हो गये।

मधु ने इस समय कुछ भी कहना उचित न समझा। कृपाल सिंह फिर अपने आप ही बोले—अब रामगढ़ में स्कूल बनेगा ही बेटी। उस दिन कुमार ने कहा था—अगर अपनी सारी जमीन गांव वालों के नाम कर दो तो मैं तुम्हारा साथ देने को तैयार हूँ। तुम भी ऐसा कह दो तो मैं यहाँ हाई स्कूल बनवा दूं।

मधु ने फिर उनकी आंखों में झांका तो वे बोले—कुमार की शादी हो रही है, तू उसके पास क्यों नहीं जाती री मिल लिया कर!

पिता जी।

झूठ नहीं बेटी। दर्द सहने से मैं उसे समझने के लायक हो गया हूँ। तुम पर शक करके अब मैं अपने आप पर शक नहीं करूँगा।

बाबा जी···। उसी समय सोम ने वहां प्रवेश किया।

आ बिटिया, आ। तेरे सामने अ मैं।।ॿ बालक बन जाऊँ तो ठीक है। कृपाल सिंह ने उसे अपनी ओर बुलाया।

क्यों बाबा जी।

तेरी बुआ बतायेगी। कृपालसिंह ने कहा और उठ कर थपथपाते बाहर चले गये।

क्या बात है बुआ। सोम ने मृदुला की ठोड़ी में हाथ लगा दिया।

यूं पूछ री। है क्या बात नहीं? मृदुला ने उसे भुजाओं में कस लिया।

नीरवता में मुस्कान की घड़ियाँ पुलक कर रह गईं।

\+ + + +

कृपालसिंह ने कुमार से मिल कर गांव में हाई स्कूल खोलने के विषय में जब विचार-विमर्श किया तो मधु और सोम उनके पास बैठीं थीं। कुमार सब कुछ सुन कर बोला—मैं अब केवल काम की मशीन मात्र रह गया हूं चौधरी साहब, शेष बात तो शफीक और सुरेश ही जानें।

मत कहो चौधरी मुझे तुम। एक बार उसी तरह बचपने की बोली में ताऊ जी कह कर पुकारो तो। चौधरी साहब ने उसके पास खिसक कर कहा।

कुमार चुप रह गया। परिवर्तन और हृदय दोनों के अन्तर्तम से निकली उनकी आवाज सुन रामगढ का सुखद प्रभात उसके विचारों में आ गया। वह उस शान्ति-सुख-गर्वित गांव में जा बसा जहां कल्पना नदी की ठंडी हवाओं के झोंके आकर मानस-तरंगों को शांत रहने का उपदेश दे रहे थे किन्तु यह क्या ? कल्पना के गर्भ में सहसा उफान आया, पानी बौखला उठा और उसमें डूबती उतराती बेला चिल्ला उठी···कु···मा····र।

कृपाल सिंह ने कुमार के कंधे पर हाथ रख कर पूछा—मुझ पर अभी भी यकीन नहीं क्या ? अब भी क्या मेरी नींचता की बात तुम्हारे दिमाग में घूम रहीं है ?

नहीं तो ताऊ जी। कुमार ने एक ठंडीं सांस ली।

मधु ने कुमार की इस ठंडी सांस को सुना और उसके मुख को देखा तो लगा कि फूल की गंध का अन्वेषक सुरभि-मन्दिर में खड़ा कुछ सोच रहा है।

क्या ?

यही तो सोचना था। कुमार जब उठ कर चला गया तो वह सोम से बोली—कल तक ऐसी खबर सुन कर वे फूले न समाते। पर आज···।

आज क्या री। कृपाल सिंह ने पूछा, मेरी समझ में कुछ आ नहीं सका। मालूम पड़ता है उसे कुछ भीतरी दुख है।

हां बाबा जी। सोम न भावावेश में कह दिया।

क्या ? उन्होंने पूछा।

मृदुला ने सोम के हाथ को दबाया और मौन रहने का संकेत किया। वह कुछ न कह सकी।

कुछ देर चुपचाप उनकी ओर देखते हुए कृपाल सिंह ने कहा—मैं

जरा डाक्टर के पास जा रहा हूँ मधु तुम दोनों यहीं बैठो।

मैं भी चली 'बुआ' कुछ काम कर लूंगी। सोम ने कहा और चली गई।

मधु पीड़ा धोई-सी वहीं बैठी रही। एक ही विचार बार-बार उसके हृदय को आक्रान्त करने लगा···तो क्या कुमार शादी कर लेगा? बेला और उसकी मौत को भूल वह विवाह की वेदी पर बैठ सकेगा? कभी किसी तरह भी अपने को बेला से दूर न महसूस करने वाला किसी की कजरारी आंखों में भांक पायेगा? किसी के घुंघराले······

नहीं···नहीं···नहीं। यह मात्र भ्रमाक्त कल्पना है, वह ऐसा कभी नहीं कर सकेगा, हृदय ने तीक्ष्ण प्रतिवाद किया।

फिर और रास्ता कौन सा है। उसके सामने, मां जी की लालसा और उनकी मरणान्तक वेदना को भी नहीं कुरेद सकता वह। वह···। कहीं बेला की तरह ही तो······। मृदुला घायल पंछी-सी छटपटा उठी।

दिन छिप गया था। बैठक के अंधेरे में अपनी भावनाओं से लिपटी वह बहुत देर तक वहीं बैठी रही।

क्या कर रही है अन्दर, दिया क्यों नहीं जलाया? उसकी मां ने कहते हुए भीतर प्रवेश किया।

मधु कुछ सुन न सकी। माँ ने आकर उसके मुंह पर हाथ रख दिया। किन्तु पानी? अपने आंसुओं से तर हाथों में से दबोच वे पूछती रहीं······तू क्यों रोई है। क्या दुख है तुझे?

और मधु। उसे स्वयं कहां पता था कि वह क्यों रोई। क्यों उस की आंखे पसीज गईं, क्यों वह अकेली घंटों बैठी रही?

उसे तो एक अनुभव बस था···वह अपने आप को भूल गई थी।

माँ का हाथ पकड़े वह घर में चली गई। उत्तर कुछ नहीं दिया।

\+ \+ \+

कुमार के लगन का दिन। सारे गाँव में मनादी करा कर उसके

हर्षोत्सव का आयोजन किया गया। सबके साथ कृपाल सिंह भी आकर कुर्सी पर बैठ गये। आसपास तख्त और पाल बिछे थे। गांव के अधिक से अधिक मनुष्यों ने इस अवसर पर प्रसन्नता के बताशे न छोड़ने का निश्चय किया था। बालक एक दूसरे की ओर देखते मस्त बैठे थे। मानो कह रहे हों'''आज तो जी भर कर बताशे खायेंगे। कुमार भाई की शादी रोज-रोज होनी नहीं।

कुमार एक चौकी पर बैठा था। कपड़ों की ओर कोई सावधानी से देखता तो पता लगाता कि वहाँ विवाहोत्सव की अभिलाषा न थी, सलज भावनाओं की कोई प्राकृतिक अभिव्यक्ति न थी। थी वहां तो, केवल एकमात्र दूर किसी देश के गीतों में तमन्यता !

जब पंडित जी उसके माथे पर तिलक लगा मंत्रो का उच्चारण कर रहे थे, वह न था। मन से उसे कुछ पता न था। लगता जैसे बलि का बकरा वेदी पर बैठा हो जिसमें अपनी आत्मा हो, न बलिदान की भावना।

पंडित जी अपने कार्य से निवृत हुए तो कुमार से उठने को कहा गया। अंचल में लगन का सामान लिये वह भीतर चला गया, औरतें गीत गा रही थीं। कुमार की दृष्टि सबसे पहले मधु पर पड़ी। सामान मां को दे वह शीघ्रता से बैठक में चला गया।

ताई बोली'''देख लो व्याह की करामात। अभी से शरमाने लगा।

बाहर बताशे बट रहे थे'''रामेश्वर जी ने कह दिया था। किसी को माँगने पर मना न हो। आज मैं पूरी खुशी मनाऊँगा।

पूरी खुशी। क्या वह थी ?

सब इधर-उधर हो गए तो मधु कुमार के पास जा पहुँची। हाथ में उसके बताशे थे। पीछे से जाकर एक बताशा कुमार के मुंह में रख दिया और उसे समझाने के विचार से बोली'''बधाई है कुमार।

बधाई, यह क्या मधु, तू भी मेरे साथ''''''। कुमार कहता हुआ रुक गया।

तुम्हें जो कहना है कह लो। जी भर कर मुझे सुना लो, लेकिन इसके बाद सब भूल जाओ। बस।

कैसे ? सब खुशियों के बीच में लगता है जैसे कहीं दर्द का बसेरा है। दर्द का, दुख पीड़ा और अनिवार व्यथा का।

उसे अनुभव न करो तो अपने आप मिट जाएगा।

क्या कहती हो मिट्टी भला पानी को भूल सकेगी। सूख सूख कर फटने के बाद भी आकाश की ओर देखती है। पता है ?

है। पर······।

कुछ और नहीं मधु। तुझे विवाह के लिए कहते समय में अपने को रोके रहा था। लेकिन हृदय कहता था······यह मेरे विपरीत है। पाप है।

और अब ?

तेरे मामले में तर्क ने मुझे समझा दिया। सांसारिकता से परिचित करा कर शान्त कर दिया। पर अब सब प्रकार के विवादों से ऊपर मैं अनुभव करता हूं कि मेरा मार्ग ठीक नहीं। मैं अन्धा हूँ। मां ने मुझे गड्ढे में धकेल दिया और मैं गिरता चला जा रहा हूँ।

और मैं कहती हूँ कि गिरते चले जाओ। मत सोचो रुकने के बारे में। हम तीनों गिरने के लिए बने थे। बेला गिर गई। मैं गिर रही हूँ। तुम भी गिरते चले जाओ। अब फिर नीचे ही गले मिलेंगे। प्यार मिलता ही गले नीचे गिरकर है।

लेकिन······?

मैंने कहा न ? मन पर पत्थर रख लो। बेला की चिता की राख हवा में उड़ती अब भी आकाश पर लिख रही है······हम गिरेंगे, फिर मिलेंगे।

लेकिन उसी ने तो लिखा है—हम मिटेंगे, फिर मि···

कुमार ! सब जानती हूँ, दो मिलकर एक से क्षमा मांग लेंगे हम कहेंगे—सब दुनियाँ में तेरी बराबर नहीं बेला, हमें कुछ नीचे से ही उठा

कर गले लगा ले। पर तुम अपने आप को संभाले रखो मैं चली।

तभी कुमार की दृष्टि द्वार पर खड़ी सोम की ओर गई···वह उसे देखते ही भाग गई।

मधु चली गई तो कुमार द्वार पर आया। किवाड़ कुछ गीला था। वह बड़बड़ा उठा···आंसू। पानी। अमृत। क्या है यह जो मेरे भाग्य में हर ओर लिखा है?

+ + +

कुमार के मरहेह की रात्रि में मृदुला ने एक सपना देखा—एक पूर्ण वैभव-सम्पन्न राजकीय परिषद। सब परिषद यथा स्थान तथा महाराज और महारानी सिंहासनासीन हैं। तभी नर्तकी आई और पाँवों के उठते ही संगीत के स्वरों में छमछमाछम का मिश्रण हो सम्मोहन छा गया। नर्तकी के शरीर की धमनियों में कामदेव बन्दी-सा नाच रहा था।

नृत्य समाप्त हुआ तो महाराज ने कहा, अभीप्सित धन मिलेगा सुन्दरी, माँग लो, जो चाहो।

नर्तकी ने अवगुंठन खोला। उसका मुख निहारते ही महाराज सिहर उठे। नर्तकी ने कहा, यदि आज्ञा हो तो एक प्रार्थना करूं कृपालु!

कहो।

आपके राज्य की एक स्त्री ने मेरा पति छीन कर दूसरी स्त्री को दे दिया है। न्याय कीजिए।

कौन रमणी है वह?

आपकी परिषद में उपस्थित है।

कहाँ?

नर्तकी ने प्रकोष्ट में छिपी रमणी की ओर संकेत कर कहा···वह महाराज।

वह सामने लाई गई तो महाराज ने पूछा। अब कहो नर्तकी, क्या अपराध है इसका?

इसने मेरे पति का हरण कर उसे दूसरे स्त्री को सौंपा।

किस प्रकार ?

मैंने इसके सामने उससे विवाह किया था। मैं वाहर चली गई तो इसने उसका दूसरा बिवाह करा दिया।

कौन पुरुष है वह ?

नर्तकी मौन ही रही।

बोलो सुन्दरी। हम शक्ति-दण्ड की सौगन्ध लेते हैं, न्याय होगा। महाराज ने आवेश में कहा।

नर्तकी अब भी मौन रही।

तुम न्याय पर सन्देह कर रही हो सुन्दरी—महाराज तीव्र स्वर में बोले, मत भूलो कि न्याय और दण्ड की धारा संसार के प्रत्येक घर में बहती है, चाहे वह राजभवन ही क्यों न हो ?

नर्तकी ने सिर ऊँचा कर कहा—तो वह पुरुष आप और स्त्री स्वयं महारानी हैं महाराज !

महाराज का गात प्रकम्पित हो उठा। महारानी के नेत्र अंगार बन गये। क्रुद्ध स्वर में वे बोलीं—मृत्युदण्ड दो महाराज इसे। इसने हमारा अपमान किया है।

महाराज सिंहासन से उतरते हुए बोले—नहीं महारानी। हम न्याय करेंगे। आओ सुन्दरी। आ..........।

आगे वे कुछ न कह सके। एक भीषण भूकम्प आया और सारी परिषद् हिल उठी। प्रासाद गिर गया। पत्थरों के घनरव से दिगन्त कांप उठे और...... ।

तभी मृदुला की आंख खुल गई। सोम पास ही खड़ी कह रही थी, उठो बुआ, जल्दी काम खत्म करके भाई साहब के यहां चलेंगे। आज उनका मंढ़ा है न ?

हां सोम। आज कुमार का मंडप है—मृदुला ने आंखे मलीं। किन्तु तभी उसे स्वप्न का स्मरण हो आया और वह कांप उठी।

क्या बात है बुआ ? सोम चिन्तित हो गई ।

मृदुला ने अपने आपको संभाला और सोम को सारा सपना सुना दिया ।

कुछ नहीं । यह केवल विचारों को दोष है । तुम्हें ऐसी आशंका थी उसी से यह सपना देखा ।

नहीं री । मेरी आत्मा कहती है कि कुमार का यह विवाह ठीक नहीं । यह रुकना चाहिए ।

ऐसा न कहो बुआ ! उनका विवाह हो जाने दो अन्यथा··· । वह रुक गई ।

अन्यथा क्या ?

मांजी की जिन्दगी ।

ठीक है । अब मैं कुछ नहीं कहूँगी । पर सोचे रखना, तुम अपने भैय्या से हाथ······

बुआ ! ······ जल्दी से तैयार हो जाओ—सोम जाते हुए बोली । हृदय उसका भारी तो हो आया था । आँखे बरसने लगी थीं । पांव लड़-खड़ा गये थे ।

रामेश्वर जी ने कुमार के मंडप में सारे गांव की दावत दी । द्वार पर आ-आकर पुरुषों और बालकों की टोलियां खड़ी होने लगीं । लाउडस्पीकर पर गाना चल रहा था ।

मगन मैं नाचूँगी ।

कुमार ने मुंह ऊपर उठाया । वाष्प-बिन्दु-से नयनों के कोरों पर पड़े थे । उस की स्मृति को झकझोरती 'अज्ञेय' की पंक्तियां कानों में गूंज-सी गईं ।

क्या है प्रणय ? घनीभूता इच्छाओं की ज्वाला है ।

क्या है विरह ? हृदय की बुझती राख भरा प्याला है ।

उसे लगा जैसे उसके कर्ण रन्ध्रों में रेकार्ड की पंक्ति नहीं बेला की आत्मलीन ध्वनि आ रही हो, वह गा रही हो—

मगन मैं नाचूंगी———

हाथ उठा उसने आंखें पोंछी और गुनगुना उठा———

खेलते ही खेलते फिर कब न जाने खो गए तुम ?

दे भुलावे की व्यथायें हंस गए या रो गए तुम ?

आज तो तुम भी नहीं हो।

पर चला ही जा रहा मैं।

गीत गाता जा रहा मैं।

मैं चला। अनवरत। अप्रतिहस्त। मैं आगे बढ़ूंगा। जिन्दगी से लड़ूंगा। बेला। गीत बन्द कर!—सहसा ही वह बुदबुदा उठा।

फिर उसी की कल्पना। मैं कहती हूँ इस पथ पर उसे भूल जाओ। भूल जाओ न कुमार—मधु ने उसके मुंह पर हाथ रख दिया। अभी-अभी वह बाहर से उसे ढूंढती आई थी। सोम उसके साथ थी।

मैं तो बस गीत गा रहा था मधु। और कुछ नहीं। कुमार ने उसके हाथ को वहीं लगाये रखा।

और यह बेला की बात।

अरे कहाँ? यह तो गीत का भावार्थ था। वह हंस पड़ा।

मधु ने देखा...बरसने से पहले बादल हंसता है। बहने से पहले नदी खिल-खिलाती है, गिरने से पहले फूल मुस्काता है। कुमार भी... वह कह उठी...मैंने एक सप...

सोम ने तुरन्त उसके मुंह पर हाथ रख कर कहा......इनका तो दिमाग खराब हो गया है भाई साहब, कोई बात ही ठीक नहीं कहतीं।

तेरी भाभी को देख खुश हो जायेगी। फिर दिमाग भी शायद ठीक हो जाये। कुमार ने मधु की ओर देख कर कहा—है न?

मधु चुप रह गई। कितना परिवर्तन आ गया था कुमार के वाक्य-भार में? उसके तन ने अपने आपको कुमार की गोद में डाल दिया।

कुमार बोला—आज जितना रोना हो, रो ले मधु ! कल से न मैं रोऊंगा, न तुझे रोने दूंगा। हंसेगें और जियेंगे। आज कोई आँसू शेष मत रख।

फिर सोम की ओर देख कर बोला—तेरा तो नाम ही मैं ज्योत्स्ना रखूँगा। समझी ? ज्योत्स्ना। हंसी की लहर।

सोम सिहर उठी—हँसी की लहर...रुदन के अश्रुकणों का साकार रूप !

फिर वह कुछ न बोली। तीनों देर तक मौन बैठे रहे।

+ + +

गाँव में बारात के चलने से पहले मांड़ शिला होता है। दवी देवताओं के दर्शन घोड़े पर बैठ कर नौशा इस परम्परा के अनुसार करता है। औरतें उसके पीछे गीत गाती चलती हैं और अन्त में मन्दिर के पास से वापिस लौट जाती हैं। लड़का वहीं से बरात के लिए रवाना हो जाता है।

कुमार भी घोड़े पर चढ़ा आगे-आगे चल रहा था। पीछे ताई-चाची और अन्य औरतें गाती जा रही थीं।

कुमार इन सब से दूर बेला की स्मृति में खोया था। ठीक वैसे ही ही जैसे सघन वन में एक बार खो जाने के बाद मनुष्य का निकल आना कठिन होता है। कुमार उसकी चाह की पग डंडियों पर भटक गया। उससे निकल ठीक मार्ग पर आना उसे दुष्कर लग रहा था तो क्या हुआ ? अपने ऊपर बरबस नियन्त्रण रखे वह बढ़ तो रहा था आगे।

शफीक और सुरेश पीछे से बार-बार पैसों की बौछार कर रहे थे। उनके आनन्द की सरिता बह रही थी। मन्द नहीं,मन्थर नहीं—तीव्र अति अति तीव्र ! शिखर के अंचल से छूटती सी दोनों की जेब पैसों से भरी थीं और हृदय उल्लास से। भंगी और बालक चर्चा करने लगे—ऐसी बरात नहीं देखी भैया, इतने पैसे बखेरने को दिल चाहिए।

कोई कह रहा था—आदमी हो तो एसा। दिल अपने आप निछा-वर हो जाता है।

कुमार का घोड़ा चामुण्डा पर पहुँच गया था। उतर कर सिर झुकाने को ताई ने कहा। मां बीमारी के कारण आ न सकी थीं।

जैसे ही कुमार ने घोड़ा रोका। कृपालसिंह ने दोनों हाथों में पै"ों और रुपयों की एक मूठ भरी। लाला जी कह उठे—इसे कहते हैं पौरुष। कल के जमीदार ने गांव में हाई स्कूल खुलवा दिया और अब ? सब राम की दया है भैया।

किन्तु ?

कुमार ने ज्योंही चामुण्डा के सम्मुख सिर झुकाया उसे लगा जैसे बेला उसका पटका पकड़े पीछे को खीच रही हो—यह क्या कर रहे हो कुमार ? मैं तो यहाँ प्रतीक्षा कर रही हूँ और तुम ?

वह अर्द्धचेतन-सा गिरने को ही था कि ताई ने संभाल दिया। मृदुला की दृष्टि इस ओर न थी। सोम लक्ष्य कर बोली—उन्हे संभालो बुआ। तुम्हारा पास रहना जरूरी है।

मृदुला ने उसकी वाणी के कम्पन को अनुभव किया, कुमार की ओर देखा और झट उसके पास जा धीरे से बोली—संभले रहो। मुझे भी तो देखो, तुम्हारे साथ ही हूँ।

कुमार को जसे चेत आ गया—अच्छा—वह फुसफुसाया और फिर घोड़े पर चढ गया। नयन उसके मधु से जा मिले। उसे लगा जैसे वह कह रहे हों—अब विवश हैं। और न झेल सकेंगे।

अब देवी पर चलो। चाची ने आवाज दी। कुमार ने घोड़े की लगाम खींच दी। औरतें अब भी गा रही थीं।

गीत की लय में मृदुला की पृथकता स्पष्ट थी। जहाँ औरों के स्वर में एक मस्ती उन्माद और प्रसन्नता थी, उसका गला कुंठित था कुमार ने यह पहचान लिया। बेला फिर उसे अपने पथ की ओर खींचने लगी। वह मन ही में कह उठा—यह धोखा है। कर्तव्य की ओट में

विश्वासघात है। मेरा......।

देवी की चबूतरी आ गयी थी। कुमार उसे देख फिर घोड़े की लगाम खींच धीरे से उतरा और फिर सिर झुका दिया। मृदुला पहले से ही उसके पास आ गई थी। वह बोला—घबरा मत मधु, अब मैं ठीक हूँ।

मधु चुपचाप उसकी ओर देखती रही।

अब मन्दिर की बारी थी। कुमार ने ज्यों ही उस ओर घोड़े की लगाम मोड़ी उसकी दृष्टि मृदुला पर पड़ी। उसकी आँखों में आँसू डबडबा रहे थे। वह सब समझ गया। घोड़ा चल जो रहा था औरतें गा रही थीं। कुमार को लगा जैसे प्रसन्नता के इन स्वरों में [illegible] की डोली की धूल उडकर मिल रही हो। डोली की। उस डोली की. जिसमें बैठकर वह अपने प्रियतम के यहाँ गई थी।

प्रियतम, उसकी साधना कामना का प्रियतम, [illegible] दूसरी के छोर से बन्धने जा रहा था।

मन्दिर में घुस बालकों ने घण्टा बजा दिया था। कुमार [illegible] टनटन की ध्वनि सुनी तो सामने की ओर देखा निर्भय खड़ा था। [illegible] धर्म का, देवता।

वह घोड़े पर से उतर पड़ा।

अहाते में पैर रखते ही कुमार पीछे हट गया। धुन्धली दृष्टि से उसने देखा। बेला उसे और मधु को राजा विक्रमादित्य की कहानी वहाँ बैठी सुना रही थी।

मैं भीतर नहीं जाऊँगा ताई। उसने निरीह नयनों से उनकी ओर देखकर कहा।

ताई को उसकी आँखों में झाँकने का न अवकाश था न सुध। तुरन्त उन्होंने कहा—नहीं बेटा यह देवता का अपमान है।

"तूने भी मुझे पत्थर ही समझा। मेरे सामने कही बातों को यह सोच कर झुठला दिया कि उसका कोई वादी न था। यह सोच कर

मेरी सत्ता का अपमान किया कि मैं जड़ हूँ, नीरव हूँ—प्रतिमा पर दृष्टि पड़ते ही कुमार ने कानों में कोई पुकार उठा। पांव डगमगा गये। मुड़कर उसने पीछे को देखा मृदुला बाहर ही रह गई थी।

मैं तुम्हें छोड़कर और किसी के साथ भगवान के दर्शन करने न जाऊँगी ! मैं तुम्हें छोड़कर······मैं······।

हम दोनों सदैव एक दूसरे के······

मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगी। मैं तुम्हें छोड़कर मैं तुम्हें···

धारा प्रवाह मन्दिर में स्वर गूँज उठे। वह स्तब्ध कि भूलने लगा।

देर क्यों कर रहे हो कुमार। सिर झुका कर बाहर चलो।

[illegible]

कुमार ने नीचे बैठ जैसे ही मूर्ति की ओर सिर झुकाया तो उसे लगा, वह हंस कर कह रही हो—क्या है भगवान ! पत्थर !

पीछे से फिर वेला कह उठीं।

मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगी मैं—मैं फिर···

मन्दिर गूँज उठा मैं आया बेला। मैं आया वेला···बेला···ले···

"कुमार ! संभलो न ! यह क्या था···। उसके लुढ़कते सिर को मधु ने अपनी गोदी में रख लिया।"

"बस मधु" मुंदे नयन और, प्रस्फुट स्वर थे,। "अब मैं इस कर्त्तव्य के पुण्य पथ पर नहीं चल सकूँगा। मेरे पाँव थक गये। आत्मा थक गई, मन थक गया, मैं थक गया···और···

उठो तो···उठो···मधु के बहते पानी ने उसे भिगोया कण्ठ ने पुकारा और बाहुओं ने कस लिया।

नहीं री, अब नहीं। बेला मेरे साथ है, बस तेरी प्रतीक्षा और है। कब आयेगी ?—कुमार ने वैसे ही आँखें मून्दे हुए कहा। शरीर उसका शिथिल हो गया था।

मधु भुजाओं में उसे कस रही। आँख बरसती रहीं। और ताई ? वह चुप थी बाहर औरतें अब भी गा रही थीं।

सुन मधु, आँखें खोल कर कुमार ने इस बार कहा, गांव को ठीक ठीक रखना। मैं अपने पापमर्ग में चला, मैं···

चिर विश्वास, चिर जागृति और चिर पीड़ा लिये वह उसकी गोद··· गोद में सो गया।

गोद में। प्राण की कर्त्तव्य की वेदना की और आहुति की।

आहुति स्वय की प्यार की और सुखों की। एक जाज्वल्य ज्योति की।

ज्योति···। समष्टि की, व्यष्टि की और पावनता की।

मां ने यह सुना तो वे भी और न सह सकी। सन्ध्या की उड़ती धूल में मां बेटों की चितायें जल उठीं।

सरोज खबर पाकर आ गई। खत अपने हाथ में ले मांग का सिन्दूर पोंछ मन ही मन उसने कहा-तुम्हारी जलाई ज्योति सदा जलती रहेगी। जो पथ दिखा गये हो उसी पर चलूंगी। रामगढ़ मेरा है।

इसमें देखे तुम्हारे निर्माण के सपने तुम्हारी सरोज साकार करेगी। अवश्य करेगी।

\+ \+ \+

उसी समय मन्दिर में दिया जलाये मधु कह रही थी-उन्हें तो बुला लिया भगवान। मुझे कब बुलाओगे अपने पास, कब मिलाओगे उन दोनों से। कब ··?

चलो बुआ यहां बैठ कर रोने से उनकी आत्मा दुखेगी। सोम ने उसके सिर पर हाथ रख दिया। प्रतिमा के चरण आंखों के पानी से भीग गये थे।

दोनों बाहर निकलीं तो भगवान अब भी वैसे ही बैठे थे-मौन सस्मय! मधु ने एक बार पीछे को देखा और मुह दोना हाथों में दबोचे बाहर निकल गई। निश्वासें उसकी मन्दिर की मौन आरती करती रहीं। वह चलती रही बढ़ते पावों में और भगवान की मुस्कान में एक रहस्य था—पुण्य का, प्रणय का और बन्धन का।